* श्री राधा सर्वेश्वराभ्यां नमः *

श्रीमद् सिद्धांत रत्नाञ्जलि

पूर्वार्द्ध ।

श्री बृषभानपुर (बरसाना) निवासी श्रीराधा

चर्णान्वेषी श्री हंसदास जी

कृत ।

भाषा कान्ति प्रकाशिका

अनुवाद सहित ।

सेवक बालगोविन्द की माता के व्यय सहायता से

पं० रामनिवास शर्मा के प्रबन्ध से

श्री 'ब्रजेन्द्र प्रेस' वृन्दावन में

मुद्रित ।

प्रथमबार ५०० | संवत् १९८३ | मूल्य हरिभक्ति

❀ श्रीराधा सर्वेश्वरो जयति ❀

श्रीमन्निम्बार्क महामुनीन्द्राय नमः

सिद्धान्त रत्नाञ्जलिः पूर्वार्द्धः

श्रीमद्धंस सनकादीन् नारदं मुनि पुङ्गवम् ।
निम्बभानुं प्रणम्याथ श्रीनिवासं जगद्गुरुम् ॥ १॥
श्री अष्टादश भठ्ठाँश्च केशबं श्रीभटं तथा ।
श्री हरिव्यासदेबंच बन्दे सर्वान् गुरूनपि ॥ २॥
सुदुःशीलो दुराचारो क्रूरकर्मापि मन्दधीः ।
न जाने तदभिप्रायं येनाहमात्मसात्कृतः ॥३॥
तस्मै गोपाल दासाय गुरवे कृष्णरूपिणे ।
अत्यद्भुत प्रभावाय नमस्कृत्य कृताञ्जलिः ॥४॥
श्रीमद्धरि व्यासदेवस्य सिद्धान्तरत्नाञ्जलेः ।
कान्ति प्रकाशिकां भाषां कुर्वे तत्कृपयाप्लुतः ॥५॥
मया निमित्त मात्रेण हंस दासेन भीरुणा ।
नोदिता तेन देवेन प्रादुर्भूता शुभार्थदा ॥ ६॥

चौपाई

श्रीराधा पद भूंठेहि ध्याऊं । भूंठेहि कृष्ण चरण सिर नाऊं ॥
भूंठेहि गुरुकी करों वन्दना । भूंठेहि सन्त चरण नन्दना ॥

झूठेहि भक्तिकी बात बनाऊं। झूठेहि अपन पो भक्त कहाऊं॥
सब कामन में झूठो पूरो। दुष्ट पने में सांचो सूरो॥
जे जे भक्त भये सुख दाई। अपनि कुटिलता आवहि गाई॥
सकल दोष आप में राखी। पतित पने की विनय बहु भाखी॥
तिन सब झूठी बात बनाई। जग सिखयो दीनता दिखाई॥
हरि परिकर हरि पास विराजे। जन उद्धार को जग में राजे॥

दोहा

पतित पनो उनमें कहां, बनि आवै तिहुं काल।
जिनकौ यश हरियश सहित, गाय तरै जगजाल॥

चौपाई

सांचो पतित जो चाहत देखो। मो पापी की सूरति पेखो॥
काहू के विद्या को बानो। काहू के कविता को बानो॥
कोई पंडित चतुर कहावै। कोई धर्मी धर्म सजावै॥
कोई हरिभक्ति रसिक रससानों। दुष्ट कर्ममें त्योंमोहि जानों॥
संतों अचरज कथा सुनाऊं। दुष्टपने की सीम दिखाऊं॥
अवध देशमें लछमन(लखनऊ)पुरी। मेरी देह तहां जनम धरी॥
मेरे पिता पितामह जेई। सन्त शिष्य साधुन के सेई॥
तिनघर जनम्यो अधम शरीरा। कुलकंटक जिमि वृक्ष करीरा॥

दोहा

उदर भरण के हेतु पितु, आये मथुरा देश।
राज काज में लग गये, पाय राजसी वेश॥

चोपाई

बालक ही मैं उनसंग आयो। मथुरा बसिकुछ काल गंवायो॥
दर्शन द्वारिका धोश विश्रान्त। पढ़ों करों विद्या दिन रात॥

पुनि श्रीवृन्दावन मंह आयो। श्रीलालाबाबू के मन्दिर धायो ॥
कृष्णचन्द्रकी मिली सिचकाई। चंकविहारी ढिग बस्यो जाई ॥
यह सब योग हरीने जोड्यो। पर दुष्टपनों मैंने नहि छोड्यो ॥
निन्दित कौन कर्म जग मांही। जो भर पेट किये मैं नाही ॥
हरि के धाम पाप जो करहीं। बज्र लेप व्है कबहु न सरहीं ॥
गुरु पाये जग में विख्यात। रहस्य भक्ति के पूरण गात ॥

दोहा

ऐसे हू गुरु पाय के, भयो हिये नहि चेत।
सुधा सलिलते सींचेहू, फलै न फूलै बेत ॥

चौपाई

श्रीगुरु के कछु गुण प्रघटाऊ। दिशा मात्र रसना से गाऊं ॥
उत्तम गौड़ ब्रह्मकुल पालक। हरिरस विमुख विमुखता घालक।
रास विलास रसिक रस साने। राधा कृष्ण चरण सरसाने ॥
कथा कीरतन के पन धारी। आचारज उत्सव शुभकारी ॥
श्रीनिम्बार्क उत्सव प्रगटायो। सम्प्रदाय रस सबहि चटायो ॥
हंस सनक नारद निम्बारक। तिनकी प्रतिमा मन्दिर धारक ॥
चरणामृत सन्तन को धारैं। श्री भागवत के सप्ताह सारैं ॥
परम उदार बहुगुण नयशीले। संशय छेदक रसिक रसीले ॥

दोहा

बहुतकाल बपु धारिकै, शुद्ध किये बहु जीव।
बावन अधिक उनीस शत, अन्तर्हित की सीव ॥

चौपाई

मेही जा संयोग तैं होय। मोको प्राप्त भयो पुनि सोय ॥
हम दोउ एक गुरु के चेला। विषम बुद्धिको मिट्यो झमेला ॥

संसारी नातो तब छूट्यो। गुरु भगती को अंकुर फूट्यो॥
गुरुदत्त पायो गोपाली नाम। भक्ति क्षेत्र में मिल्यो विश्राम॥
पिता विरक्त रहे संकेत। प्रीया प्रीतम को रस खेत॥
वैष्णव सेवा हिये धरी। सरल सुभाव न छल छिद्री॥
सन्त चरणमें हियोहुलसायो। लाभ सु मानुष तनको पायो॥
कछु काल परगट वपु धारो। दिव्य रूप पुनि अन्तर सारो॥

दोहा

धाम प्रभाव अरुगुरु कृपा, अन्न भक्त पुनि खाय।
गृह बन्धन से छूट के, गिरि बन रहे पराय॥

चौपाई

चालिस अधिक हु शतउन्नीस। सम्वत विक्रम विशवावीस॥
तेईस वर्ष अवस्था जानो। सन्तवेष को मिल्यो तबबानो॥
मैं कुछ काल गोवर्द्धन रहेऊ। धर्मध्वजी भेष उर दहेऊ॥
पुनि श्री बरसाने मैं आयो। श्री राधा के पग लिपटायो॥
गढ़ विलास प्यारी को धाम। सुखद तहाँ पायो विश्राम॥
पिय प्यारी जंहनित्य विलास। निशिदिन करैं सहित हुल्लास॥
यद्यपि सुस्थल रास बिहारी। पर दुष्ट बसेतैं महिमा गारी॥
अति दुर्गन्ध जहां रहे छाई। सज्जन तहतैं जाँहि पराई॥

दोहा

मो अपराधी के बसे, तज्यो आपनो धाम।
बड़ प्रताप मो पापको, हारे श्यामा श्याम॥

चौपाई

होयसो होय कहाँ मैंजाऊं। तजिपद कमल कहां मोंहि ठाऊं॥
दुष्ट बसायेको फल नीको। निज यश दियो कलंक को टीको॥

औरहु एक दुष्ट की साजा । जग उपहास कहत बड़ लाजा ॥
विपकम जिमि चहैअमृत सरैया । बवना छु वै अकाश तरैया ॥
इमि मूरख ने सोई हठठानी । अधम जीव की अकथ कहानी ॥
श्री हरि व्यास देव आचारज । जिनपद वन्दे मुनि देवा रज ॥
दशऽश्लोकी पर सिद्धान्त । रत्नाञ्जलि वेद राद्धान्त ॥
ताकी भाषा करन विचारी । लोक वेद में खावे गारी ॥

दोहा

विद्या बल नहिं बुद्धि बल, चतुर चातुरी नाहिं ।
परम दुष्टता देखिये, मन हठ त्यागत नाहिं ॥

चौपाई

है बल एक वेद जो बरणा । अशरण शरण अचारज चरणा ॥
गति दाता अगतिन के वेई । पतितन की नौका तिन खेई ॥
करि पारषद् स्वधाम पठायो । स्वपच चढ़ता बलमें अपनायो ॥
सो योग्यता कहां मैं पाऊ । दरश प्रत्यक्ष कहाँ से लाऊ ॥
एक बधिकघर हिंसक लोहा । एक लोहा पूजा में सोहा ॥
दुहुन परसि पारस करैसोना । गुरु प्रभाव सोई सुठि लौना ॥
सोई धरि हिय साहस मैं ठानो । लेहि सुधार गुरुमन मानो ॥
बालक तनिक जो पाँव उठावै । माता देहरी हुलसि लंघावै ॥

दोहा

भली बुरी जो बनिपरी, दास आपनो जान ।
लेहि सुधार संभाल पुनि, अधम उधारन बान ॥

चौपाई

ऐसे अनेक खुट चलन मेरे । कागज कारे होय घनेरे ॥
भरीसरोवरि सुरभिजल मिष्ट । शूकर परै करै अति भ्रष्ट ॥
कहा जानि मोहि धाम बसायो । हेराधे तुम कुयश कमायो ॥
तुम्हरे मन की जानि न जाई । एक युक्ति मेरे मन आई ॥

कोई मधुर मिठाई खाय । कोई करेला खाय अघाय ॥
प्रथम लौन छाछते धोवे । वश भर कडुवाई सो खोवे ॥
तापाछे जो रहै कडुआई । सो स्वादिन को स्वाद बताई ॥
तैसेहि बड़े बड़े शुभ लक्षण । महा भागवत चतुर विचक्षण ॥

दोहा

हरि अपनाये धाम निज, दिये परम सुख पाय ।
दुष्ट करेला मो सद्रश, प्यारी लिय अपनाय ॥

चौपाई

बरसानो श्री बन घर पायो । श्री कुंड गिर राज सुहायो ॥
आदि अनादि सम्प्रदा पाई । हंस सनक नारद सुखदाई ॥
श्री निम्बार्क मिली शरणाई । ध्रुव पदवी हरि व्यासी पाई ॥
श्रीरंग देवी यूथ ईश्वरी । तिन परिकरकी दासी खरी ॥
बीबी महारानी श्री राधा । सब सुखखान गुणन अगाधा ॥
सांवरेमोहन मिले महाराजा । मिल्योठाठ सुन्दर सुखसाजा ॥
गुरुकी कृपा बानिक बनिआयो । वृथा मरों मैं कर पछतायो ॥
सुगति कुगतिकेहि खेतकी मूरी । क्यों चिन्ताकरि मरोंविसूरी ॥

दोहा

रटि रसनाते नाम पुनि, रूप हिये द्रग लाय ।
यह सुख हियेतैं नहि टरै, चिन्ता करै बलाय ॥

सोरठा

हंस दास को आस राधा दासिन दासता ॥
श्रीराधे सुखरास, पट्टो मोहि लिख दीजिये ॥

चौपाई

श्रीहरि व्यास चरण शिरनाऊं । द्रढ़ कर तिनकी कृपा मनाऊं ॥
प्रभुता मैं का करौं बखान । देवी शिष्य यहा परमान ॥

अधम उधारन की यह बान । श्रवच्च कियो पार्षद समान ॥
महिमा तिनकी कौन बखानै । को सागर गागर में आनै ॥
बारह शिष्य धुरन्धर देव । तिन द्वारा खुलो भक्ति को भेव ॥
संस्कृत भाषा ग्रंथ अनेक । रचे रहस्य भक्ति उद्रेक ॥
दश श्लोकी पर यह भाष्य । रत्नाञ्जलि वेद प्रकाश्य ॥
भाषा ताकी मम हिय प्रेरी । कान्ति प्रकाशिका भई घनेरी ॥

दोहा

जीव स्वरूप माया प्रवल, राधाकृष्ण स्वरूप ।
वर्णो पूर्व अर्द्ध में, पांच श्लोक अनूप ॥
कृपाको फल और भक्तिरस तथा विरोधीनाम ।
कहें उत्तरार्द्ध में पायो ग्रंथ विश्राम ॥

----

* सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्धः *

श्री राधाकृष्णाभ्यांनमः

श्रीभट्टपादोत्थित धूलिशेषं नत्वाऽखिलेशं निखिलैरुपास्यम् ।
निम्बार्कशास्त्र श्रवणालसानां बोधाय यत्नं विदधे सुरम्यम् ॥ १ ॥

इहखलु सकल लोक मङ्गापनुत्तये अवनिसुरवरैः प्रार्थितस्य ब्रह्मणो हृदयाद्वतीर्णः सुदर्शनो निम्बादित्यापरनामा भगवा-नऽनिद्रयालुः परमकारुणिक स्तरोर्यतेभ्यो नैमिश प्रदेशंनिर्दिश्य द्रागवलं च हत्वा निखिलसात्वतजनानुद्दिधीर्षु र्वेदभाष्याद्यनेकग्रन्थान् कृत्वा वेदान्तसारभूतां दशश्लोकीमपि चकार तत्रवेदान्तो नामश्रुतिशिरोभाग ब्रह्मसूत्रगीतादीनिच सर्वेष्वपि तंत्रेष्वधिकारी विषय संबन्ध प्रयोजनानी त्यनुबन्धचतुष्टयमपेक्षितम् । तत्रवेदांत-शास्त्रीयानुबंधचतुष्टयं यथा-नित्योहि स्वाध्यायो—

श्रीमद्धरि व्यासदेव वर्णन करैं हैं–दोहा,
उपास्य इष्ट सब जननकी श्रीभट्ट चरणकी धूर
करदन्डवत समग्रको जो सर्बस जीवन्मूर॥ १॥
श्रीनिम्बार्क शास्त्रको श्रवण करत अलसांय।
तिनके बोधन अर्थ कियो सुन्दर यत्न बनाय॥२॥
यासंसार में निश्चय सब लोकोंके पापदूर करवे
को पृथ्वीके देवता जो ब्राह्मण तिनकी प्रार्थना
से ब्रह्माके हृदयसे अवतार लियो ऐसे सुदर्शन
भगवान निम्बादित्य जिनको दूसरो नाम उन
ब्राह्मणोंके तप करवेको अतिदयालु परम करुणा
वान नेमिशप्रदेश दिखायके और बलवान दानव
मारके सब भक्तजनोंके उद्धारकी इच्छाजो भयी
तो बेदान्त भाष्यादि अनेक ग्रन्थ रचना करके
वेदान्त की सारभूत दशश्लोकी भी करते भये
तामें वेदांत श्रुति शिरोभाग ब्रह्मसूत्र गीतादि हैं
सवतंत्रोके अधिकारी विषयसंबन्ध प्रयोजन वे अनुबं
ध चतुष्टय चहीते हैं तामे वेदांतशास्त्रके अनुबंध।

सिद्धांतरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

अध्येतव्य इत्यध्ययनविधिः । ब्राह्मणे न निष्कारणो धर्मः षडंगोवेदोऽध्येयो ज्ञेयश्चेति वचनात् । काम्यत्वे हिवेदस्यान्योन्या श्रयता स्यात् । अतः सर्वोपि नित्यविधिवलादेवषडंग सहितं वेदम धीत्यार्थं जानाति तत्र कश्चित्पुण्य पुंजवशाच्चिरतिशय परम पुरुषार्थ प्रेप्सायां तदुपायं वेदेन्विष्य इदमवगच्छति शांतोदांतोस्तितिक्षुरु- परतः आत्मन्येवात्मानं पश्येत् । तद्यथेह कर्मचितोलोकः क्षीयते एवमेवामुत्र पुण्य चितोलोकः क्षीयते । परीक्ष्यकर्मचितांल्लोका न्ब्राह्मणो निर्वेदमायात् नास्त्यकृतः कृतेन सगुरुमेवाभिगच्छेत्स मित्पाणिः श्रोत्रियंब्रह्मनिष्ठम् । यस्यदेवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ । तस्यैते कथिताह्यर्थाः प्रकाशंते महात्मन इति ॥

भषाकांतिप्रकाशिका

चार दिखावे हैं नित्यस्वाध्याय अध्ययन करनो अर्थात वेदाख्य अक्षर समूह को ग्रहण करनो याप्रकार अध्ययनकी विधि है ब्राह्मण निष्कारण धर्म जो षडंग वेद ताको अध्ययन करै और जानै ये वचन हैं सकामता होवे से वेद की परस्पर आश्रयता होय है याते सव नित्य विधि के वलते षडंग सहित वेदको पढ़ के अर्थको जानै तामें जो कोई वड़ो पुण्य पुंजवारो होय और अतिशय परम पुरुषार्थ की इच्छा राखै तौ ताको उपाय वेद में ढूंडके या विषय कौ प्राप्त होय है । शान्तदान्तनाम इन्द्रिजितति तिक्षूसहनशील उपरत नाम वैराग्यवान आत्मा

जो मनता के विषय आत्मा को देखै। जैसे या लोकमें कर्मके संचित फल नाश होंय हैं तैसे परलोकमें पुण्य के इकट्टे किये फलनाश होंय हैं ऐसे ब्राह्मण कर्मके संचे फलोंकी परीक्षा करके नाश वान जान के उपराम को प्राप्त होय कृत जो कर्म तासे अकृत जो मोक्षताकी प्राप्ति नहीं है ऐसे जानके वेदके पढ़े भये ब्रह्मनिष्टगुरू के पास जाय दातुनहाथ में ले जाय समित्पाणि।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

दु:खोदर्केषु कामेषु जातनिर्वेद आत्मवान्। अजिज्ञासितम द्धर्मो गुरू मुनिमुपव्रजेत्। मदभिज्ञं गुरुं शांतमुपासीतमदात्मकम्। अमान्यमत्सरोदक्षो निर्ममो द्दृढ़सौहृदः। असत्वरोर्थजिज्ञासुरन सूयुरमोघ वागित्यादि श्रुतिस्मृत्युक्त साधनचतुष्टयसंपन्नोधिकारी। साधन चतुष्टयं च शमदमादि संपत् नित्यानित्य वस्तु विवेकः। ईहा-मुत्रार्थ फल भोग विरागः हरौरतिश्चेति शमदमोपरतिस्तितिक्षा-श्रद्धा चशमादयः। शमस्तावद्वुद्धेर्भगवन्निष्टता शमोमन्निष्टता वुद्धे रिति भगवदुक्तेः दमोवाह्येन्द्रिय संयमः॥

भाषा कान्ति-प्रकाशिका।

याशब्द से निष्किंचन अधिकारी सूचन कियो। जाकी देवता में परम भक्ति है तैसी ताकी गुरू में चाहिये सोई महात्मा को वेदान्त

में कहे भये पदार्थ प्रकाश होंय हैं। आत्मा के जानन बारे को दुःख ही जिन में फल ऐसे बिषयों में जब वैराग्य उत्पन्न होय मेरे धर्म नहीं जानतो होय तो गुरु मुनिके समीपजाय मेरेको जो अच्छी रीतिसे जानैं मेरेमें जिनको मन होय ऐसे शान्त गुरुकी उपासना करै आप मान न चाहै परायोउत्कर्ष देखके जरै नहीं चतुर ममता संसारी छोड़के गुरू में दृढ़ प्रीति राखे जल्दी न करै कोई की असूया न करै अर्थात् गुणमें दोष न देखै बृथा न बोलै श्रुतिस्मृति में कहे जो साधन तिनसे परिपूर्ण होय सो या वेदान्त को अधिकारी है तामें चार साधन कहैं हैं शम दमादिकी संपत होय नित्य अनित्य वस्तु काबिचारराखै या मनुष्य लोक और स्वर्गलोक के फल में वैराग्य राखै हरि में रति होय। तामेशमद मतितिक्षा श्रद्धा ये शमादिक हैं भगवान्में बुद्धि की नेष्ठा होजाय ताको शम कहै शम मेरी निष्ठा वारी बुद्धि को कहैं ये भगवद्वाक्य हैं वाहिर के विषयों से इन्द्री रोकनो ताको दम कहैं।

तितिक्षुः क्षमावान् उपरतिः विषयेभ्यउपरामस्तद्वानुपरतः स्वरूपतो गुणतश्च सपरिकरो हरिरेवनित्योन्यदनित्यमिति विवेकवान् यथेहकर्मचितो लोकोवनितादिक्षीयते प्रणश्यति तथामुत्र स्वर्ग उरवश्यमृतादिरपि नश्यत्येवेत्येवं विचार्य ब्राह्मणो जिज्ञासितमद्धर्मः श्रद्धावान् तथा सर्वकामेषु जातनिर्वेदः सन्नर्थजिज्ञासु गुरु भक्तिमान् ब्रह्माभिज्ञं गुरुमुपाव्रजेदिति श्रुतिस्मृत्योर्निर्गलितोर्थः। स्वभावतो पास्तसमस्त दोषानंतकल्याण गुणगणाकरः श्रीकृष्णः शास्त्रविषयः सर्ववेदा यत्पदमामनंतीति श्रुतेः।

भाषा कांति-प्रकाशिका।

तितिक्षु सहनशीलको कहैं उपरति विषयों से जो वैरागी सो उपरत है हरिको स्वरूप व गुण और उनको परिकरपार्षदादि येई निश्चय करके नित्य हैं और सब अनित्य ऐसो विचार वारो जैसे या लोक में कर्म फल धन धान्य धाम सुन्दर स्त्री पुत्रादि नाश होंय हैं तैसेही स्वर्ग के उरवशी अमृत विमानादिक नष्ट होय हैं ऐसे जान के ब्राह्मण मेरे धर्म को जिज्ञासू श्रद्धालू सब कामना में जाको वैराग्य तत्वको पूछवे वारो गुरु की भक्ति जाके ब्रह्मके जानवे वारे गुरुके पास जाय यह श्रुति स्मृतिको अर्थ निर्धार भयो जिनके स्वाभावतेही समस्त दोष

दूर अनन्तकल्याण गुणोंकी खान वे श्रीकृष्ण या शास्त्र के विषय हैं। सब वेद जाके पदको मनन करैं यह श्रुति है।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

वेदैश्च सर्वैरहमेववेद्य इतिस्मृतेश्च। कृष्ण प्राप्तिरेवप्रयोजनं वाच्यवाचक भाव सम्बन्धः। कृष्ण प्राप्तौ चत्वारि प्रतिबन्धकानि,तानिच विषय भोगवासना प्रमाणगता संभावना प्रमेयगता संभावना विपरीत भावनाख्यानि तत्र श्रवणांगभूताः शमादयोविषया शक्तेर्निवर्त्तकाः श्रवणं प्रमाणगतासंभावनायाः प्रमेयगतासंभावनाया मननं विपरीत भावनायाश्च निदिध्यासनं निवर्त्तकमिति अतः श्रवणादि संपादनेनासंभावनादि प्रतिबंध परिक्षयाय चतुर्लक्षणी ब्रह्ममीमांसा समारंभि भगवता कृष्ण द्वैपायनेन तस्माच्छमादि सहितेनमुमुक्षुणागुरुमुपसृत्यभगवत्प्राप्ति प्रतिबंधा संभावनादि निवृत्तयेच।

भाषाकांतिप्रकाशिका

सब वेदों करके मैं ही ज्ञानवे योग्य हूं यह स्मृति गीता है। श्रीकृष्ण की प्राप्ति ही यामें प्रयोजन है कहवे योग्य विषय और कहिवे वारो यह वाच्य वाचक भाव सम्बन्ध है। तामें श्रीकृष्ण के मिलवेमें चार वाधाकरें हैं। एक तो विषय भोग की वासना, दूसरे प्रमाणिक शास्त्र दिक में पक्की भावना नहीं, तीसरे प्रमेय जो श्रीकृष्ण तिनमें संभावना नहीं, चौथे सब में उल्टी भावना, तामें वेदांत सुनवे के अंग भूत

जो शमादिक वे विषय की आशक्ति दूर करै हैं और प्रमाण में जो प्राप्ति भई असंभावना सो श्रवण कर वैसे जाय है। प्रमेय में असं भावना दूर करने वालो मनन है ध्यान करवे से विपरीति भावना दूर होय है। याते श्रवणा दिक संपादन करके असंभावनादि जो भगवत प्राप्तिमें प्रतिवन्धक हैं तिनके नाश के अर्थ भगवान श्रीवेदव्यास जी चतुर्लक्षणी ब्रह्ममी- मांसा आरम्भ करते भये तासे शमदमादि युक्त पुरुष भगवत भाव प्राप्ति रूपी जो--

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

तुर्लक्षणी मीमांसागीतोपनिषद्भिरात्मा नात्मा परमात्म विचारः कर्त्तव्यः एवंनिरूपणीय पदार्थत्रये जीवात्मनिरूपणे शास्त्र संस्कार वर्जिता विचार विरहितं प्रत्यक्षमेव प्रमाणमाश्रित्य चेत- यमानी देह इह आत्मेतिवदंति तथैवभूत चतुष्टयमात्र तत्त्ववादिनो लोकायतिकाश्च। अन्ये तुसत्य पिशरीरे चक्षुरादि भिर्विना रूपादि ज्ञानाभावादिन्द्रियाण्येवचेतनानीत्याहुः नचैकस्मिन शरीरे बहूनामि न्द्रियाणां चेतनत्वेय एवाहं रूपमद्राक्षंस एवेदानीं शृणोमीति प्रत्य- भिज्ञा नस्यात् रूपरसादिषु भोक्तृत्वं युगपदेवस्यान्नक्रमेणेति वाच्यं एकशरीराश्रयत्वस्यैव प्रत्यभिज्ञा ज्ञानक्रमभोगयो—

भाषा कांति प्रकाशिका

मोक्ष ताको चाहन वारो गुरू के निकट जायके भगवत प्राप्तिकी प्रति वंधक असंभाव—

नादि दूर करवे के अर्थ चतुर्लक्षणी मीमांसा व श्री गीता उपनिषद से आत्मा अनात्मा परमात्मा इन तीनोंको विचार करें येई तीन पदार्थ निरुपण करवे योग्य हैं तामें जीवात्मा निरूपण करवे में पहले जिन को शास्त्र को संस्कार नहीं है वे विचारसे रहित जो प्रत्यक्ष प्रमाण ताको आश्रय लेके चेष्टा करवे वाली देह को या संसार में आत्मा मानै है तैसे ही लौकिक आचरण करवे वाले चार भूत अग्नि पानी मिट्टी वायू के तत्त्ववादी इन्हीं को आत्मा कहैं कितनों को यह मत है कि शरीर होते भी नेत्रादि इन्द्री बिना रूपादिकों को ज्ञान नही होय तासे इन्द्री ही चेतन हैं यह शंको मत करियो कि एक शरीरमें बहुत इन्द्री और सब चैतन्य हैं तो जो मैं रूप देखतो भयो सोई मैं निश्चय करके सुनौं हौं या प्रकार को ज्ञान नहोय और रूप रसादि में भोक्तापनो।

चस्वप्ने चक्षुराद्यभावेपि केवलेमनसि विज्ञानाश्रयत्वमहं प्रत्ययाव लंबत्वं चोपलभ्यते अतश्चक्षुरादि कर्णकं शरीराधारंमनएवात्मेति मन्यंते विज्ञान वादिनस्तु क्षणिक विज्ञान व्यतिरिक्त वस्तु नोभावात् क्षणिक विज्ञान स्यैवात्मत्वमाहुः प्रत्यभिज्ञातु ज्वालाग्रा मिवसंततवि ज्ञानोदयसादृश्या द्युपपद्यते माध्यमकास्तु सुषुप्तेर्विज्ञानस्याप्यदर्शं नात् शून्य मेवात्मतत्त्व मितिवदन्ति न च सुषुप्ते विज्ञान प्रवाह विषयावभासप्रसंगान्निरालंबनज्ञाना योगात् विशेषा भावात्। काणा दास्तु देहेन्द्रियादि व्यतिरिक्तो नव विशेषगुणा।

भाषाकांतिप्रकाशिका।

क्रमबिना एक कालमें होनो चाहिये ऐसे समुझौ कि एक शरीरके आश्रय होवे से ही प्रति अभिज्ञा है क्रम और भोग को निमित्त नहीं जैसे बरबिबाहमें कोई गुण प्रधान नहीं अन्य कोई ऐसे कहैं कि स्वप्न में सब इन्द्रियों को लय होजाय है तबभी केबल मनके बिषय बिज्ञान के आश्रयबारी अहं प्रत्यय को अब लंबन पायोजाय है तासे नेत्रादि जाके कारण शरीर जाको आधार वेमन को ही आत्मा मानैं हैं पर मनका भी सुषुप्तिमें लय है तासे मन भी आत्मा नहीं विज्ञान वादी ऐसे कहैं हैं कि क्षणिक विज्ञान के बिना कोई वस्तु नहीं क्षणिक विज्ञान ही आत्मा है जैसे अग्नि की

की ज्वाला में विज्ञान को उदय ताकी सदृश माध्यमि का ऐसे कहै कि सुषुप्तिमें विज्ञान को भी दर्शन नहीं हैं तासे शून्य ही आत्माको तत्व है सुषुप्ति वारे में विज्ञान को प्रवाहन ही चलै ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

अयो विभुरात्मेत्याहुः मायावादिनस्तु नित्यशुद्धबुद्धमुक्तसत्यस्वभावप्रत्यक्चैतन्यमेवात्मेतिवदंति अन्ये तुशून्यादिव्यतिरिक्तं स्थायिनंसंसारिणं भोक्तारमात्मानमाहुः औपनिषदास्तु ज्ञानानंद स्वरूपोणुरात्मा स च भगवदनुग्रहादानंत्याय कल्पते इति वदन्ति. तत्रौपनिषदपक्षे जीवात्मस्वरूपं निरूपयति भगवानाचार्य्य ज्ञानस्व रूपमित्यादिना

"ज्ञानस्वरूपं च हरेरधीनं शरीरसंयोगवियोगयोग्यम् ।
अणुं हि जीवं प्रतिदेहभिन्नं ज्ञातृत्ववंतं यदनंतमाहु" ॥ १ ॥
ज्ञानस्वरूपमित्यनेनजीवस्य ।

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

विषय अवभासके प्रसंगते निरालंबन ज्ञान अयोग्य है काहे से कि विशेष का अभाव है काणादमत बारे देह इन्द्रयोंसे न्यारो नव गुण बिशेष के आश्रयबिभू को आत्मा कहें हैं मायाबादी नित्य शुद्ध बुद्धमुक्त सत्य स्वभाव प्रत्यक चैतन्य को आत्माकहै हैं कोई और शून्यादि से भी न्यारो संसारी भोग भोग

वेबारे स्थायीको आत्माकहै है उपनिषद ज्ञान बारे ज्ञानान्द स्वरूप अणु आत्मा है और सो भगवानकी कृपासे अनंत होवेके योग्य है ऐसे कहै हैं तामें श्रीआचार्य निम्बार्क भगवान उपनिषद पक्ष लेके जीवात्माको स्वरूप निरूपण करै हैं यह जीव ज्ञानस्वरूप है और हरिके आधीन है और शरीर को जो संयोग ताके बियोगकरवेको सामर्थ्यमान है अणुपरिमाण है देह देह प्रति न्यारो न्यारो है और ज्ञानवान है तासे याको वेद अन्त रहित बतावे है ॥१॥ ज्ञानस्वरूप कहि के जीव को जडत्व दूर कियो।

सिद्धान्त रत्नाञ्जालि पूर्वार्द्ध

जडत्वं व्यावृत्तं चकारात्तस्य ज्ञानाश्रयत्वमपि वोध्यं यथा प्रकाशरूपस्यापि चन्द्रादेः प्रकाशाश्रयत्वं तथा ज्ञानस्वरूपस्यापि ज्ञानाश्रयत्वं युक्तं एवमात्मा चिन्द्रूप एव चैतन्यगुण इति चिद्रूपनाहि स्वयं प्रकाशता तथाहि श्रुतयः सयथा सैंधवघनो नंतरो वाह्यः कृत्स्नो रसघनएवं य आत्मा नन्तरो वाह्यः कृत्स्नोप्रज्ञानघनरावायं पुरुषः स्वयं ज्योतिर्भवति न वि ज्ञातुर्विज्ञातेविपरिलोपो विद्यते अथ यो वेदेदं जिघ्राणीति स आत्माकतम आत्मायो यंविज्ञानमयः प्राणेषु हृद्यं तज्योतिः पुरुष एव हि दृष्टा श्रोतार सयिता घ्राता मंतावोद्धा विज्ञानात्मा पुरुषः विज्ञातारमरेकेनविजानीयाज्ञा।

भाषा कांति-प्रकाशिका।

चकार से ज्ञानाश्रय पनो भी जानवे

योग्य है जैसे प्रकाश रूप भी चन्द्रादिकोंको प्रकाशाश्रयत्व है तैसे ज्ञान स्वरूप ग्रत्मा को भी ज्ञनाश्रयत्व है या प्रकार ग्रात्मा चिद्रूप ग्रौर चैतन्य गुण वारो है चिद्रूपता ही स्वयं प्रकाशता है तैसे ही श्रुति में है जैसे लवण का पिन्ड वाहर भीतर रस रूप है तैसे ही यह ग्रात्मा भी वाहर भीतर समग्र विज्ञान घन है यह पुरुष (ग्रात्मा) स्वयं ज्योति है विज्ञाता की विज्ञान शक्तिका कबहूं लोप नहीं है का हे सेकि विज्ञान शक्ति ग्रविनाशी है श्रुति में प्रश्न है कि जो गंध को जानन वारो सो ग्रा त्मा कौन है या प्रश्न को उत्तर है कि यह ग्रात्मा विज्ञान मय है प्राणों के विषय हृदय मेंग्रन्तर्ज्योति है पुरुष ही निश्चय देखवे वारो सुनवेवारो स्वादलेवेवारो सूंघवेवारो वोधवारो विज्ञानात्मा पुरुष ही है।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

नात्ये वायंपुरुषः नपश्यो मृत्युंप श्यति नरोगं नोतदुखतां सउत्तमः पुरुषो नोपजनंस्मरन्निदंशरीरं एवमेवास्य परिद्रष्टुरिमाः षोडशकलाः पुरुषायणाः पुरुषं प्राप्यास्तं गच्छंति तस्माद्धापतस्म-

न्मनोमयादन्योन्तर आत्माविज्ञा नमय इत्याद्याः हरेरधी नमिति भगवदनुग्रह जन्यज्ञान क्रिया शक्ति कमित्यर्थः कर्तृत्वं करण वं चस्वभावश्चेत नाधृतिः यत्प्रसादादादि मेसंतिनसंतियदु पेक्षयेति श्रुतेः द्रव्यं कर्म च कालश्च स्वभावो जीवएवच । यदनुग्रहतः संतिनसं तियदुपेक्षयेति स्मृतेश्चयस्य भगवतो नंतशक्तेः श्रीकृस्मस्यानुग्रहा देवद्रव्यादयः संतिनिजाभिप्रेतकार्य्य समर्था भवंतियदुपेक्षया—

भाषाकृत-प्रकाशिका ।

अरे वाविज्ञाता पुरुष को कैसे जानै यह पुरुष ही जाननवारो है जो ऐसे आत्मा को देखै है सो मृत्यु रोग दुखों को नहीं देखै सो उत्तम पुरुष समीपीजनों को और अपने शरीर को भूल जाय है या सर्वत्र देखवे वारे का ये सोलह कला वारे पुरुष के अयन लिङ्ग शरीर पुरुष को पाय के अस्त होजाय है तासे या मनोमयते अन्तरात्मा विज्ञानमय अन्य है इत्यादि श्रुति हैं और यह जीव हरि के अधीन है भगवान की अनुग्रहसे याको ज्ञान क्रिया शक्ति होंय हैं सोई प्रमाण हैं कर्त्तापनो व करणपनो स्वभाव चेतना घृति या जीवके उन भगवान के प्रसाद से होंय हैं हरि न चाहैं तौ नहीं होंय यह श्रुति है स्मृति में भी लिखा है द्रव्य कर्म काल स्वभाव जीव जाकी कृपासे हैं और

ताकी उपेक्षा से नहीं है यह भगवान जिनकी अनंत शक्ति ऐसे श्रीकृष्ण की अनुग्रहसे द्रव्यादिक हैं अर्थात अपने अभिप्रेतकाम करवे में सामर्थ्यवान ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

यस्यानुग्रहं विना न समर्था भवन्तीति श्रुतिस्मृत्योरर्थः एतदुक्तं भवति तत्वं द्विविधं स्वतंत्रं परतंत्रं च स्वतंत्रे हरिः अन्यदस्वतंत्रं सत्वं स्वातं त्र्यमुद्दिष्टं तच्च कृष्णेन चापरे। अस्वा तं त्र्यात्तदन्येषामसत्वं विद्धि भारतेति महाभारतोक्तेः तत्र परतंत्रतत्त्वं भावाभाव भेदेन द्विविधं प्रथमप्रतीतौ अस्तीत्युपलभ्यते यः सभाव :यश्च नास्तीति प्रतीयते सोऽभावः तथा च प्रतीतयः अत्र घटोंस्ति अत्रपटोस्ति ॥ एवं नास्त्यत्रघटः अस्ति पटाभाव इत्याद्याः तत्र चेतनाचेतन भेदेन भावो द्विविधः चेतयतीति चेतनः अनेवंविधोचेतनः तत्र चेतनो द्विविधः मायावृतस्तदनावृतश्चेति मायासम्बन्धान्मा

भाषा क्रांति प्रकाशिका

होंय हैं और उनकी कृपा विना कुछ सामर्थ नहीं यह श्रुति स्मृति को अर्थ है ऐसे जानौ कि तत्त्व दो प्रकार को एक स्वतन्त्र एक परतंत्र, तामें हरि स्वतन्त्र है और सव परतन्त्र अर्थात उनके आधीन है सत्व को स्वतन्त्रता उद्देश करी है सो केवल कृष्ण में है और में नहीं याते है भारत सवों को स्वतंत्रता न हो वेसे असत्त्व जानौं यह महाभारत

में कह्यो तामें भी परतंत्र तत्त्व दो प्रकार को। भावरूप अभावरूप प्रथम प्रतीति में है ऐसे जो पायो जाय सो भावरूप और जो नहीं प्रतीति होय सो अभाव तामें प्रतीति जैसे यहां घट है यहां पट है यहां घट नहीं है यहां पट को अभाव है इत्यादिक भाव भी दो प्रकार को चेतन अचेतन जो चेतन करावे वह चेतन तासे विपरीति अचेतन, अचेतन भी दो प्रकार को माया से ढक्यो विना ढक्यो माया को जामें सम्बन्ध सो ढक्यो–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

यावृतः मायाया असंवंधादनावृतः वैनतेयानंतादिलमुदायः सर्वशक्तेः सर्वनियन्तुरनन्यापेक्षमहिमैश्वर्य्यस्य भगवतो मायः अनावृतत्वंस्वाधीनत्वेनैव सिद्धमितिहरेः स्वाधीनत्वं तदन्यस्य तदधी नत्वमिति शरीरसंयोगेत्यादिआत्मकृतकर्मवशात्योदेहानप्राप्नोतीत्येवं विधं जीवं विदुरित्यर्थः ॥उक्तंचश्रीगीतासु ॥वासांसिजीर्णानि यथा विहायन वानिगृह्णातिनरो पराणि॥तथाशरीराणि विहाय जीर्णान्य न्यानिसंयाति नवानिदेही ॥शरीराणिचजरायुजांडज स्वदजोद्भिज्जा रुयानि तत्र जरायुजानि मनुष्यपश्वादीनि अंडजानि अंडेभ्योजातानि पक्षि

भाषाकांतिप्रकाशिका

जाको माया से सम्वन्ध नहीं सो नहीं ढक्यो तासे वैनतेय (गरुड़) अनंत (शेष)

आदि ये सब, जाकी महिमा ईश्वर्य्य और कोई की परवाह न राखे ऐसे सव शक्ति वारे सव के नियंता जो भगवान तिनकी माया से ढके नहीं है काहेसे कि उनके दास हैं तासे हरि ही को स्वाधीनता सिद्ध भई और सव उनके आधीन हैं आगे शरीर संयोग इत्यादि को अर्थ करैं हैं अपने किये भये कर्म तिनके वशते अनेक देहों को प्राप्त होंय या प्रकार कर के जीवों को जानते भये यह अर्थ है सोई गीता जी में कह्यो जैसे यह मनुष्य पुराने वस्त्र त्याग करके अन्य नवीन वस्त्र धारण करै हैं तैसे ही जीर्ण शरीरों को त्याग करके और नवीन देह को जीव प्राप्त होय हैं तामें शरीर की चार खान हैं जरायु जो झिल्लीसे उत्पन्न होंय अंडासे जन्में पसीना से उत्पन्न भये पृथ्वी फोड़ के ऊंचे उत्पन्न भये जरायु के मनुष्य पशू आदि क अंडा के पक्षी–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

सरीसृपादीनि प्रस्वेदाज्जातानि यूकाम कुणादीनि उद्भिज्जानि पृथ्वी मुद्भिद्यजातानि वृक्षगुल्मलतादीनि ॥ अणुमिति अणुपरिमाणमित्यर्थ

एषोणुरात्मा चेतसावेदतव्यो यस्मिन्प्राणःपंचधासंविवेश अणुर्ह्येष आत्मा यं वा एतेसिनीतः पुंण्यपापे वाल ग्रशतभागस्य शतधाकल्पितस्यच ॥ भागो जीवः सविज्ञेयः सचानंत्यायक ल्पतेइतिश्रुतेः जीवो ऽणुकृष्टपरिमाणः उत्क्रांतिमत्वात् खगशरीरवदित्यनुमानाच्चगुणिनोऽणुत्वेपि दीपप्रभावद्गुणव्याप्त्या पादे मे सुखं शिरसि मे वेदनेत्यादि युगपदनुभवोप- पत्तेः ननु आश्रयावयवाएव विशीर्णाप्रच्चरंतः प्रभेत्युच्यंतेमैवंमणिद्युमणिप्रभृतीनां विनाशप्रसंगात् दीपेप्यव

सांपादि पसीना से भये खटमलादिक पृथ्वी फोड़ के भये बृक्षगुल्मलतादिक अब अणु को अर्थ करैं हैं यह जीव अणु परिमाण है सोई श्रुति में है यह अणु परिमाण आत्माचिन्त करके जानवे योग्य है जामें पांच प्रकार के प्रान प्रवेश होते भये अणु यह आत्मा जामें दोनों पाप पुण्य बंधे हैं। केश के अग्रभाग को सौ बट करौ फिर तासवें बट को सौ भाग करौ सो जीव को स्वरूपता के परिमाण जानो सो मोक्ष होवे के योग्य है यह श्रुति है जीव सूक्ष्मपरिमाण को है जैसे पक्षी घोंसला सें जावैं तैसे शरीरसे जाय आवैं है गुणी(जीव) अणु परिमाणभी है पर जैसे दीपक प्रभा व्यापक रहै तैसे ही गुणाकी व्याप्ती से पांव

मेरे में सुख है शिर में पीड़ा है यह एक ही बारमें अनुभव होय है तामें शंका है कि आश्रय के अवयव ही निश्चय टूट के फैले हैं ताको प्रभो कहैं सो नहीं ऐसे मत कहो मणि और सूर्य को भी यारीति से नाश होजायगो और दीपमें अवयवी की प्रतिपत्ति कबहूं कदाचित नहीं होयगी।

सिद्धांतरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

वयविप्रतिपत्तिः कदाचिदपि न स्यात् प्रतिदेहभिन्नमिति अनेकमित्यर्थः अनेन एकजीववादो निरस्तो वेदितव्यः श्रुतिश्च नित्योनित्यानां चेतनश्चेतनानामेको वहूनां यो विदधाति कामानिति एवं जीवानामीशजीवयोश्च परस्परंभेदोपि सिद्धः नाहं चैत्रो नाहं सर्वज्ञो नाहमीश्वर इत्यनुभवाच्च अहमर्थस्य चात्मत्वमुपरिष्टाद्व-क्ष्यामः द्वासुपर्णासयुजासखायासमानं वृक्षं परिषस्वजाते तयोरन्यः पिप्पलंस्वाद्वत्त्यनश्ननन्योभिचाक्षीति । ऋतं पिबंतौ सुकृतस्य लोके गुहां प्रविष्टौ परमे परार्द्धे छाया तपौ ब्रह्मविदो वदंति पंचाग्नयो ये चत्रिनाचकेताः अंतःप्रविष्टः शास्ताजनानां सर्वात्मेत्यादि श्रुतिश्च परजीवयोः स्वरूपैक्यं निषेधयति—

भाषाकांतिप्रकाशिका।

यह जीव प्रति देह में भिन्न अर्थात न्यारो न्यारो है याते जो एकही जीव बतावैं हैं तिन को सिद्धांत दूर कियो जानो श्रुतिमें

भी है जो नित्यों को नित्य चेतनों को चेतन बहुतों को एक ही सब कामना देवै याप्रकार जीव से जीव को भेद जीवों से ईश्वर को भेदपरस्पर दिखायो मैं चैत्र नहीं मैं सर्वज्ञ नहीं मैंईश्वर नहीं यहसबको अनुभव है अहमर्थ आत्मा में है यह ऊपर बर्णन करेंगे दो पक्षी एक साथ रहैं सखा दोनों एक बृक्ष पर बैठे उन दोनों में एक बृक्ष के फल स्वाद पूर्वक खावै दूसरो बिना भोजन किये प्रकाशपा ब तो भयो है त्रिनाकचेता यालोकमें ऋतसुकृत को दोनों पीवेबाले एक गुहा में प्रवेश भये परम पराद्ध पर्य्यंत तिनको धूप छाया वतवेद के जानने बाले और पंचाग्नि ऐसे कहैं हैं सबको जो आत्मा जनोंके अन्तरमें प्रवेश होके सबको शासन करै है या श्रुति से भी ईश्वर ब जीव को स्वरूप की एकता को निषेध होय है।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

शारीरश्चोभयेपिहि भेदेनैनमधीयते भेदव्यपदेशाच्चान्यः अधिकं तु भेदनिर्द्देशादित्यादिषु सूत्रेषु च य आत्मनिति ष्ठन्नात्मनोंतरोयमात्मा नवेद यस्यात्मा शरीरं य आत्मानं अतंरोयमयति

प्राज्ञेनात्मनसंपरिष्वक्तः प्राज्ञेनात्मनान्वारूढ़ इत्यादि श्रुतिभिरु-
भयोर्व्यक्तिभेदनिर्णयात्षड्विधतात्पर्यलिंगोपेतश्रुतिगम्यो भेदः
परमार्थसन्नेवभवति लिंगानितु उपक्रमोपसंहाराभ्यासापूर्वताफला-
र्थवादोपपत्त्याख्यानि लिंगं तात्पर्यनिर्णये प्रकरणप्रतिपाद्यस्य तदाद्यन्त
योरुपपादनमुपक्रमोपसंहारौ यथा आथर्वणे । द्वासुपर्णेत्युपक्रमः
परमं साम्यमुपैतीत्युपसंहारः प्रकरणप्रतिपाद्यस्य तन्मध्येपौनः
पुण्येन प्रतिपादनमभ्यासः —

भाषा कांति-प्रकाशिका ।

शरीर दोनों के भेद करके याको अध्ययन करै है भेद के व्यपदेश ते अन्य है अधिक तो भेदके निर्देशते इत्यादिक सूत्रोंमें भी भेद सिद्ध है जो आत्मा में तिष्टै जो आत्माके अन्तर जाको आत्मा न जानै जाको आत्मा शरीर है जो आत्मा के अंतर प्रेरणाकरै जो प्राज्ञआत्मा करके आलिंगित प्राज्ञआत्मा करके अन्वारूढ इत्यादिक श्रुतिसे भी दोनों ईश जीव की व्यक्ति को भेद निर्णय कियो छय प्रकार के तात्पर्य के लिंग की जो श्रुतितिन में भी जो भेद प्राप्त है सो परमार्थ करके जानो जाय है तामें छयलिंग बताबें हैं ऊपक्रम(आरंभ)उपसंहार (समाप्ति) अभ्यास अपूर्वता फल अर्थवाद उपपत्ति लिंग के तात्पर्य के निर्णयकरवे में प्रकरण में जो

प्रति पाद्य वस्तुताको आदि अंत उपपादनकर वेको उपक्रम वउपसंहार कहै है सोई अथर्वण में सुपर्ण दोऊ यह उपक्रम है परम समता को प्राप्त होय यह उपसंहार है प्रकरण में जो प्रति पाद्य ताको वारम्बार प्रतिपादन करनो यह अभ्यास है।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

यथा तत्रैव तयोरन्यः अनश्नन्नन्यः अन्यमीशमितिप्रतिपादनं शास्त्रैकगम्येश्वर प्रतियोगिकस्य कालत्रयाबाध्यभेदस्य शास्त्र विना अप्राप्तेरपूर्वताफलंतु प्रकरणप्रतिपाद्यस्य पूर्वोक्तभेदस्य श्रूयमाणं प्रयोजनं यथापुण्यपापे विधूयेति प्रकरणप्रतिपाद्यस्य तत्रप्रशंसनमर्थवादः यथा तस्य महिमानमेतीतिश्रुतिरूपः प्रकरणप्रतिपाद्यार्थसाधने तत्र तत्र श्रूयमाणायुक्तिः सोपपत्तिः यथा तत्रैवान्योऽनश्नन्नित्युपपत्तिः किंचांतर्यामी ब्राह्मणेऽपि षड्विधतात्पर्यलिंगोपेतं वाक्यं भेदप्रमाणं तथाहि वेत्थत्वं कायंतर्यामिणमित्युपक्रमः एष ते आत्मा अंतर्यामीत्युपसंहारः एष ते आत्मेत्याद्येकविंशतिकृत्वोऽभ्यासः अंतर्यामित्वस्याप्राप्ततया पूर्वतासर्वैब्रह्मविदित्यादि--

भाषाकान्ति-प्रकाशिका।

जैसे तहां ही दोनोंमें अन्य बिना भोजन किये अन्य अन्य ईशको प्रतिपादन है शास्त्रसे ही प्राप्त ईश्वर प्रति योगी को भेद तीन काल में जाकी वाधा नहीं ऐसे भेद के शास्त्र बिना यह अप्राप्ति में अपूर्वता है प्रकरणमें प्रति पाद्य

पहिलो कह्यो जो भेद सुनवे को प्रयोजन सोई फल जैसे पुण्य पाप धोयके इत्यादि प्रकरण प्रति पाद्य को तहां तहां प्रशंसाकरनो यह अर्थ बाद है जैसे ताकी महिमा को प्राप्त होय यह श्रुति रूप प्रकरण प्रतिपाद्य के साधन में जो तहां तहां युक्ति सुनी जांय सोई उपपत्ति जैसे तहांही अन्य विनाभोजन किये ही यह उपपत्ति है अंतर्यामी ब्राह्मणमें भी छय प्रकारके तात्पर्य लिंग युक्त के जो वाक्य सोभी भेद के प्रमाण हैं तैसे ही तू अंतर्यामी को जाने है यह उपक्रम है यह तेरो आत्मा अंतर्यामी यह उपसंहार है यह तेरो आत्मा इत्यादि इक्कीस वार अभ्यास है अंतर्यामी पनेकी आप्रोप्तिता अपूर्वता

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

फलं तद्यत्वं याज्ञवल्क्यसूत्रमविद्वांस्तवांतर्यामिणं ब्रह्मगवीरु-दजसे मूर्द्धा ते विपतिष्यतीति निंदारूपोर्थवादो यस्य पृथ्वीशरीरं यं पृथ्वी न वेदेत्याद्युपपत्तिः ननु जीवोहि एकस्तस्य कथं नानात्वमुच्यते स्वप्नप्रत्यहं धर्मोक्षगुरुशिष्यादिव्यवस्थोपपत्तेरितिचेत् मैव तस्मिन्ने-कस्मिन् सुप्ते निखिलजगदप्रतीत्यापत्तेः सृष्टिमारभ्य प्रलयपर्य्यन्तमसुप्त-त्वस्य जीवे असंभवाच्च परात्कमहंत्वमित्यादिबुद्धिविषयव्यवस्थानु-पपत्तेश्चयोगिनःकामव्यूहेनान्तःकरणतादात्म्यारोप्येप्यहमित्येव सर्वत्र प्रतीतेश्च तदंतः करणस्यैकत्वे बाह्यकरणानामप्यैक्यप्रत्याकाय-

व्यूहस्यैवाभावः स्यदितिदिक् । ज्ञातृत्ववंतमित्यत्रादिशब्दस्याध्य हारोबोध्यः ॥

भाषाकांतिप्रकाशिका

सो निश्चय ब्रह्म को जाननवारो इत्यादि फल है सो तू याज्ञवल्क्य सूत्र को न जान के अपने अंतर्यामी के वेद की श्रुति को तोड़ैगा तो तेरो मस्तक गिर जायगो यह निंदा रूप अर्थवाद है जाको पृथ्वी शरीर जाको पृथ्वी नहीं जानतो भई इत्यादि उपपत्ति है तामें बाद की शङ्का है कि जीव एक है ताको तुम बहुत कैसे कहौ हौ वंधन व मोक्ष गुरू चेला इत्यादि व्यवस्था की प्राप्ति स्वप्न तुल्य है ताको उत्तर है कि ऐसे मत कहौ जो एक जीव कहोगे तो एक के सोये से सब जगत की प्रतीति न होयगी सृष्टि से लेके प्रलय पर्यंत कोई जीवको सोना न वनैगो श्रौर प्रत्यक्ता पराक्ता भी असंभव होयगी श्रौर मैं व तू इत्यादि बुद्धि के विषय की व्यवस्था भी न प्राप्ति होयगी काय व्यूह के विषय भी नाना अतःकरण आरोपण करैं हैं तामें भी अहं (मैं) यह सर्वत्र प्रतीत हो

यहै जो सब में अंतःकरण एक होय तो वाहिर की इन्द्री भी एक ही होंयगी तब काय व्यूह न बनेगी यह दिशा मात्र दिखाई अब ज्ञातृ वंत को अर्थ करैं हैं ज्ञातृत्व वंत के आगे आदि

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

तथाच ज्ञातृत्व कर्त्तृत्व भोक्तृत्वादयोपि स्वाभविका धर्मा जीवे संतीत्यर्थः तत्रकेचित् गौणः केचित् स्वरूपभूताइत्यादि विवेकस्त्वन्यत्र द्रष्टव्यः ननुज्ञातृत्वं नाम ज्ञानक्रियाकर्तृत्वं तच्च विक्रियात्मकमित्यविक्रियस्यात्मनो नसं भवति अपितु अंतःकरण-रूपाहंकारस्य इति चेत उच्यते ज्ञातृत्वं हि ज्ञानगुणाश्रयत्वं ज्ञानं चास्यनित्यस्य स्वाभाविकधर्मत्वेन नित्यं स्वयमपरिछिन्नं ज्ञानं संकोचविकाशार्हं एतज्ज्ञानमिन्द्रियद्वारेण प्रसरति तत्प्रसरेतुकर्त्त-त्वमस्त्येव तच्चनस्वाभाविकमपितु कर्मकृतमित्यविक्रियास्वरूपएवा आत्मा एवंरूपमविक्रियात्मकं ज्ञातृत्वं ज्ञानस्वरूपस्यात्मनएवेति नकदाचिदपि जडस्याहंकारस्य ज्ञातृत्वसंभव इतिदिक—

भाषाकांतिप्रकाशिका।

शब्द को और अध्याहार करनो होयगो तासे ज्ञातापनो कर्त्तापनो भोक्तापनो इत्यादि स्वाभाविक जीव के धर्म हैं तामें केतने गौण हैं कोई स्वरूप भूत हैं इन को विचार अन्य त्र देख लेनो तामें वादी की शंका है कि ज्ञातृत्व नाम ज्ञान क्रिया कर्त्तापनो ये विकार आत्मक हैं और आत्मा अविकारी है तामें

नहीं वनसकैं हां अंतःकरण रूप अहंकार में बनै हैं ऐसे जो कहैं ताको समाधान यह है कि ज्ञातृत्वनाम ज्ञानगुण को आश्रय पनो सो या नित्य जीवको ज्ञान स्वभाविक धर्महै तासे सो भी नित्य है और सो ज्ञान स्वयं तौ अखन्ड है पर संकोच विकाशपावतो रहे है यह ज्ञान इन्द्रियों के द्वारा फैले हैं ताके फैलवे से याको कर्तृत्व होय हैं सो स्वाभाविक नहीं है किन्तु कर्मको कियो भयोहै याते आत्मा अविकारात्मक है तासे ज्ञातृत्व ज्ञान स्वरूप आत्मा को है जडरूप अहंकार को कदाचित ज्ञातृत्व संभव नहीं यह दिशा मात्र दिखाई।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

एवं ज्ञातृतया सिद्धयन्नहमर्थएव प्रत्यगात्मानज्ञप्तिमात्रं अहंभावविगमे तु ज्ञप्तेरपि न प्रत्यक्त्वसिद्धिः एवं चाहमित्येकाकारे-आत्मनः स्फुरणात्सुषुप्तावपि नाहं भावविगमः एवं हि सुप्तोत्थितस्यपरामर्शः सुख महंमस्वाप्समित्यनेन प्रत्यवमर्शेन तदानीमप्यहमर्थस्यैवात्मनः सुखित्वं ज्ञातृत्वं च ज्ञायते एतावन्तंकालं नकिंचिदहमज्ञासिषमित्यत्र नकृत्स्नप्रतिषेधः अहमवेदिषमिति वेदितुरहमर्थस्यानुवृत्ते र्वेद्यविषयोहि सः प्रतिषेधः ननुमामथहं नज्ञातवानित्यहमर्थस्यापि तदानीमनुनुसंधानं प्रतीयत इति चेत् उच्यते अहमर्थस्य ज्ञातुरनुवृत्ते र्नस्वरूपं निषिध्यते अपितु प्रबोधसमये नुसंधीयमानस्याहमर्थस्य वर्णाश्रमादि—

या प्रकार ज्ञातृता करके सिद्ध भयो जो अहंअर्थ सो प्रत्यगात्मा में हैं ज्ञप्ति मात्र कदाचित नहीं अहंभाव जो नर है तौ ज्ञप्ति को भी प्रत्यकपनो सिद्ध नहीं है याप्रकार अहं और आत्माकी एकाकोरसे स्फूर्ति होय है तासे सुषुप्ति में भी अहंभाव वनोरहे है सोयके उठै तवऐसेविचार करै है कि मैं सुखसे सोयो या विचार से ता समय भी अहंअर्थ वारे आत्मा ही के सम्बन्ध में सुखपनो ज्ञातृत्वपनो जानो जाय है इतने कालपर्य्यन्त में कुछ नहीं जान तो भयो या स्थलमें समग्रको प्रतिषेध नहीं है मैं नहीं जानतो भयो यामें जानवे वारे को अहंअर्थ तौवनो ही है जानवे को जो विषय ताही को निषेध करै है तामें शंका है कि मैं अपनपेको भी नहीं जानतो भयो याप्रकार तासमय अहंअर्थ को भी अनुसन्धान नहीं प्रतीत होय है एसे जो कहैं ताके लिये कहैं हैं कि अहंअर्थ ज्ञाता में अनुवृत्त है ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

विशिष्टता अत्र च जागरितावस्थानुसंहितजात्यादिशिष्टो-स्मदर्थो मामित्यंशस्य विषयः स्वापावस्था प्रसिद्धो विशदस्वानुभवै-कताश्रयश्चाहमर्थोहमित्यंशस्य विषय इति विवेकः अपिच सुषुप्ता-वात्माज्ञानसाक्षित्वेनास्त इति हि मायावादिनां प्रक्रिया साक्षित्वं च साक्षात् ज्ञातृत्वमेव नह्यजानतः साक्षित्वं ज्ञातैवलोकवेदयोः साक्षीति व्यपदिश्यते नज्ञानमात्रं आह च भगवान पाणिनिः साक्षाद्-द्रष्टरिसंज्ञायामिति साक्षात् ज्ञातर्य्येवसाक्षिशब्दं अयंच साक्षी जाना-मीति प्रतीयमानोस्मदर्थ एवेतिकुतस्तदानीमहमर्थो नप्रतीयते अन्य-थात्मानोंपि तदानीमप्रकाशापत्तेः एवं मोक्षदशायामपि नाहं भावविगमः—

भाषा कांति प्रकाशिका

तासे स्वरूप को निषेध नहीं करैं जागती समय में अहंअर्थ की वर्णा आश्रमादि विशेषण तिन को निषेध करैं हैं यास्थल में यह बिचार है जाग्रत अवस्था में जात्यादि कर के विशिष्ट जो अस्मदर्थ सो मैं या अंश को विषय है स्वाप अवस्था में प्रसिद्ध बिशद अपने अनुभव के एक आश्रय को अह मर्थ अहंया अंश को विषय है सुषुप्ति में आत्मा ज्ञान को साक्षी है यह माया वादियों की प्रक्रिया है साक्षी पनोसाक्षात जानबेबारे को होय है बिना जाननबारे की साक्षी नहीं

होय ज्ञाता ही लोक वेद में साक्षी मानो जाय है ज्ञान मात्र नहीं सोई भगवान पाणिनि ने कह्यो है साक्षात देखबेवारे में ही वर्त्तै है साक्षात ज्ञाता केबिषय ही साक्षी शब्द वर्त्तै है मैं जानौ हौं ऐसे प्रतीत होय जो सोअस्मदर्थ ही है कैसे ता समय अहं अर्थकी प्रतीति नहीं होय जो ऐसो अहं अर्थ न प्रतीत होय तौ ता समय आत्मा को भी प्रकाशन होय याही प्रकार मोक्ष दशा में भी अहं भाव नहीं जाय ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अहंभावविगमेत्वात्मना शएवापवर्गो द्रविडमंडकन्यायेन प्रतिज्ञातः स्यात् नचाहमर्थो धर्ममात्रं येन तद्विगमेप्यविद्यानिवृत्ताविव स्वरूपमवतिष्टेत प्रत्युंत स्वरूपमेवाहमर्थ आत्मनः ज्ञानं तुतस्य धर्मः अहं जानामीति ज्ञानं मे जातमिति चाहमर्थ धर्म्मतया ज्ञानप्रतीतेः एतेन चाहं जानामीत्यस्मत्प्रत्यये योनिदमंशः प्रकाशैकरसश्चित्पदार्थः स आत्मातस्मिंस्तद्बलनिर्भासिततया युष्मदर्थलक्षणो हं जानामीति सिद्धय अहमर्थः चिन्मात्रातिरेकी पुष्मदर्थएवेत्यपास्तं अहंप्रत्ययासिद्धोह्यस्मदर्थः युष्मत्प्रत्ययविषयोयुष्मदर्थः अत्राहं जानामीति सिद्धो

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

अहं भाव जो नर है तौ मोक्ष आत्माको नाश बोलो जाय जैसे दक्षिण देश में भातको

मांड़ पतरो भातमें मिलाय और मीठी लकड़ी से चलाय देंय सो मांड़ को स्वरूप जैसे नष्ट होजाय तैसे मोक्ष समुझनो अहं अर्थ धर्म मात्र नहीं है जासे ताके चले जाये परभीस्वरूप रह्यो आवै जैसे अविद्या निवृत भये पीछे स्वरूप स्थिर रहै किंतु अहं अर्थ आत्मा को स्वरूप ही है ज्ञान ताको धर्म है मैं जानूं हूं ज्ञान मोको उत्पन्न भयो या प्रकार अहं अर्थ में ज्ञान की प्रतीति को सम्बन्ध धर्म मात्र है या करके जिनको मत है मैं जानूं हूं यह अस्मत-प्रत्ययके विषयजो इदं अंशसो प्रकाश मात्ररस चित्पदार्थ नहीं है सोआत्मा ताके विषय है ताके बलसेप्रकाश मान युष्मदर्थलक्षण भी मैंजानूं हूं यहसिद्ध भयो याते अहं अर्थ चिन्मात्रसे न्यारो सो ईयुष्मदर्थ है यह पक्ष दूर कियो अहं प्रत्यय से सिद्ध भयो अस्मदर्थ युष्मतप्रत्यय से सिद्ध युष्मदर्थ यह जानना जिन को मत है।

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

ज्ञातायुष्मदर्थवचनं मे माता वंध्ये तिवद्या हतार्थ च॥ किंच तदानीमहमर्थाभावे हंनिदुःखःस्यामित्युत्पन्नमोक्षराग एव तत्साधने प्रव

र्त्तते स्वसाधनानुष्ठानेन यद्यहमेव न भविष्यामि इत्यवगच्छेद्पसर्पेद सौ मोक्षकथाप्रस्तावगंधतः॥एवं चाधिकारिणो भावादेव सर्वमोक्षशा स्त्रमप्रमाणं स्यात एतेनमोक्षदशायामहमर्थो नानुवर्त्तते इत्यपास्तं मयि नष्टे ऽपिमत्तोऽन्यत्किमपि प्रकाशमात्रमवतिष्ठते इतिमत्वा तत्प्राप्तये कस्या प्यत्नो नभविष्यति तस्मादहमर्थस्यैव ज्ञातृत्वेन सिद्धयतः प्रत्यगात्मत्वं मुक्तानामपि वामदेवादीनामहमित्येवानुभवाच्च तथाच श्रुतिः तद्धै तत्पश्यन्नृषिर्वामदेवः प्रतिपेदे अहंमनुरभवं

भाषा कांति-प्रकाशिका ।

अब मैं जानूं या कहवे से युष्मदर्थ वचन को ज्ञाता सिद्ध होगयो तौ जैसे कोई कहै कि मेरी माता वांझ है तारीति से अर्थ को व्याघात होय जो अहमर्थ न होय तौ मैं दुःख से छूट जाऊं ऐसे विचार के मोक्ष में राग उपजे है तब ताके साधन में प्रवर्त्त होय है जो ऐसे जानै कि साधनके अनुष्ठान करवे से मैं ही न रहूंगो तौ मोक्ष कथा की गंध से भी दूर भागे ऐसे जब अधिकारी न रहैंगे तौ मोक्ष को शास्त्र अप्रमाणीक होजाय यासे जो ऐसे कहैं है कि मोक्षदशा में अहंअर्थ नहीं रहै सो मत भी दूर कियो मेरे नष्ट भये पीछे मेरे से न्यारो कोई और प्रकाशमात्र वाकीरहै है ऐसे मान के ताकी प्राप्ती को कोई उपाय न करैगो

तासे अहं अर्थ की ही ज्ञातृत्व करके सिद्धि भयी सोई प्रत्यगात्मा है मुक्त जो वामदेवादि कहैं उनको भी अहं अर्थ को अनुभव है श्रुति है सो ऋषि वामदेवता को देखके प्राप्त होते भये मैं मनु हो तो भयो ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

सूर्य्यश्चेति किंच भगवतोप्येवमेव व्यवहारः हंताहमिमा-स्तिस्त्रोदेवता वहुस्यां प्रजायेय सपेक्षतलोकान्नु स्रजा इति तथा यस्मा-त्क्षरमतीतोहमक्षरादपिचोत्तमः। अतोस्मिलोकेवेदेचप्रथितः पुरुषो-त्तमः। अहमात्यागुडाकेशसर्वभूताशयस्थितः। नत्वेवाहं जातुनासं अहंकृत्स्नस्यजगतः प्रभवः प्रलयस्तथा अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्त्तते । तेषामहं समुद्धर्त्ता मृत्यूसंसारसागरात् । अहं वीजः प्रदः पिता। वेदाहमसमतीतानि। अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुचेत्यादि नत्वहमित्येवात्मनः स्वरूपं चेत्तर्हि कथं भगवताहं-कारस्य क्षेत्रांतर्भाव ऊपदिश्यते। गीतासुमहाभूतान्यहंकारो वुद्धिर व्यक्तमेवेति चेत् श्रुण ।

भाषाकांतिप्रकाशिका

मैं सूर्य्य होतो भयो विशेष का कहैं भगवानको भी यह ब्यबहार देखो जाय है श्रुति है हर्ष से कहैं कि ये तीन देवता मैंहीहूं मै उत्पन्नहो बहुत होजाऊ या संकल्प से माया की ओरी देखते भये लोकों की रचना करते भये तैसेही गीता जी के प्रमाण दिखावैं हैं याते क्षर से

न्यारो अक्षर से भी उत्तम हौं तासे लोक वेद में प्रगट पुरुषोत्तम मैं हौं हे अर्जुन सब भूतों के आशयमें स्थिति आत्मा मैं हूं मैं कदाचित पहिले नहींहोतो भयो मैंसब जगतको उत्पति प्रलय करों हौं। मोही से सब प्रगट होय मो में सब वर्तै है तिन को संसार सागर से मैं उद्धार करवे वालो होऊ हौ सोमै बीजको देने वालो पिता हौं मैं सब भूत भविष्य वर्त्मान जानौ हौं मैं तोको सब पापोंसे छुटाय देंवगो तू मत शोचै इत्यादि तामें वादी की शंका है कि जो अहं आत्माको स्वरूपही है तौ भगवानने अहंकारको क्षेत्र नाम शरीरके अंत र्भूत कैसे वर्णा न कियो सोई गीता जी में कह्यो महाभूतानि अहंकार बुद्धिः अव्यक्त या प्रकारताको सुनौं

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

सर्वेष्वपि स्वरूपोपदेशेष्वहमित्येवोपदेशादहमित्येव प्रत्यगात्मनः स्वरूपं तथैवात्मस्वरूपप्रतिपत्तेश्च अव्यक्तपरिणामभेदस्य त्वहंकारस्यानहमहंकरोतीत्यभूततद्भावे च्विप्रत्ययमुत्पाद्य क्षेत्रांतर्भावो भगवतोपदिश्यते सत्वनात्मनिदेहे अहं भावकरणहेतुत्वेनाहंकार इत्यु-

च्यते अयमेव गर्वापरनामोहंकारः शास्त्रे बहु शोहेयतयोच्यते तस्मा-
द्बाधकापेताहं बुद्धिरद्धात्मविषयैव शरीरविषया त्वहंबुद्धिरविद्यैवेति
सिद्धमहमर्थस्यात्मत्वं ननु अनेकजीवत्वादेपिकदाचिज्जीवानांसमाप्त्या
संसारसमाप्तिः स्यादित्यत्राह यमनंतमाहुरितिनारदादय इतिशेषः
यद्यस्मादनंताजीवास्तस्मान्नजीवसमाप्त्या संसारसमाप्तिरित्यर्थः
आहुरित्यनेन प्रमाण—

भाषाकांतिप्रकाशिका

जहां जहां स्वरूप को उपदेश है तिन
सब उपदेशोंमें अहं प्रत्यक आत्मा को स्वरूप
ही बतलायो है और आत्मस्वरूपकी प्रतिपत्ति
है और अव्यक्त परिमाण भेदको जो अहंकार
सो अनहं को अहं करै अभूततद्भाव में च्वि
प्रत्ययउत्पादन करके क्षेत्रके अंतर्भावि जो भग
वान ने उपदेश कियो सो अनात्मा देह में
अहं भाव करनो है ताकारण ते ताको अहं
कार उच्चारण करैं हैं याको दूसरो नाम गर्भ
भो है यह शास्त्र में बहुत प्रकार से त्यागने
योग्य लिखो है ताते वाधा रहित अहं बुद्धि
साक्षात् आत्मा के विषय में है शरीर विषय
कअहं वुद्धि अविद्या ही होय है यारीतिसे अह
मर्थ को आत्मत्वसिद्ध भयो तामें फिर वादी

की शंका है कि जो तुम्हारो अनेक जीव हैं
ऐसो कहनो है तो जीव जब समाप्त होजांयगे
तो संसार भी समाप्त होजायगो ताको समाधान
यह है कि जीवों को नारदादिक अनन्त नाम
जिनको अंत नहीं ऐसे बतावें हैं तासे जीवोंकी
समाप्ति नहीं न संसारकी समाप्ति

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

सिद्धतां सूचयति प्रमाणं च स्मृतिः अतीतानागताश्चैव यावतः सहिताः क्षगा। ततोप्यनंतगुणता जीवानां राशयः पृर्थागति त देवं जीवस्वरूपं निरूपितं परंतु अघटघटनापटीयस्यागुणमय्याः हरेर्मायाः या संसर्गेणान्यथात्वमपि जीवे प्रतीयते तच्च भगवदनुग्रहादेव निवः र्त्तत इत्याहमूल अनादीतिअनादिमायापरियुक्तरूपं त्वेनंविदुर्वैभगवत्प्रसादात्। मुक्तं च भक्तं किलवद्धभुक्तं प्रभेदवाहुल्य मथापि वोध्यं। टीकाअनादिमाययापरियुक्तं संयुक्तं संवलितं रूपं स्वरूपं यस्य तमेनं जीवजातं प्रसोदादनुग्रहात् श्रीभगवतः मुक्तं निरतिशयानंदरूपं मुक्तिमंतं भक्तं स्वाभविक्यनिमित्तापरिछिन्नेन्द्रियवंतं विदुः सनकादयः इतिशेषः।

भाषा कांति प्रकाशिका

या प्रमाण को भी सूचन करै हैं स्मृति में
जितने क्षण अतीतनाम होगये अनागत नाम होंयगे
तासे भी अनंतगुण जीवों की न्यारी २
राशिहैं याप्रकार जीवस्वरूप निरूपणकियो
परंतु अघट जोघटैनहीऐसी घटनाकीप्राप्ति कर

वे में कुशल गुणमयी हरिकीमाया को सम्वन्ध पायके जीवको उलटो पनोप्रतीतहोयहै अर्थात अपनो स्वरूप भगवत सम्बंध छोडके देहमे अहंबुद्धि राखके ताकेसम्वन्धी सुतकल त्रादिधन धाम मेंपक्कीममतावांधैहै यहयाजीव कोविपरीत पनो भगवानकी अनुग्रहसे हीनिवृतहोयहै ताके लिये मूलकोदूसरो श्लोक कहैं है अनादि माया से ढकगयो रूपजाको ऐसेजीवको भगवान के प्रसाद सेसंकादिक जानते भये तामें जीवों के भेद वतावैंहै मूलमे जोजीव एक बचनहै सो जातिउप लक्षणहैं मुक्त नामनिरतिशय आनन्द रूपमुक्ति वाले भक्तनाम स्वाभाविक अपरिछिन्न इन्द्रिय वाले किलनिश्चय करके ताके अनंत र और भी वद्ध मुक्त केभेद बहुत जानवे योग्य हैं

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

श्रीभगवदनुग्रहश्चद्विविधः सर्वदा सुखरूपो मदस्तंभादिस्रंश-रूपश्च मानस्तंभादिनिर्मित्तानां सत्त्वेपि तैःपुनर्मोहाभावःप्रथमःस च प्रियव्रतध्रुवप्रह्लादादिषुद्वितीयस्तु द्वढस्तंभमानादिसंसर्गरोगवत् स्विन्द्रादिषु यथा श्रीभागवते मया तेकारि मघवन् मखभंगोनुग्रहता। मदनुस्मृतये नित्यंमत्तस्येन्द्रश्रिया भृशमिति भगवदुक्तेःपुनरपिसद्विविधः साधनाधीनः साध्याधीनश्च। आद्योमंदीकृतस्तंभादौ दैन्य-

साध्यः अन्यसाधनहीनेषु भगवदिच्छयापरः ननुभगवदनुग्रहो व्यापकः परिछिन्नो वा नाद्यः सर्वेषु तदापत्तेः नांत्यः अकिंचित्करत्वादिति चेन्न यतोव्यापकस्यापि भगवदनुग्रहस्य वेदांतश्रवणादिवाग्मिनान्तकरणेन भक्तिमत्येव संबंधो जायते ।

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

तामें भनवान की कृपा दो प्रकार की है सर्वदा सुखरूपसे विराजै मदस्तंभभ्रष्ट करके विराजै मानस्तंभके निमित्तहैं तौभी तिन करके मोहन हीसो प्रथम अनुग्रह सो प्रियव्रत ध्रुव प्रह्लादादि कोंके ऊपर जैसे श्रीभागवत के सप्तम स्कंधमेकह्यो सोप्रह्लाद असुरवालक होके भी असुर भावसे रहित होतेभये दूसरे पक्षे स्तंभमानादि वारेइन्द्रादि कोंपरजैसे संसार के रोग कीदवा सोई श्रीभागवत दसमस्कन्द मेंहेइन्द्रमैने तुम्हारे ऊपर अनुग्रह करके तुम्हारी यज्ञ भंग करी तुम अतिशय इन्द्र पने की श्री से मतवारे होगये तो तुमको मेरोस्मरण रह्यो आवै यह भगवानने कह्यो फेर भीसो अनुग्रह दोप्रकार की साधन आधीन साध्य आधीन तामें पहिलीग र्वादिकों कोमन्दकरके विराजै जौ दीनता तासे मिलै जैसे आचार्य भगवान ने कह्यो कि इन

कृष्णाकी कृपादैन्यादि गुणबोले पुरुष पर होयहै औरदूसरी अन्य कोई जिनको साधन नही केवल भगवानकी इच्छासे जैसेयज्ञ पत्नियों परभई तामे शंकाहै कि तुम्हारे भगवानकी कृपा परिछिन्न (खंडित)है किव्यापकहै

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

नान्यत्र यथा तार्किकमते व्यापकस्यापि गोत्वादेः सास्नादिमत्येव संबंधो नान्यत्र तद्वत् यत्र श्रवणादि न दृश्यते अनुग्रहश्च दृश्यते तत्र जन्मांतरीयं तत्कल्पनीयं किंच यथा पृथ्वी जलव्याप्ता सर्वदैवाविशेषतः। निम्नस्थले दृश्यते हि समक्षमुदकं स्वयं कृष्णकृपातन्निसर्गाद्दैन्यनम्रेषु च तथेति सनत्कुमारवचनाद्दैन्यनम्रेष्वेव भगवदनुग्रहो नान्यत्रेति सिद्धं अथ वद्धमुक्तप्रभेदवाहुल्यं वोध्यं अपिशब्दो वधारणे यद्यपि वद्धमुक्तयोर्मध्ये मुक्तस्यैव प्राधान्यं तथापि प्रत्यक्षत्वाद्वद्धस्य प्रथमुद्देशः तत्रवद्धाः अनादिकर्मवासनाजन्य—

भाषाकांतिप्रकाशिका।

तामें व्यापक नहीं सब पर होनी चाहिये अंत की भी नहीं सो कुछ नहीं कर सके ताको समाधान यह है कि अनुग्रह व्यापक भी होके वेदान्त के सुन वेसे जाके हृदय में भक्ति महारानी बसी ताही के सम्बन्ध में कृपा होय है या प्रकरण में वेदान्त नाम भगवत जन्म कर्म गुण रूप

लीला का है काहे से कि आगे भक्तिमत विशेषण पडो है इन के सुने बिना भक्ति असंभव है सोई❀श्रीभागवत में है ब्रह्माजी बोले कि जो तुम्हारे चरण कमल कोश की गंध श्रुति पवन की लाई भई कानों के छेद सेसूंघे हैं उन ने परा भक्ति से आप के चरण पकड लिये उन अपने दासों के हृदय कमल को आप नहीं छोड़ो ॥ जैसे तार्किकों के मत में गोत्वादिशब्द व्यापक भी होके गलासींग बारे पशू ही में सम्बध राखे हैं अन्यत्र नहीं तैसे यहां भी समुझै और जहां श्रवणादिक नहीं दिखाई पडै और अनुग्रह देखी जाय तहां आगे जन्मों को समझ लेना जैसे बृत्रासुर व गजराज या जन्म में कुछ साधन नहीं रज तम को शरीर यहां घोर संग्राम में बड़े२ योगियों को दुर्लभ ऐसी उत्कंठा होती भई ।

(❀) श्रीभागवते ये तत्त्वदीप चरणाम्बुज कोशगन्धं जिघ्रंतिकर्ण-विवरैः श्रुंति वात नीतं । भक्त्या गृहीत चरणा पर याचतेषांनापैषि नाथ हृदांवुरुहात्स्वपुं सामिति ॥

देवतिर्यङ्मनुष्यस्थावररूपचतुर्विधशररितत्सं बंधिष्वहंताम-
मतावंत: तेच द्विविधाः मुमुक्षवो बुभुक्षवश्चेति विविधसांसारिक-
दुःखसंदर्शनेनविरक्ता सं तः संसारान्मोक्षमिच्छवो मुमुक्षवः तेपि
द्विवधाः ।

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

÷ बृत्रासुर को इन्द्र के साथ युद्ध करते
हरि के दर्शन भये तव प्रार्थना करी हे हरे मैं
तुम्हारे चरण कमल मूलके जो दास तिनको अनु-
दास फेर होऊं और मेरो मन तुम प्राण पतिके गुण
स्मरण करौ और वाणी उच्चारण करौ और
काया कर्म करौ कोई जो शंका करै कि अजामेल
को कोई साधन नहीं वाको मरण समय पार्षद
कैसे दर्शन देते भये तौ वेटा के मिष से जो
नारायण नाम लियो तो आभास नाम ही परम
साधन भयो ताकी महिमा अनर्गल शास्त्र में
प्रसिद्ध है। गजराज ग्राह के पाश में बंध्यो
पहले जन्म को सीखो भयो जाप जपतो भयो
जैसे पृथ्वी सदा जल से व्याप्त है पर तथापि

÷ श्रीभागवते षष्ठस्कंदे-अहं हरेर्तवपादैकमूलदासानुदासो भविता-
स्मि भूय: । मनस्मरेतासुपतेगुंणानां गृणीत वाक्कर्म करोतुकाय: ।
अष्टमस्कन्दे-- जजाप परम जापं प्राकजन्मानुशिक्षितम् ।

निम्नस्थल में ही स्वयं प्रत्यक्ष जल देखो जाय तैसे श्रीकृष्णा कृपा भी स्वभाव से ही दैन्य नम्र में ही देखी जायहै तासे दैन्य नम्रमें ही भगवत कृपा सिद्ध भई अन्यत्र नहीं आगे वद्ध मुक्तों के वहुत भेद जानवे योग्य हैं यद्यपि वद्ध व मुक्त इन दोनों में मुक्तों की ही प्रधानता है तौ भी वद्ध प्रत्यक्ष है तासे पहिले उनको ही वर्णन करें हैं तामें वद्धाः अनादि कर्मों की वासना से वने जो देवता पशू पक्षी ये जंगम रूप और स्थावर रूप बृक्षादिक चार प्रकार के शरीर वारे तिन देहों में और उनके संबन्ध के बेटा स्त्री धनादिक में ममतावारे वे भी दो प्रकार के संसार में मोक्ष इच्छा वारेः—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

ज्ञान साधना भगवत्परिकर साधनाश्च तत्र ज्ञान साधनाः वर्णा श्रमोचित कर्म योगा नुष्ठा नसमुत्थित गंगाप्रवाहवद विछि न्न स्मृति संतानरूप साक्षात्कार पर्यंत भक्तिनिष्टावंतः तेचद्विविधा उपासका औपनिषदाश्चेति तत्रो पासका: श्रीरामचन्द्र नृसिंह हयग्रीवाद्या वतारमंत्रविहित ध्यानपूजन पुरश्चरणादि निष्टायंतः औपनिषदास्तु श्रवण मनन निदिध्यास नैकनिष्टा: एतेषु भगवल्लीलागुणरूपादिसाक्षात्कारप्रतिवंधकान्मोक्षमिच्छवांतरभावनीयाः भगवत्परिकरीसाधनास्तु ज्ञानकर्मादीनां प्रधानसाधनत्वमनंगीकृत्य करूणावरूणालयं गुरूमेवोपायं मत्वा कंचन सम्बन्धविशेषं लब्ध्वा मुक्तिनिश्चयवंतः-

भोग की इच्छावारे। नाना प्रकार के संसार से दुख देख के विरक्त होके संसार से छुटवेकी इच्छाकरैं वे मुमुक्षू वे भी दो प्रकार के ज्ञान साधन वारे भगवत परिकर साधन वारे तामें ज्ञान साधन वारे वर्णाश्रम के उचित कर्मयोग अनुष्ठान कियो तासे गंगाजी के प्रवाह की तरह उठ्यो जो अखन्ड स्मृतिको विस्तार तासे साक्षात पर्य्यंत भक्ति निष्ठा वारे ते दो प्रकार के उपासक उपनिषद ज्ञान वारे ज्ञानी तामें उपासक श्रीरामचन्द्र नृसिंह हयग्रीवादि अवतारों के विधान से ध्यान पूजा पुरश्चरण के निष्ठावारे दूसरे उपनिषद वारे ज्ञानी श्रवण मनन निदिध्यासन निष्ठावारे उपनिषद द्वारो के भीतर भगवान के लीला गुण रूपादि को साक्षात्कार जामें न रहे ऐसी मोक्षकी इच्छा वारोंको भी समुझ लेने। भगवतपरिकर साधन वारे तौ ज्ञानकर्मादिकोंको प्रधान साधनपनो अंगीकार नहीं करैं करुणाके समुद्र गुरू को ही

उपाय मानके कोई संबंध विशेष भगवान के साथ मिलजाय याही को मुक्ति निश्चय कर लिये हैं ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

एतेच सर्वे च प्रत्येकं चतुर्विधाः आर्त्तांजिज्ञासवोर्थार्थिनो ज्ञानिनश्च अथ बुभुक्षवो वैषयिकानन्दमिच्छवः तेच योग्यायोग्यभेदेनद्विविधाः तत्र योग्यानामभगवन्निर्हेतुक कृपाकटाक्षेणभाविनीयोग्यतावंतः ।

भाषा कांति प्रकाशिका

ये सब एक२ में चार२ प्रकार के हैं आर्त्त (दुखिया) जिज्ञासू (कल्याण का उपाय पूछवे वारे) अर्थार्थी ज्ञानी ये चार प्रकार के आर्त्तादि उपासकों में उपनिषद वारे ज्ञानियों में और भगवत् परिकर साधन वारों में हैं तात्पर्य यहहै कि कोई संसारी दुख से घर छुट्यो फिर उपासक महात्मावों को संग मिल्यो उपासक होगये ज्ञानवारे को संग मिल्यो ज्ञानी हो गये तैसे ही भगवत परिकरके साधन वारे को संग मिल्यों वैसे होगये तैसे उन तीनों जिज्ञासू अर्थाथी ज्ञानियों को विचार लेनो गीता जी में भगवान् ने भगवत्-परिकरके साधन वारों

के उदाहरण बताये हैं*आर्त्त जिज्ञासू अर्थार्थी ज्ञानी हे अर्जुन ये चार प्रकार के सुकृति मेरो भजन करै हैं तिनमें ज्ञानी सब उपाधि से न्यारो एक 'प्रेम-भक्ति' ही से केवल देहाभिमान छोड़ कर जो निरन्तर भजन करै है और मेरे में लगो रहै सो श्रेष्ठ है याते मैं ताको प्यारो हौं तासे सो मोको प्यारो दुखिया जैसे गजराज ग्राह की पाश से दुखी हरि को स्मरण करतो भयो सो भी जन्मांतर के सुकृति और अगस्त जी के शाप मिष कृपा विशुद्ध भक्ति को अधिकारी भयो और पार्षद गति पाई तैसे ही शौनकादिक जिज्ञासू वोंकी गति समझ लेनो ध्रुव जी पहले अर्थ की चाहना से घर से निकरे फिर श्रीनारद जी की कृपा से भगवत दर्शन पाय के विशुद्ध भक्ति के अधिकारी भये ज्ञानी श्रीः——

---

* चतुर्विधाभजंतेमांजनाः सुकृतनोऽर्जुन। आर्त्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानीच भर्तर्षभ । तेषां ज्ञानी नित्ययुक्तो एकभक्तिर्विशिष्यते । प्रियो हि ज्ञानिनोत्यर्थमहंस च मेप्रियः ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अयोग्या द्विविधाः नित्यसंसारिणो निरययोग्याश्च तत्र नित्यसंसारिणो वृक्षादयः निरययोग्या मनुष्ये ष्वधमाः क्षः शिशु-चादयश्च ते च द्विविधाः प्राप्तनिरया अप्राप्तनिरयाश्चेति प्रथमुक्ताः तेचाज्ञाना ध्यस्तदेहादिष्वहं ताममतानिवृत्ति पूर्वकस्वरूपप्राप्तिर्वतः तेच द्विविधाः नित्यमुक्ताः मुक्ताश्चेति—

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

संकादिक हरिके चरण कमलकी तुलसी मकरन्द की वायू नासिका से सूंघ के पुलकरों मांच अश्रुधारण करते भये ज्ञानी यासे अति शय प्यारो कि पहिले हैं त्वंपदार्थ के ज्ञानसे श्रेष्ठ फिर तत्पदार्थमें प्रेमा भक्तिभई ताको मेरे सिवाय कोई वांछा न ही ऐसे चारो प्रकार के विशुद्ध भक्तिके अधिकारी भये कारण केवल भगवत कृपा कटाक्ष अथवा उनके दासों की कृपा है । बुभूक्षु नाम विषय भोग की इच्छा वारे सो दो प्रकारके योग्य अयोग्य तामे योग्यता वे हैं जो भगवान की निर्हेतुक कृपा कटाक्ष से आगे सुधर जांयगे और अयोग्य भी दो प्रकार के नित्य संसारमें पड़े बृक्षादिक और नरक के योग्य मनुष्यों मेनीच जिन के रात

दिन धनकी कमाई औौर स्त्री संग में व्यतीत होंय औौर राक्षस पिशाचादिक । उन में भी दो प्रकारके एकतौ नरकमें पड़े हैं दूसरे नरक में अभी पड़े नहीं अबमुक्तों को वर्णान करैं हैं अज्ञान करके देहादिक में अध्यासकरी जो अहंता ममता सो निबृत होगई औौर स्वरूपको प्राप्त भये वे भी दो प्रकार के नित्यमुक्तमुक्त

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

तत्र नित्यमुक्तानामगर्भजन्मजरामरणादिदुखमननुभूय नित्य-प्राप्यानंदानुभवैकरसः यथानंदसुनंदादयः मुक्तास्तु भगवदनुग्रहेण अनादेरज्ञानात्प्रमुक्ताः सालोक्यसारूप्यसामीप्यसार्ष्टिसायुज्यानुभव-वंतः तेचद्विविधा- गुणगानपराः सेवनपराश्चेति तत्र गुणगानपरा भीष्मादयः सेवन परास्तु वनमालादिनिर्माणक्रियापरा एते च देवर्षिमनुष्यराजन्यादिभेदेन प्रत्येकमनेकविधाः पुनः सर्वेप्येते चतुर्विधः आर्त्तमुक्ताः जिज्ञासुमुक्ताः अर्थार्थीमुक्ताज्ञानीमुक्ताश्चेति तत्रार्तमुक्ताः शिवानुयायिनः जिज्ञासुमुक्ताब्रह्मसृग्वादयोनुयायिनः अर्थार्थिनो श्रीलक्ष्मी विष्वकसेनादयोनुयायिनः—

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

तामे नित्यमुक्त तौ वे है कि गर्भ जन्म मरणादि दुख कौन अनुभव करके नित्य एक रस आनन्द सर्वकाल अनुभव करै है जैसे नंदसुनंदादिक औौर मुक्त भगवान की अनुग्रह से अनादि अज्ञान तासे छूट के चार

प्रकार की मोक्ष 'सालोक्य' अर्थात हरिके साथ उन के लोक में रहनो 'सारूप्य' नाम कौस्तुभ-मणि और लक्ष्मी चिन्ह छोड़के हरिके समान रूप होनो 'सामीप्य' नाम भगवान के समीप रहनो 'सार्ष्टि' नाम समान ईश्वर्य को होनो ये चार प्रकार को मोक्ष अनुभव करैं है और पांचवी 'सायुज्य' जो ब्रह्म में एकाकार के मत वारों की सो अपनी ईच्छानुसार वे अनुभव करैं सम्प्रदायी मतमें सायुज्य शब्द समयोगता का है श्रुति१ में लिखा है कि यह जीव जब लोकों के ऊपर जावै तब लोक के देवताओं के साथ सायुज्य होय है जो सायुज्य नाम एकाकार को समुझैं तौ एक देवतामें सायुज्य होके कैसे निकरे और दूसरेके साथ कैसे होय सायुज्य नाम भगवान के—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

ज्ञानिमुक्तास्तु सनकादिनारदनिम्बादित्यानुयायिनः तत्रनित्यमुक्ताः द्विविधाः पार्षदा आनंतर्य्याश्च पार्षदागरुडादयः आनंतर्य्यास्तु किरीटकुन्डलवंश्यादयः रातेषां तुपुनरीश्वरेच्छानुगुणि तनिजेच्छया वि

१ एतासामेवदेवतानां सायुज्यंसार्ष्टिं समान लोकतामाप्नोतीतिश्रु.तेः

ब्रह्मादिपरिग्रहोमातपित्रादिस्टष्टिरपिभवति नथाहि श्रुतयः स एकधा भवति अपरिमितधा भवति सयदि पितृलोककामो भवति संकल्पादे वास्यपितरः समुत्तिष्टंतिसतत्रपर्य्येति

भाषा कांति प्रकाशिका

साथ सहयोग अर्थात एक पास विराजवेको हैं वे मुक्त महात्मा दो प्रकार के एक गुण-गान करवे वाले भीष्मादि दूसरेसे वापरायण अर्थात बनमाला आदिक वनायवे वारे ये सब देवता ऋषि मनुष्य राजन्यादि भेदसे एक एक में अनेक हैं फेर ये सब चार प्रकार के दुःख से कोई प्रकार महादेव जी के शरण आये फिर श्री शिवजीकी आसाधारण कृपासे मुक्तभये प्राय शिवजी के शरण दुखिया ही आवै हैं तासे वे आर्त्त मुक्त हैं जिज्ञासू श्री ब्रह्मा जी के शरण आये फिर उन की कृपासे मुक्त भये ब्रह्मा जी चार वेद के वक्ता तत्वके ज्ञाता जगत के गुरू जिज्ञासा उनके पास ही ठीक है तासे भृगुआदि से ब्रह्मा के अनुयायी जिज्ञासू मुक्त हैं तैसे ही श्रीलक्ष्मी जी के पास प्राय अर्थार्थी आवै पर श्रीजी अपनी कृपासे

जैसे माता वालक के मुखसे मट्टी निकार के मिश्री देय तैसे अर्थान देके मुक्त करे तासे अर्थार्थी श्री विष्वक सेनादि के अनुयायी है श्री सं कादिक दिगम्वर निर्गुण उन के पास सिवाय ज्ञानी के सकामीको आनोमहान असम्भव तासे ज्ञानो मुक्त सं कादिक निम्वादित्य के अनुयायी है यद्यपि चारो आचार्यों के चारो प्रकारके मुक्त हैं पर वहुधा करके क्रम ऐसोही पायो जाय है तासे श्री आचार्य ने वरनानकियो

यश्च न्क्रीडन् रममाणः इमाल्लोकान्कामान् कामरूप्यनुसं-चरन् सोश्नुते सर्व्वान कामान् सहब्रह्मणा बिाश्चितेत्याद्याः भ्रमति खलुजनोयं संसृतौ माययातेत्वमतिकरुणईशः कृष्णदाता वदान्य सतत मिदमहं त्वां प्रार्थये दीनदीनोन भवतुपुनरस्याजातुशक्तोः प्रसारः ।इतिश्रीपरमहंसवैष्णवाचार्य्य श्रीहरिव्यासदेवविरचितेवेदांत सिद्धांतरत्नांजलौ प्रथमपरिछेदः १

नित्य मुक्त भी दो प्रकारके हैं पार्षद१ आंतरी२(भीतरके) पार्षदतौगरुडादिक आंत-रीकिरीट कुन्डल वंशीआदिक ये सव फेर जब कवहू ईश्वर इच्छा होय अथवा निज इच्छा

तो जगत में विग्रह गृहण करै है और माता पिता रूप सृष्टिभी होय है तामें श्रुतिप्रमाण है सो एक प्रकार को होय अनगिन्ती प्रकार को होय सो जो पितृ लोक की कामना करैं संकल्पमात्र से ही पितरसम्यक प्रकार ले जाय है सो तहां विराजै है हँसै क्रीडाकरै रमणकरै इन लोकों में इच्छा रूप धारण करके विचरे फिर सब काम ब्रह्म के साथ यह ज्ञानी प्राप्त होय है इत्यादि इन श्रुतियों से कितनी शंका मिटै हैं तामें पहिले शंका प्रतिपादन करै हैं कोई ऐसे विचारै है कि श्रीकृष्ण में पुत्रभाव पित्रभाव कांतसख्य येभाव संसार केहैं अयोग्य है यह पहिली शंका कदाचित कोई संसारमें जब अवतार लेवैं तब करभी लेय परिदिव्व धाम वैकुन्ठ गौ लोक में अत्यंत असम्भव है दूसरी शंका यह कि भगवत धाम में जाय के फेर लौटके नहीं आवै तामें श्रुति है सो फिर संसार में नआवर्तन करै भगवान नेभी कह्यो कि जहां जाय के फेर न लौटे सो मेरो परम

धाम हैं वे फेर या प्राकृत विश्व में कैसे आये तीसरे जो भगवान में पुत्रादि भावको प्रीति करके संसारसे छूट गये तो हम भी अपने पुत्रादि को में मन लगायके छूट जावें वे भी तौब्रह्म हैं तामें पहिले समाधान यहहै कि शास्त्र में विधान है कि १जो कोई प्रकार से होय कृष्णामें मन प्रवेश करै श्री कपिलदेव जो अपनी माता देवहूती से बोले कि जिनको मैं आत्मा सुत सखादेव इष्ट सुहृद हूं वे सुगति को प्राप्त होंय और रास-पंच-अध्यायी में शुकदेवजी ने कह्यो कि २काम, क्रोध, भय, स्नेह, ऐक्य सुहृदता से नित्य जो हरि में मन लगावें हैं वे तन्मयता को प्राप्त होय है तन्मयता को अर्थ यह है कि दास भाव वारे अपने दास-भाव से तन्मय होंय व वात्सल्य रस वारे पुत्र भाव से तन्मयता को पावे और भी अपने२ भावसे तन्मयता पावैं गीताजीमें

नस पुनरावर्तते इतिश्रुति

गीता सुयङ्गत्वा न निवर्तते तद्धाम परमंमम

१ श्रीभागवत सप्तमस्कन्धे येन केन प्रकारेण मनः कृष्णे निवेशयेत्
२ दशमे कामात् क्रोधात भयांदस्ने हादैक्यं सौहृदमेव च नित्यं हरौ विदधतेयांतितन्मयतांहिते ।

आपने कह्यो कि जो मेरे को जा भाव से भजन करै ताको मैं तैसे भजन करौं फिर भक्त के भावानुसार नवर्त्त वेसे आपके बचन बृथा होंय और जो भाव जा भक्त को स्थायी हो जाय सो मोक्ष के परे भगवत धाम में भी बनो रहे तासे साधन अवस्था में संसार में जा भाव से भजन कियो सो नित्य अप्राकृत धाम में रहै और सोई भावसे भगवान् उनके साथ वैर्त्त जो माता पिता कान्तादि नित्य न होय तौ अवतार समय में कहांसे आवै प्राकृत अनधिकारी से हरि को सम्बन्ध कैसे वनै दशरथ जो वसुदेवादि पिता कौशिल्या आदि मातादिकों के अनेक जन्म श्रीकृष्ण के माता पिता को सम्बन्ध सुन्यो जाय है प्राचीन यह भाव नहीं तौ कल्प २ में या भाव के करवे बारे कहां से आये और नित्य नहों तौ वैकुंठ गौलोकादि में ये सब दासादि बर्ग कहां से आये और कैसे रहैं :—

और यथार्थ तौ ये सब भाव हरि में ठीक है संसार के मात पिता अन्य सम्बन्धी अधिष्ठान

रूप हरि ही से सच्चे हैं अधिष्ठान विना स्त्री पति
को वेटा वाप को मुंह जरावे और इन भावों
से प्रीति अतिस्वादि की हो जाय है प्रीति तौ
हरि की स्वाभाव से दर्शन करवे वाले मात्र को
होय है पशु पक्षी आदि आत्माराम मुनि आदि
संसार के विषयी इन सव को दर्शन मात्र से
हरि में प्रीति उपजै है फिर जव कोई सम्वन्ध
हो जाय तौ ममता विशेष बढ़ जाय जैसे दूध
में मिश्री इलायची से स्वाद विशेष हो जाय
तासे इन भावों से प्रीति करनो श्रेष्ठ है और
साकार ब्रह्म में मानने ही पड़ैंगे दूसरी शंकाको
समाधान यह है कि जैसे हरि भगवान् अवतार
लेके प्राकृत ब्रह्मांड में आवैं और प्रयोजन की
लीला करैं और प्रकृति से न्यारे रहें तैसे उनको
परिकर आपके संग आवे जावै है जो न आवैं
तौ लीला कोन के संग होय जैसे प्रकृति में
रह के हरि निर्लेप रहै है तैसे उनके दास भी
अकर्मक लीला बिग्रह धारण करके अलग रहैं
जीब को साधन करके ज्ञान होजाय सोई जीव-

प्रकृतिसे न्यारो रहे फिर परिकरको कहा कहनों तीसरे समाधान यह है परीक्षत जी ने प्रश्न कियो कि गोपी श्री कृष्ण को कांत जानती भई हे मुने ब्रह्म नहीं जानती भयी उनके गुण मय देह को उपराम कैसे भयो शुकदेव जी ने उत्तर दियो कि चन्देली को राजा बैर कर के सिद्धि को प्राप्त भयो तौ अधोक्षज की प्यारियों का कहनो सिद्धांत यह है कि श्रीकृष्ण अना-ब्रत ब्रह्म हैं कोई रीति से दर्श स्पर्श आलापादि कोई प्रकार से जाने बिना भी सम्बंध होजाय जीब प्राप्त होंय संसारी पति पुत्रादि आवृत ब्रह्म हैं पारस लोहे को कोई रीतिसे स्पर्श होय सोनो करै मृतिकादि को व्य-बधान होय तौ नहीं सोना होये आचार्यों के शास्त्र में बहुत समाधान हैं बिस्तार भय से नहीं लिखेः—

दो० तुम्हारी माया से भ्रमै जीब जगत के मांहि।
महादयालू कृष्ण तुम करौ कृपा ता पांहि॥

दीन २ मो दास की सदां अर्थना येह।
या माया के जाल को कबहूं न पसरै देह॥

इति श्रीपरमहंस वैष्णवा चार्य्य श्रीहरिव्यास
देव पदकमल भृंग दासानुदास हंसदास
कृत भाषा प्रथम परिच्छेद समाप्त

॥ श्रीराधासर्वेश्वरोजयति ॥
॥ श्रीनिम्बार्कमहामुन्द्रायनमः ॥

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्धस्य

द्वितीय परिच्छेद

प्रारम्भः।

अव्यक्तं कारणंयत्तत्प्रधान मृषिसत्तमैः। प्रोच्यते प्रकृतिः सूक्ष्मा नित्यं सदसदात्मकं। अक्षयं नान्यदाधार ममेयमजरंध्रुवं। हेतु भूत मशेषस्य प्रकृतिः सापरा मुने इत्यादिस्मृति सिद्ध प्रधानं निरूपयति अप्राकृत मित्यादिना अप्राकृतं प्राकृत रूपकंचकाल स्वरूपं तद चेतनं-मतं। माया प्रधानादि पदप्रवाच्यं शुक्लादिभेदाश्च समेपितत्र। तत्रा चेतनत्वं चा ज्ञातृत्वमस्व प्रकाशत्वं वा अस्या अचेतनस्य व्यापार वत्वेपि न ज्ञातृत्वं। अतएव कर्तृत्व भोक्तृत्वादयोपिनसंति तदचेतनं त्रिविधं प्राकृत मप्राकृतं कालश्चेति प्रकृति नामान्योन्य समरूप गुणत्रया श्रयभूतं द्रव्यं गुणाश्च सत्त्वरजस्तमांसि एतद्गुण त्रयाश्रय।

भाषा कांति प्रकाशिका

अव्यक्त जो कारण ताको उत्तम ऋषि प्रधान कहैं हैं सोई स्थूल सूक्ष्मात्मक प्रकृति

नित्य है सो अक्षय है जाको अन्य आधार नहीं मान करवे में न आवै अजर एक रस समग्र की कारण सोई हे मुने पराप्रकृति है या प्रकार स्मृति प्रमाणते सिद्ध जो प्रधानता को निरू-पणकरैं हैं तीसरो श्लोक श्री निम्बार्क भगवान को अप्राकृत व प्राकृत रूप और काल स्वरूप यह अचेत न मानो जाय है माया प्रधानादिक जाके नाम हैं शुक्लादिक भेद सब तामें हैं तामे अचेंत न नाम जाको ज्ञातृत्व अर्थात चेतन धर्म नहीं स्वयं प्रकाशता नहीं या अचेतन को व्योपार तौ है परज्ञातापनो नहीं है तासेकर्ता पनो व भोक्तापनो भी नही है सो अचेतन तीन प्रकार को है प्राकृत१ अप्राकृत२ का लस्वरूप सत्वरज तम ये तीनो गुण परस्पर समान रूप है तिनके आश्रयकी जो द्रव्य(वस्तु) ताको प्रकृतिक हैं।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

भूतमेव द्रव्यं त्रिगुणं प्रधानमिति चोच्यते एतच्चत्रिगुण स्वस्वकर्म वशीभूतानां जीवानां भगवत्स्वरूपतिरोधानं करोति। जीवाशा वासासेन करोति माया चा विद्या च स्वयमेव भवतीतिश्रुतेः तत्र सत्वं नामज्ञानादि कारणं गुण विशेषः इदमेवाति शयितं सत् मुक्ति-

कारणं च भवति राग दुःखादि कारणं विशेषो रजः प्रमादालस्यादि कारणं गुण विशेषस्तमः भगवदिच्छया कालविशेषे त्रयाणामपि गुणानां साम्यावस्था प्रलयः यथैकदेहावस्थित वातादीनां साम्यं एषां विषमावस्था सृष्टिः वैषम्यंचानेकधा अव्यक्ताक्षर तमोरूपविभागः प्रकृतयश्चेतकेचित् नामान्तराणीत्यन्ये इदमेव द्रव्यं विषम ।

भाषाकांतिप्रकाशिका

और इन्ही तीन गुण के आश्रयभूत द्रव्य को त्रिगुण प्रधान वर्णन करै हैं। येई तीन गुण अपने कर्म के बश पड़े जो जीव तिनके हृदय से भगवान को स्वरूप छिपायलेंय हैं सोई श्रुति में है अविद्या के आभास से जीव की प्रतीति करादेय विद्याके आभास से ईश की प्रतीति करादेय माया व अविद्या स्वयं आप होय । तामें ज्ञानादि को कारण जो गुण विशेष सो सत्व है यह सत्व गुण जो बिशेष बढ़ जायतो मुक्तिको कारण होय है राग दुखादिको कारण बिशेष रजो गुण है प्रमादआलस्यादिकों को कारण गुण बिशेष तमोगुण है भगबत इच्छासे जाकाल में तीनों गुणों की समान अबस्था होय तब प्रलय होय है जैसे एक देहमें बातादिक समान स्थित होंय । और इनकी जब बिषम

अवस्था होय तब सृष्टि होय बिषमता अनेक प्रकारकी है अव्यक्त अक्षरको तमरूपसे प्रकृति में बिभाग कोई ताको वैषम्य कहैं कोई और और नाम बतावैं हैं–

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

परिणामा व्रस्थायांव्यक्तमित्युच्यये तच्च व्यक्तं त्रयोविंशति विधंलक्षते तथाहि तत्र प्रथमंप्रकृतिर्भगवदिच्छया महतत्त्वं व्यंजयति अयंचमहान जीवस्य मनस्यध्यवसायं जनयति पुनरयं महान् स्वस्मिन्नहंकारं व्यंजयति अयमहंकारोजीवस्य मनसि-शरीरगोचरामहं बुद्धिजनयति । अहंकारश्याहंकर्त्त व्यंचेतिश्रु तेः अयंचाहंकारशब्दोदंभाहंकार इत्यादे देहेहं बुद्धौगर्वेचप्रयोगेण नाना-र्थकः अयमेवाहंकार उत्कृष्टजनावमानहेतुः शास्त्रेहेयतयोच्यते आत्म वाच्य हंशब्दस्त्वस्मच्छब्दसिद्ध इत्युक्तमधस्तात् अहंकारस्त्रि-विधः वैकारिक तेजसतामसभेदात् तत्रवैकारकः सा

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

यही द्रव्य विषम परिमाण अवस्था के विषय व्यक्त नाम से बोली जाय है सो व्यक्त तेईस प्रकार को देखो जाय तामें पहिले प्रकृति भगवान कीइच्छा से महतत्व को प्रकाश करै है यह महतत्व जीवके मनमें अध्यवसाय (निश्चय) उत्पन्न करै है और महतत्व फिर अपनेमें अहंकार को प्रकाश करै है यह अहंकार

जीव के मन में शरीर की गोचर अहं बुद्धि उत्पन्न करै है अहंकार और अहं कर्तव्य यह श्रुति में हैं या अहंकार शब्द के अनेक अर्थ हैं। दंभ अहंकार देह में अहं बुद्धि गर्व इत्यादि याही अहंकार से प्रतिष्ठित जन को तिरस्कार भी हो जाय है शास्त्र में याको त्याग करनो लिखो है और आत्मा के अर्थ को जो अहं शब्द सो अस्मच्छब्द से सिद्ध है सो पहले कह आये हैं अहंकार तीन प्रकार को है वैकारक तैजस तामस तामें वैकारक सात्विक को कहै हैं।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

त्त्विकाहंकारः तैजसोराजसाहंकारः तामसाहंकारोभूतादिः सात्त्विकाहंकारेभि व्यक्तादेवता दश एकादशंमनः राजसादिन्द्रियाणि अदपवमनः शब्दस्पर्श रूपरस गंध पंचविषय संग दशायां बंधकारणंउक्त विषयान्प्रमुच्य सपरिकरभगवद्विषये प्रावण्येसति विमुक्तिकारणंच भवति अत्रायंविवेकः इन्द्रियंद्विविधं वाह्यमांतरंचेति तत्रवाह्यं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वा घ्राणाख्यानीतिज्ञानेन्द्रिय पंचकं वाक्पाणि पादपायूपस्थाख्यानीतिकर्मेन्द्रिय पंचकंचतत्र श्रोत्रादीनि पंच शब्दस्पर्शरूप गंधानुगृह्णांति दिग्वातार्कवरूणाश्विनोधिष्टातृदेवाः क्रमेण श्रोत्रादीनांवागादीनां तुक्रमेण।

भाषाकांतिप्रकाशिका।

तैजस राजस अहंकार है तामस अहंकार भूतादि। सात्विक अहंकार के प्रगट किये दस

देवता और ग्यारहों मन है राजस अहंकारसे दस इन्द्री और यही मन, जब येइन्द्री और मन पांचविषय शब्द स्पर्श रूप रस गंध को संग पावैं तब जीवको संसारमें बंधन करावैं और जब यही मन अपने परिकर इन्द्रि सहित इन कहेभये विषयों को छोड़के भगवान् की कथा सुन्नो स्पर्श करनो रूप दर्शनरस आस्वाद सौरभ सूंघवेमें लगै तौ मुक्तिको कारण है तामें यह बिचार है इन्द्री दो प्रकार की वाहिरी भीतरी तामें वाहि़रकी कानत्वचा नेत्र जिह्वा नाक ये पांच ज्ञान इन्द्रीहैं वाणी हाथ पांव पायू उपस्थ ये पांच कर्म इन्द्री हैं तामें कानसे सुनै, त्वचा से स्पर्श, नेत्रसे देखै, जिह्वासे स्वादलेय, नाक से सूंघै, इनके अधिष्टाता देवता क्रमसे दिशा पवन, सूर्य, वरुण, अश्वनी कुमार हैं—

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

वन्हींद्रोपे द्रोयमप्रजापतयोधिष्टातृ देवता: पतानिवागादी निवचनादान विहरणोत्सर्गानंदाद्दीनकुर्वंति आंतरेन्द्रियं चतुर्विधंमनो बुद्धि चित्त। हंकार भेदात् तत्रसंकल्प विकल्प वृत्तकंमनोध्या-त्मकं अनिरुद्धोदैवतकं संकल्प विकल्पाधिभूतं द्रव्यस्फुर्णविज्ञानं बुद्धिरध्यात्मंप्रद्युम्नोधिदैवतं संशयविपर्यय निश्चय स्मृतयोधिभूतं

स्वच्छत्वाविकारित्वशांतत्ववृत्तिकत्वंचेतनत्वं चित्तमध्यात्मं वासु-
देवाधिदैवतंचिंतनमधिभूतंअहंकारोध्यात्मं संकर्षणोधिदैवतंअहंताममताधिभूतं एवं बाह्येंन्द्रियेश्वपिबोध्यं तत्वोत्पत्ति क्रमस्त्वेवं तामसाहंकाराच्छब्दतन्मात्रं शब्द ।

भाषाकान्तिप्रकाशिका

वाणी से बोलनो होय देवता अग्नि है, हाथ से वस्तु गृहण करी जाय देवता इन्द्र हैं, पांव से चलो जाय देवता उपेन्द्र है, पायूसेमल त्याग होय देवता यमराज है, उपस्थसे विषयानन्द प्रजापति अधिष्ठाता देवताहैं, और भीतर की इन्द्री चार प्रकार की हैं। मन बुद्धि चित अहंकार तामैं संकल्प विकल्प बृतिवारो मन अध्यात्म है अनिरुद्ध ताके देवता हैं संकल्प विकल्प अधिभूत है द्रव्यको स्फुरणताके विज्ञान की बुद्धि अध्यात्म है प्रद्यु म्न अधिदैवत हैं संशय विपर्यय निश्चय स्मृति येसब अधिभूत हैं स्वच्छपने को विकार न होवे को शांतपने को बृत्तिको चेतनता को चित्त अध्यात्म है वासुदेव देवता हैं चिंतवन करनो अधिभूत है अहंकार अध्यात्म है संकर्षण अधिदैवत हैं अहंताममता अधिभूत हैं याही प्रकार वाहिर की इन्द्रि में जानno-

तन्मात्रादाकाशः आकाशात्स्पर्शतन्मात्रं स्पर्शतन्मात्राद्वायुः वायोरूपतन्मात्रं रूपतन्मात्रात्तेजः तेजसो रसतन्मात्रं रसतन्मात्रात् आपः अद्भ्यो गंधतन्मात्रं गंधतन्मात्रात्पृथ्वीति केचित्तु तामसाहंकारात्क्रमेण शब्दादितन्मात्राण्यंतरीकृत्य पंचभूतान्युत्पद्यंतेइत्याहुः अन्येतु भूताद्भूतोत्पत्तिमाहुः सिद्धांते तु सात्विकाहंकारान्मनोवैकारिकादेवाश्च राजसादिन्द्रियाणि तामसाद्भूतानि तन्मात्राश्चेति सृष्टिक्रम इत्युक्त मधस्तात एवमपरेपि स्वस्वसम्प्रदायानुरोधेनोत्पत्तिक्रममाहुः आकाशादिपंचभूतेषु शब्दादिपंचगुणानामुत्तरोत्तरमेकैकगुणाधिक्यंबोध्यं तत्राकाशस्य शब्दोगुणः

भाषाकान्तिप्रकाशिका

सोउत्पत्तिको क्रम या प्रकारको है तामस अहंकार से शब्द तन्मात्र होतो भयो, तासे आकाश भयो, आकाशते स्पर्शतन्मात्रा, तासेवायू वायूसे रूपतन्मात्रा, तासे तेज होतो भयो, तेजसे रसतन्मात्रा ताते जल होतो भयो, जलसे गंध तन्मात्रातासे पृथ्वी होतीभयी कोई ऐसे कहैं हैं कि शब्दादि जो तन्मात्रा हैं तिनको भीतर करके तामस अहंकार से ही क्रम करके पांच भूतों की उत्पत्ति होती भयी और कोई भूतों से भूतोंकी उत्पत्ति होयहै ऐसे कहैं हैं सिद्धांत में तौसात्विक अहंकार से ही मन और वैकार का देवता होंय हैं राजससे इन्द्री तामस से

भूतानि व,तन्मात्रायह सृष्टिको क्रमवर्णन कियो ऐसे ही और भी अपनी अपनी सम्प्रदाय के अनुरोध से उत्पतिको क्रम कहैं हैं आकाशादि पांच भूतोंके बिषय शब्दादि पांच गुणको आगेमें

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

वायोः शब्दस्पर्शौतेजसः शब्दस्पर्शरूपाणि अपांशब्दस्पर्शरूपरसाः पृथिव्याः शब्दस्पर्शरूपरसगंधाः पंचापीतिविवेकः एतेनाकाशस्यैव शब्दोविशेषगुण इत्यपास्तं महत्तत्वमारभ्य पृथ्वी पर्य्यंतंसमष्टिरित्युच्यते यथासेनावनराश्यादिव्यवहारः तेषु एकदेशमादाय क्रियमाणं कार्यं व्यष्टि रित्युच्यते यथा वृक्ष धान्यादिव्यवहारः पंचीकरण प्रक्रिया पुराणादिषु प्रसिद्धा पंचीकरणं तुभगवान्हरिरीश्वरः पृथिव्यादिपंचापि भूतानिसृष्ट्वापेकैकं भूतंद्विधाविभज्यद्वयोर्भागयोः स्वभाग मेकं निधायद्वितीयं भागं पुनश्चतुर्धा करोति तां श्च-तुरोभागान् भूतान्तरेषु चतुर्षु संयोजयति

भाषाकांतिप्रकाशिका

एक२ गुण अधिक जानने होयगो तामें आकाशमें गुण शब्दहै वायूमें शब्दस्पर्श दोगुण हैं तेज में शब्द स्पर्श रूप तीन गुण हैं जल में शब्द स्पर्श रूपरस चार गुण पृथ्वीमें शब्द स्पर्श रूप रस गंध पांचौ हैं याते जो कोई कहे कि आकाश को ही शब्द विशेष गुण है सो दूर कियो महतत्वसे लेके पृथ्वी पर्यंतको समष्टि कहैं हैं जैसे सेना, वन, राशि इनको व्यवहार और तिनको

एक देश ले के जो कार्य कियो जाय ताको व्यष्टि कहैं हैं जैसे बृक्ष धानादि पंचीकरण ताको कहैं कि भगवान हरि ईश्वर पृथ्वो आदि पांच भूतन को रचकर एक२ भूत के दो२ भाग किये दोनों भाग में एक भाग आपनो धरो दूसरे भाग के फिर चार किये तिन चारों भाग को फिर चारों भूतन के अंतर में मिलावैं हैं ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

एवंचिकीर्षितेषु पंचस्वपि भूतेषुएकैकस्य भूतस्यार्द्धं स्वभागः द्वितीयमर्द्धं चतुर्णां भूतानां भागेषु संयोजनमिति त्रिवृत्करणश्रुतिश्चात्र मूलं पृथिव्यादिव्यपदेशस्तु वैशेष्यात्तद्वाद इतिन्यायात्सं-भवति तत्र प्रकृतिमहदहंकारं पंचभूतानि शरीरस्योपादानकारणानि इन्द्रियाणि प्रत्येकमसंगतानि प्रतिपुरुष भिन्नानि भोगायतनं शरीरं किंच मनएव कर्मेन्द्रियैःसहितं सन्मनोमयकोशइयुत्च्यते प्राणादिपंचकंकर्मेन्द्रियै सहितं सत् प्राणमयकोश इत्युच्यते प्राणापानसमानोदानव्यानाइति बायूपंचकं तत्र हृदयस्थानवर्त्तीप्राणः अपानः पायूपस्थवर्त्ती समानो नाभि—

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

याही प्रकार पांचौ भूतोंमें करवेकी इच्छा एक भूत को आधेभाग अपने करलेनो और आधेभाग को चार भूतनके भागमें मिलावनो त्रबृत करनी श्रुति याप्रकरणमें मूल है पृथ्वी आदिको मिष ताकी विशेषताको बाद है या

न्यायसे उत्पन्न होय है तामें पृथ्वी महद अहंकार पांच भूत ये शरीरके उपादान कारण हैं इन्द्री आपुस में मिली नहीं हैं और पुरुष पुरुषमें न्यारी न्यारी हैं यह शरीर भोगको घर है यह मनही कर्म इन्द्रियनके साथमिलके मनोमय कोश बोलोजाय है प्राणादि जोपांच कर्मइन्द्रीके साथ मिलके प्राणमय कोश बोलो जाय है प्राणअपान समान उदान व्यान ये पांच प्राण बायू हैं ता में हृदय के स्थान में रहै ताको प्राण कहें हैं पायु उपस्थ में रहे ताको अपान कहैं हैं–

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

स्थानवर्त्ती अयं प्राणापानाभ्यांच समो भूत्वाऽशितचतुर्विधान्नादिकंपचति उदानंकंठस्थानवर्त्ती विष्वयामनवान्सर्वशरीरवर्त्ती व्यानः केचित्तु नागकूर्मकृकलदेवदत्तधनंजयाख्याःपंचान्येववायवःसंतीत्याहुः नागउद्गिरणकरःकूर्मउन्मीलनकरःकृकलःक्षुधाकरः देवदत्तो जृंभणकरः धनंजयः पोषणकरः एतेषांप्राणादिष्वंतर्भावः अन्नविकारित्वाद्देतोः शरीरमन्नमयकोशइत्युच्यते विज्ञानमयोजीवः आनन्दमयः परमात्मा मायावादिनस्तु अन्नमयप्राणमयमनोमयविज्ञानमयानन्दमयाः पंचापि कोशा इति वदंति तच्चिंत्यं ब्रह्मणो नानंदमयत्वप्रसंगाच्च अत्रायंविशेष अचेतनं द्विविधं नित्यमनित्यंत त्र नित्यं कालमहदहंकार

भाषा कांति प्रकाशिका

नाभिस्थान में रहै ताको समान कहैं १ चारोओर यमनकरै सब शरीरमें वर्तै सोव्यान

है२ यही समान प्राण अपानके साथ सम होके खाये भये भक्ष भोज्य लेह्य चोष्य चारप्रकारके अन्नको पचावै है३ कोई ऐसे कहैं हैं कि नाग कूर्म कृकल देवदत्त धनंजय नामकी पांच अन्य वायू हैं नाग खाये भयेको उगलावै है कूर्मपल कखोलावै है कृकल भूखलगावै है देवदत्तजम्हाई लिवावै है धनंजय पोषणकरै है इन पांचोंको प्राणादिके अंतर्भाव हैं अन्नको विकारही शरीर को कारण है तासे याशरीरको अन्नमय कोश कहैं हैं जीव विज्ञानमय है परमात्मा आनन्द मय है मायावादी तो अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमय आनन्दमय येपांच कोशकहैं तामें यह चिंतवन करनाहै कि ब्रह्ममें अनानन्दको प्रसंग आजाय है यामें यह विशेषहै अचेतन दोप्रकार कोहै नित्य अनित्य तामें नित्य तौ काल महद

गुणऽपंचीकृतभूततन्मात्रेन्द्रियप्राणरूपंएतद्विकारभूतमनित्यं तत्र कालस्य विकारा: परमाणु मारभ्य परार्द्ध पर्यन्ता अतीतानागतवर्तमान युगपच्चिरक्षिप्रादिव्यवहारहेतुकाला: तत्र सूर्यो यावत्परमाणुदेशमतिक्रामति तावत्काल: परमाणु: द्वौपरमाणु:न्द्व्यणुक: त्रयोद्व्यणुकास्त्रसरेणु:त्रसरेणुत्रिकंत्रुटि:त्रुटिशतंवेध:त्रिभिर्वेधैर्लव:त्रिलवोनिमेष:त्रिनिमेष: क्षण: पंचक्षण: काष्टा पंचदशकाष्टालघु: पंचदश लघूनि नाडि

का द्वि नाडिके मुहूर्त्तः नाडिका षट् सप्त वा प्रहरः चत्वारश्चत्वारो-यामाः अहोरात्रौ पंच दशाहानि पक्षः शुक्लः कृष्णश्च तौ द्वौ मासः द्वौमा सावृतुः षण्मासाअयनं अयने द्वे संवत्सरः एवमेवाग्रे

भाषाकान्तिप्रकाशिका

अहंकार तीनगुण अपंचीकृतभूत तन्मात्रा इन्द्रियप्राणरूप यहविकार भूत सब अनित्य है तामें कालको विकार परमाणु से लेके ब्रह्माके पचास वर्ष जाको परार्द्ध कहैं तापर्यंत है होगयो होयगो होरह्यो है युगपद् नाम एक ही वार में बहुत काल जल्दी इत्यादिक व्यवहारको कारण काल है सूर्य जितने समय में परमाणु देशको उलंघनकरै सो काल परमाणु बोल्यो जाय है दो परमाणु को द्व्यणुक कहैं तीन द्व्यणुकको एक त्रसरेणु तीनत्रसरेणुकी एकत्रुटि सौत्रुटि को वेध तीन वेधन को एकलव तीन लवको एक निमेष (एकपलकको काल) तीन निमेष को एक क्षण पांच क्षणकी एक काष्ठा पन्दरह काष्ठा की एक लघु पन्दरह लघुकी एक नाडिका दो नाडिका को एक मुहूर्त छय वा सात नाडिका को एक प्रहर चार चार प्रहर

की दिन व रात पन्दरह दिनको एक पक्ष शुक्ल कृष्ण पक्ष दोनों मिलके महीना दोमहीनाकी एक ऋतु छय महीनाको एक अयन दो अयनको एक संवत्सर ऐसे ही और आगे जानलेनो–

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

प्यूह्यं तथाच कालस्वरूपं श्रीभागवते कालस्रोतोतोजवेनाशु ह्रियमाणस्य नित्यदा परिणामिनामवस्थास्ताजन्मप्रलयहेतवे अनाद्यं तव तानेन कालेनेश्वरमूर्त्तिना अवस्था नैवदृश्यंते वियति ज्योतिषामिवेति मूर्त्तिः प्रतिमा ईश्वरस्य मूर्त्तिः ईश्वर मूर्त्तेः तेन ईश्वरप्रतिमास्थानीयेनेत्यर्थःअतएव प्रकृतिपुरुषाभ्यां कालस्य विभागोप्युपपन्नतरः एतत्प्रकारपरि शोधने श्रीमद्भागवते आयुर्हरति वैपुंसामुद्यन्नस्तं चयन्नसौ

भाषाकान्तिप्रकाषिका

अर्थात् दक्षिण अयन देवतान की रात्रि उत्तर अयन देवतान को दिन।वारह हजार वर्ष सतयुगादि चारों युग की संख्या है तामे चार हजार वर्ष सतयुगकी संख्या आठ सौ वर्ष संध्या के हैं तीन हजार वर्ष त्रेता के छयसौ वर्ष संध्यो के हैं दो हजार वर्ष द्वापर के चारसौ वर्ष संध्या के एक हजार वर्ष कलियुग दोसौ संध्या के हजार चौकड़ी इन युगन की वीत जावै तब ब्रह्मा जी को एक दिन तैसे ही परिमाण की

रात्रि याही संख्या करके सौवर्ष ब्रह्माकी आयुहै ताको दो पराद्ध कहैं एक पराद्ध बीत गयो दूसरो पराद्ध को यह पहलो कल्प है वाराह कल्प याको नाम है एक ब्रह्मा के दिन में चौदह मनु चौदह इन्द्र चौदह सप्तऋषि होंय हैं एक मन्व-न्तर इकत्तर चौकड़ी को होयहै कालको स्वरूप श्रीमद्भागवत में लिखो है नित्य शीघ्री हरो जाय जो जगत तामें परिणाम वारेन की अवस्था जन्म प्रलय की कारण होंय हैं जाको आद्य अन्त नहीं ऐसो जो काल सोई ईश्वर की मूर्त्ति है ताकर के अवस्था नहीं दिखाई पड़ै जैसे आकाश में ज्योतिन की। तामे मूर्ति नाम प्रतिमा को है ता काल रूप ईश्वर की प्रतिमास्थानीय करके यह अर्थ आयो तासे प्रकृति व पुरुष इन दोनों से:-

तस्यत्तैय त्क्षणो नीत उत्तमश्लोकवार्तयेत्याद्युक्तप्रकारेण भग वद्भजनप्रवृत्तिरुपपद्यते किंचैवं संपदैश्वर्यादीनामनित्यत्वनिश्चये कालनिरूपणमुपयुज्यते महदादीनां विकार उपचयांशः स चानित्य ब्रह्माण्डं च महदादीनां विकारः कार्य्यं तत्र चतुर्दशभुवनात्मकं तावि

भूर्भुवः स्वर्महर्जनः तपसत्यमितिएतन्नामकान्युपर्युपरिवर्त्तमानानि सप्त अधोधो वर्त्तमानानि अतलवितलसुतलरसातलतलातल महातलपातालाख्यानि चसप्त ब्रह्माण्डं तदंतर्वर्त्ति जरायुजांडजादिचतुर्विधशरीरसमष्टिव्यष्टिरूपमन्नपानादिकं च सर्वमनित्यमेव किंच वेदा पंचपंचाशद्वर्णाश्च नित्या एवनित्यावेदाः समस्ताश्चेत्यादि

भाषाकान्तिप्रकाशिका

काल को विभाग ठीक होजाय है इतने प्रकार के शोधवे में श्रीमद्भागवत के वचन हैं सोई द्वितीय स्कंध में कह्यो ये सूर्य्य महाराज उदय अस्त होके पुरुषन की आयू हरैं हैं एक जो क्षण हरि भगवान की वार्त्ता सुनवे में व्यतीत भयो ता क्षण विना अथवा जाको क्षण भी उत्तम श्लोक की वार्त्ता में गयो ताके विना याके कहे से या जीव की भगवत भजन में प्रवृति उत्पन्न होय है याही रीति से संपद ऐश्वर्य को अनित्य समझने के अर्थ काल को निरूपण करनो उचित है महादादिकन को पढ्यो भयो विकार अनित्य है महादादिकन के विकार्य को जो कार्य है ताके चौदह भुवन हैं उनके नाम भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपलोक, सत्यलोक ये ऊपर

के हैं तैसे नीचे वर्तमान सात लोक अतल, वितल सुतल, रसातल, तलातल, महातल, पाताल ये नाम हैं ब्रह्माण्ड और ताके अंतवर्ती जरायुज अंडजादि चार प्रकार के शरीर समष्टि व्यष्टि रूप अन्नपानादि यह सब अनित्य है एकपंचास (५१) अक्षरः—

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

प्रमाणात्नित्यत्वंचात्र कूटस्थतयाद्यन्तशून्यत्वं तच्चवेदादीनामस्त्येव पुराणादयोयेनांशेननित्यास्तमंशं नित्यवर्गेनिधाय येनांशेनानित्यास्तमनित्य वर्गेनिधाय नित्यादिविभागः समुन्नेय इतिसर्वमनवद्यं अत्र च कार्य्यकारणयोस्तंतुपटात्मकं परस्परंभिन्नद्रव्यद्वयमितिवदन्त्यतोभेदएवेतिकेचिद्वदंति अन्येतु परमाणवएवतथातथासन्निविष्टाः पटादिबुद्धिविषयाः नतुपटोनामस्तीतिब्रुवते अपरेतुकारणात्कार्य्यंनातिरिच्यतेकिंत्वेकस्मिन्नेवद्रव्येकार्यकारणवस्थेभवतइत्याहुः कार्यकारणभूतयोस्तंतुपटयोर्भेद इति उक्तं गुणगुणिनोरपिभेदाभेदौज्ञातव्यौयदिगुणःसत्यपिद्रव्येस्वयंनश्यति यथाम्रफलश्यामत्वादितत्र भेदाभेदोप्रतिपत्तव्यौ यदिचगुणः यावत्कालं द्रव्यंवर्त्तते

भाषाकांतिप्रकाशिका।

और वेद ये नित्य हैं वेद समस्त नित्य हैं यह प्रमाण है नित्य ताको कहै जो कूट-स्थ होय और आद्य अंत करके शून्य होय सो लक्षण वेदन को है पुराणादिक जितने अंशमें नित्य हैं ता अंशको नित्य वर्ग में धरौ और

जितने अंश में अनित्य हैं ताको अनित्य वर्ग में धरके नित्यादिक को बिभाग करलेनो या प्रकार से सिद्धांत निर्दोष है अब यास्थल में कोई ऐसे कहैं हैं कि तंतुपटात्मक कार्य व, कारण ये दोनों द्रव्य परस्पर न्यारी न्यारी हैं याते भेदही है अन्य ऐसे कहैं हैं कि परमाणु ही तहां तहां प्रवेश होके पटादि रूपसे बुद्धि में प्रतीतहोय है पट नामकोई है ही नहीं अपर ऐसे कहै हैं कि कारणते कार्य अलग नहीं है एक ही द्रव्यमें कार्य,व कारण दोनो अवस्था होजायं है कारण जो तंतु कार्य्य जो पट इन दोनों को भेदा भेद यह ठीक भयो ऐसे ही गुण और गुणी को भेदा भेद जानवे योग्य है गुणी जो द्रव्य नाम वस्तु तामें जो गुण है सो तावस्तु के रहते पहिले नष्ट होजाय जैसे आम्वके फल रहते रहते श्यामता ताको गुण नष्ट हो जाय—

तावत्तिष्ठतितदत्यंताभेदएव केचित्तु गुणगुणिनोरत्यंतभेदइतिवदंति अपरंतु परमाणवएवरूपादिस्वभावाः गुणगुणिभावोनास्तीत्याहुः

तश्चिंत्यं एवं क्रियःक्रिया वतोर्जातिव्य क्योरंशांशिनोःशक्तिशक्तिमतो-
र्भेदाभेदौ अत्यंताभेदश्च प्रतिपत्तव्यः तत्रस्यापिघटेचलनक्रियाया
अभावात्घटचलनयोर्भेदाभेदौभवतःचेतनक्रियायाश्च नित्यत्वेनचेतन-
स्य तत्क्रियाया अत्यंताभेदःब्रह्महत्यादिनाजातेर्नाशात् ब्राह्मणत्वपिं-
योर्भेदाभेदौसंभवतः घटत्वघटयोरत्यंताभेदः यस्मिन्नंशेपगते अंशि-
नोवस्थानंतेनांशेनभेदाभेदौ अन्यैरंशैरत्यंताभेदएवएवंशक्तिशक्तिमतो-
रत्यंताभेदोभेदाभेदौ चज्ञातव्यौगुणक्रियाजातिशक्तिसादृशादयः

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

तब भेदाभेद समुझनो और जोगुण जब तक गुणी रहै तब तक रहै तब अत्यंत अभेद समुझनो कोई गुण और गुणीको अत्यन्त भेद बतावैं हैं अपरऐसे कहैं हैं कि परमाणुही को रूपादि स्वभाव है न कोईगुण है न कोई गुणी है सोचिंतवन योग्य है ऐसे ही क्रिया और क्रिया वान को जाति व्यक्तिको अंश अंशीको शक्ति शक्तिमानको भेदाभेद और अत्यन्त अभेद जान-नो जैसे घटतो है पर चलवेकी क्रियाको अभाव है तासे घट में और चलन क्रियामें भेदा भेद दोनों है चेतन में क्रियाको नित्यत्व है तासे ता की क्रिया को अत्यन्त अभेद है ब्रह्म-हत्यासे जाति नाश होजाय है तासे ब्राह्मणपने में व पिन्डमें भेदा भेद दोनों हैं घटको और घटपने

को अत्यन्त अभेद है जाअंशके गयेपर भी अंशी बनो रहे ताअंशसे भेदा भेद है अन्य अंशन कर के अत्यन्त अभेद है ऐसे ही शक्ति व शक्तिमान में अत्यन्त अभेद वभेदा भेद जानवे योग्य है–

सिद्धान्तरत्नाञ्जालिपूर्वार्द्ध

सर्वेपिद्रव्यस्यधर्माः आत्मानात्मपरमात्मेतितत्वंत्रयमित्युक्तं तत्रतत्वंनाम अनारोपितंप्रामाणिकमिति यावत् तच्चद्रव्यमद्रव्यं-चेतिद्विविधं तत्रद्रव्यंचपुनर्द्विविधं जडमजडंच तत्राजडमपिद्विविधं-ईश्वरो जीवश्चेति तत्राजडंवस्तुजीवश्च निरूपितः अद्रव्यं तु सत्त्वंर-जस्तमः शब्दस्पर्शरूपरसगंधाः संयोगः क्रिया जातिशक्ति सादृश्यं चेतित्रियोदशविधं सर्वेषामपिपदार्थानां पदार्थत्रयांतर्भावान्न पदार्था-तंरविरोधः अचेतनमेववस्तु मायाविद्यादि पदवाच्यंशक्तिशक्तिम-तोरभेदादित्याह मायाप्रधानादि पदप्रवाच्यमिति जीवेशा वाभासेन करोति मायाचाविद्याचस्वयमेवभवतीतिश्रुतेः शुक्लादि भेदाइति

भाषाकान्तप्रकाशिका

गुणक्रिया जाति शक्तिसादृश्यादि ये सब द्रव्यके धर्म हैं। आत्मा अनात्मापरमात्मा ये तीन तत्व कहे तत्व वाको नाम है जामें और को आरोप न होय जैसे गांवकी तलाईमें विष्णु पदीको आरोप सो तत्व नहीं भागीरथी तत्व है ताही में प्रमाण है सो तत्व दो प्रकार को द्रव्य अद्रव्य द्रव्य भी दो प्रकार को जड अजड़ तामें अजड़ भी दो प्रकार को जीव

ईश्वर तामे अजड़ जो जीव सो तौ निरूपण किये। अव अद्रव्य कहैं सत्व रजतम शब्द स्पर्श रूप रस गंध संयोग क्रिया जाति शक्ति साद्दश्य ये तेरह प्रकार के हैं सब पदार्थों को तीन ही पदार्थमें अंतर्भाव है तासे पदार्थ अन्तरमें विरोध नहीं है अचेतन ही वस्तु माया अविद्यादि शब्द से बोली जाय है शक्ति व शक्तिमानको अभेद है या रीतिसे माया प्रधानादि पद बोले जांय हैं जीव और ईश को आभास अर्थात् विद्या अविद्या से प्रतीत कराय देय–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णामित्यादि श्रुतेःसमशब्दःसर्वपर्यायः समेपि सर्वेपि तत्र तस्मिन्नचेतने सत्वरजस्तमोमयमचेतनमित्यर्थः देवी ह्येषागुणमयी मममायादुरत्ययेति स्मृतेः प्रत्यक्षादिविषयत्वान्प्राकृतमचेतनमादौनिरूपितम् नन्वेतदयुक्तं तथाहितत्रानुमानं विमतं मिथ्यादृश्यत्वाज्जड़त्वात्परिच्छिन्नत्वाच्छुक्तिरूप्यवदिति मिथ्यात्वं च सदसत्वानधिकरणत्वं तच्च सत्वविशिष्टासत्वाभावो वा सत्वात्यंताभावासत्वात्यंताभावरूपं धर्मद्वयं वा सत्वात्यंताभावविशिष्टासत्त्वात्यंताभावरूपं विशिष्टं वेति चेन्न सदेकस्वभावेजगति विशिष्टाभावस्येष्टत्वात् नद्वितीयः सत्त्वासत्वयोरेकाभावे परस्य सत्वावश्यक –

भाषाकांतिप्रकाशिका

माया अविद्या आपही होय है यह श्रुति है ता अचेतन सत्व रज तम वारे में शुक्लादि

भेद सब हैं समशब्दसर्व वाचक है मायाके स्वरूप की श्रुतिभी है अजन्मा एका (मुख्या) लाल ऊजरी कारी ऐसी समान प्रजा रचै है श्री गीता जी में भी कह्यो है यह मेरी माया खेलवे वारी गुणमयी बड़ी दुरत्यय है प्राकृत अचेतन प्रत्यक्ष दरसे है तासे पहिले प्राकृत अचेतन को लिखैं हैं

अद्वैतवादीकी आशङ्का है ननुइत्यादि वाक्य से यह पहिला कहा हुआ ठीक नहीं है इस को दृढ़ करनेके लिये अनुमान करता है अनुमान में पक्ष साध्य हेतु, दृष्टान्त ये चार कहे जाते हैं विमतं यह पक्ष है सकल प्रपञ्च को विमत बोलते हैं मिथ्यात्व साध्य है दृश्य त्व हेतु है जडत्व परिच्छिनत्व यह दोनों भी मिथ्यात्व के साधक हेतु हैं शुक्तिरूप्यदृष्टान्त है भाव यह है जैसे शुक्तिरूप्य मिथ्या है इसी तरह उक्त तीनों हेतुवों से सब जगत मिथ्या है अब विचार करता है मिथ्यात्व किस को कहते हैं सत्व को और असत्व को अनधि करण मिथ्या है ।

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

त्वेन व्याघातात् अतएव नतृतीयः ननु सत्त्वासत्त्वयोः परस्पर-विरहरूपत्वानंगीकाराद्व्याघातः परस्परं विरहव्याप्यत्वादिकं न नऽयाहतिकरं गोत्वाश्वत्वयोः परस्परविरहव्याप्ययोरुभयं अभाव-सत्त्वात् किंतु कचिदुपाधौ सत्त्वेनाप्रतीयमानत्व मसत्त्वंत्रिकालाबा-ध्यत्वंसत्वंतयोरभावः साध्य इति चेन्न असल्लक्षणस्यासंगत्रह्मण्यति-व्याप्तेः तस्याप्युक्तासत्वांगीकारे लक्षणे सद्भिन्नेत्यस्यवैयर्थ्यापत्तेः शब्दाभासेन तुच्छस्यापिकचिदुपाधौ सत्त्वेन धीसंभवाच्च उक्तसत्त्वा-भावस्य शून्यवादिनापि जगति स्वीकाराच्च लाघवात् सत्त्वासत्त्वयोः परस्पराभावत्वस्यैवौचित्याच्च नापिसार्वत्रिक त्रैकालिकनिषेध

भाषाकान्तिप्रकाशिका

इसमें फिर विचार करता है सत्वविशिष्ट असत्त्वाभाव रूपहै किम्वा सत्त्वाभाव असत्वाभाव रूप धर्म द्वयस्वरूप है किम्वा सत्त्वाभावविशिष्ट असत्त्वाभाव रूप है यह तीन विकल्प हैं इनमें से प्रथम विकल्प को खण्डन करता है सत्त्व-विशिष्टासत्त्वा भाव जगतमें मानते ही हैं क्योंकि जगतको स्वभावसे सत्स्वरूपता है उसमें सत्त्व-विशिष्टा सत्त्व कैसे रह सक्ता है दूसरा विकल्प भी ठीक नहीं असत्त्वाभाव सत्त्वस्वरूप है जब कि असत्त्वाभाव माना उस अवस्थामें सत्त्वा भाव नहीं आसक्ता है किन्तु सत्त्व ही रहि जाता है इसी तरह सत्त्वाभाव रहने पर असत्त्व

ही रहि जाता है असत्त्वाभाव नहीं आसक्ता सत्त्वाभाव असत्त्वस्वरूप है याते तीसराविकल्प भी नहीं कह सकते इसी प्रकार व्याहति दोष आवैगा ननु इत्यादि ग्रन्थ से पूर्वोक्तव्याघाता दि दोषों को वारण करता है—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

प्रतियोगित्वं मिथ्यात्वं निषेधस्यतात्विकत्वेअद्वैतहानि रता-त्विकत्वेसिद्धसाधनापत्तेःव्यावहारिकत्वेपि तस्य वाध्यत्वेन तात्विक सत्त्वाविरोधित्वेनार्थान्तराच्च नच ब्रह्मस्वरूपोनिषेधःभ्रमकालानिश्चि-तस्य सापेक्षस्य निषेधस्य भ्रमकालनिश्चितनिरपेक्षनिर्विशेष ब्रह्मरूप-त्वासंभवात्किंचस्वरूपेणनिषेधेऽसत्त्वापत्तेः पारमार्थिकत्वेन निषेध-प्रतियोगित्वस्य निर्धर्मके ब्रह्मण्यपि सत्त्वात् एतेन स्वात्यंताभावाधि-करणएवप्रतीयमानत्वं मृषात्वमिति निरस्तं सएवाधस्तात् सएवोप-रिष्टादिति प्रतीयमानो पाधिके असंगत्वात्केवला ।

भाषाकान्तिप्रकाशिका

सत्वाभाव असत्त्वस्वरूप नहीं असत्त्वाभाव सत्त्वरूप नहीं परस्पर विरह व्याप्यत्वरूप सत्वा सत्वमानने से भी व्याहतिका अवसर नहीं। गोत्व अश्वत्व परस्पर बिरह के व्याप्यहै अर्थात् गोत्वके अभाववारे अश्वमें गोत्व नहीं रहता ऐसे ही अश्वत्वके अभावशाली गौमें अश्वत्व नहीं रहता दोनों का अभाव उष्ट्रमें रहता है इससे

सत्व और असत्वका पूर्वोक्त अर्थ नहीं बन सकता अब उनका अर्थ लिखते हैं किसी स्थान में जो प्रतीय मान नहीं है वह असत्व है और जिसका तीन कालमें बाधनहीं सो सत्व है इन दोनोंका अभाव साध्य करते हैं ऐसा कहना भी अयुक्त है असतका लक्षण ब्रह्म में अतिव्याप्त है कारण यह है कि ब्रह्म भी असंग है यदि उसे भी उक्त असत्व मानोंगे उसके लक्षण में सद्भिन्न त्व बिशेषण व्यर्थ होताहै शब्दा भासते तौ गगन कुसुम भी किसी स्थान में सत्प्रतीतिका विषय हो सकता है उक्त सत्वाभाव तौ शून्यबादी भी जगतमें मानता ही है लाघवसे सत्वासत्वका परस्पर अभाव रूप मानना ही उचित है।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

न्वय्यत्यंताभावप्रतियोगिनि ब्रह्मण्यतिव्याप्तेः नच ज्ञाननिव-र्त्यत्वं मिथ्यात्वं सेतुदर्शन निवर्त्य ब्रह्महत्यादेरिव सत्यस्य संसार-स्य ब्रम्हज्ञाने ननिवृत्ते दृष्टत्वात् नापि सद्भिन्नत्वं मिथ्यात्वं सत्वं च प्रमाणसिद्धत्वं प्रमाणत्वं च दोषासहकृतज्ञानकारणत्वं घटादेरपि क्लृप्तदोषहीनप्रत्यक्षादि सिद्धत्वात् कल्प्यदोषस्य ब्रह्मबोधकेष्वेपि

संभवात् सर्वप्रमाणगम्येत्वद्भिप्रेंतेशुद्धेऽतिव्याप्तेश्चेति मिथ्यात्व-स्य मिथ्यात्वे प्रपंचः सत्यः स्याद्ब्रह्मवत् मिथ्यात्वस्य सत्यत्वेतेनै-वाद्वैतहानिःतद्वदेव विश्वस्यापि सत्यत्वोपपत्त्या दृश्यत्वादिकमप्रयोजकं स्यात् दृश्यत्वं च नताग्रद्वृत्तिव्याप्यत्वं वेदांतजन्यवृतिविषये ब्रह्मणि व्यभिचारात् ।

भाषाकान्तिप्रकाशिका

सार्व त्रिकत्रैकालिक निषेध प्रतियोगित्वरूपमिथ्यात्व भी नहीं कहसकते जो निषेध तात्विक (सत्य) माना जाय तौ अद्वैत हानि है अतात्विक निषेध मानै तबभी सिद्ध साधन दोष है व्यवहारिक मानैं तौ तात्विक सत्यका विरोधी न होने से अर्थान्तिर दोष होजायगा निषेधको ब्रह्मस्वरूप मानने से कहे भये दोष का परिहार हो सकता है परन्तु जिस कालमें भ्रान्ति है उस कालमें निषेधका निश्चय नहीं है उसी भ्रम काल में निर्विशेष ब्रह्मस्वरूपका तौ निश्चय है फिर कैसे ब्रह्मस्वरूप होसकता है और भी दोष हैं कि जो स्वरूपसे निषेधक होंगे तौ असतकी समान प्रपञ्च भी मानना होगा अर्थात् जैसे गगन पुष्प असत है ऐसे ही

प्रपञ्च भी असत् कहना पड़ेगा इस लिये स्वरूप से निषेध नहीं कर सकते परमार्थिकत्व रूप से निषेधप्रतियोगता निर्धर्मक ब्रह्ममें भी है इससे परमार्थिक निषेधभी नहीं करसकते प्रपञ्चके अत्यन्ता–

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

अन्यथा ब्रह्मपराणां वेदांतानाँ वैयर्थ्यप्रसंगात् नापि जडत्वं हेतुः तद्धिनाज्ञानत्वं आत्मनि व्यभिचारात तथाहि ज्ञानं स्वविषयं परविषयं वा नाद्यः त्वयानंगीकारान्नांत्यः मोक्षे पराभवात नतु परिछिन्नत्वं हेतुः तच्च देशतः कालतो वस्तुतश्चेति त्रिविधं तत्र देशतः परिछिन्नत्वमत्यंताभावप्रतियोगित्वं कालतः परिछिन्नत्वं ध्वंसप्रतियोगित्वं वस्तुतः परिछिन्नत्वमन्योन्याभाव प्रतियोगित्वमिति चेन्न आद्यं तयो ब्रह्मणि व्यभिचारात् मध्यमस्यध्वंसकालादौ भागासिद्धे सप्रकारकधीवाधार्हत्वं अध्यस्त धिकदोषप्रयुक्तभानत्वं प्रतिभासमात्रशरीरत्वं चोपाधिः देहात्मैक्याद्यध्यासस्यापिसप्र—

भाषा कांति प्रकाशिका

भाव का अधिकरण जो ब्रह्म उसमें जो प्रतीयमान है वह मिथ्या है ऐसे मिथ्याकाल क्षण नहीं कर सकते ब्रह्म में अति व्याप्ति है श्रुति कहै है वही ऊपर वही नीचे इत्यादि प्रतीतिगोचर उपाधियों से ब्रह्मको असङ्गत्व बोधन किया गया है जब ब्रह्म असङ्ग है तौ

उस का अभाव सर्वत्र हैं उस अभावका प्रति
योगी ब्रह्म ही है जिस की ज्ञान से निवृति
होती है सोमिथ्या है यह भी मिथ्यात्व का लक्षण
नहीं बन सकता जैसे ब्रह्म हत्या की निवृति से
तुदर्शनसे होती है ऐसे सत्य संसार की निवृत्ति
ज्ञानसे दिखाई पड़ती है सतसे जो भिन्न है सो
सव मिथ्या है यहभी कथन असत है क्योंकि उस
में विचार होगा सत्वक्या है कदाचित कहें कि
जो प्रमाणों से सिद्ध है वही सत्व हैं प्रमाण–
उसे कहते हैं कि जो दोष निरपेक्ष ज्ञान का
कारण होय घटादिकभी दोष हीन प्रत्यक्षादिक
प्रमाणोंसे सिद्ध है मिथ्यालक्षण ग्रस्त न हुआ–

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

कारकभेदविषयकज्ञानेन वाधयोग्यत्वाञ्च तत्रसाध्याव्याप्तिः नचसप्रकारकेतिअध्यस्ताधिकेति च विशेषणं व्यर्थं तद्भिन्नैवोपाधेः साध्यव्यापकत्वात तावन्मात्रस्य तु साधनव्यापकत्वान्नोपाधिकत्व-मिति वाच्यम् विशिष्टाभावस्यातिरिक्तत्वेन वैयर्थ्याभावादिति सप-रिकरमिथ्यात्व पंचलक्षणीनिरासः

भाषाकान्तप्रकाशिका

कल्पित दोष तौ ब्रह्म वोधक वेद में भीर

है है समस्त प्रमाणोंका अगोचर आपके अभिमत जो शुद्ध ब्रह्म उसमें अतिव्याप्ति है मिथ्यात्व को जो मिथ्या कहें तौ प्रपञ्च सत्य होना चाहिये ब्रह्मकी तरह यदि मिथ्यात्व को सत्य कहें तौ अद्वैत हानि होजायगी ऐसे विश्वके भी सत्य होजाने पर मिथ्यात्वके साधक जो दृश्यत्वादि हेतु वे कार्यकारी न होयंगे दृश्यत्व उसको कहें जो बृतिका विषय हो परन्तु इस प्रकार दृश्यत्व का निरूपण बनै नहीं ब्रह्ममें व्यभिचार आवे है कैसे कि ब्रह्म भी वेदान्त जन्यबृत्तिका विषय है मिथ्यात्व वहां रहै नहीं दृश्यत्व हेतु रह गया इसी रीतिसे व्यभिचार हुआ साध्यके अभाव वाले जो हेतु रहि जावै उसै व्यभिचार कहें हैं यदि वेदान्त-जन्यबृति का विषय ब्रह्मको न मानै तो ब्रह्मके प्रतिपादन करने वाले वेदान्त बचन व्यर्था होजायंगे। जड़त्व भी हेतु नहीं बनता यदि जड़त्व अज्ञान स्वरूप कहा जाय तौ आत्मामें व्यभिचार है कैसे कि ज्ञान को स्वविषयक मानौ कि पर

विषयक । स्वविषयक तौ आप को अङ्गीकार नहीं पर विषयक कहौ तौ मोक्ष में पर ही उपलब्ध नही होय । इसी तरह परिच्छिन्नत्वभी हेतु नहीं बनता यह परिच्छिन्नत्व देश व काल और वस्तु से होय है–

देश से परिच्छिन्नत्व सो होय है जोकि अत्यन्त अभाव का प्रतियोगी होय काल से परिच्छिन्नत्व सो होय है जो कि ध्वंस का प्रतियोगी होय वस्तु से परिच्छिन्नत्व सो है जो कि अन्योन्य भावका प्रतियोगी होय परन्तु इनतीनों प्रकार से ठीक नहीं बनै देश और वस्तुसे परिच्छिन्नत्व ब्रह्ममें व्यभिचारी है कैसे कि ब्रह्ममें मिथ्यात्व रूपजो साध्यसो तौरहताही नहीं कालसे परिच्छिन्नत्वभी नहीं कहसक्ते ध्वंस कालादिमें भागासिद्धि होयहै क्योंकि पक्षको एकदेश जोध्वंसादि उसमें कालसे परिच्छिन्नत्व नहीं रह सक्ता । अब उन मान में उपाधि दिखलावैं हैं सप्रकार कवुद्धि से वाध्य के योग्य होय और अध्यस्त से अधिक दोष प्रयुक्त

ज्ञानत्व और प्रतिभास मात्र शरीरत्व ये तीन ऊपाधि हैं। देह और आत्मा का ऐक्या ध्यास भी सप्रकारक भेद विषयक ज्ञान से वाध्यके योग्य है याते उपाधिसाध्य काव्यापकहो जाता है क्योंकि उपाधि वही है जो किसाध्यका व्यापक साधन की अव्याप्य होय यद्यपि सप्र-कारक और अध्यस्ताधिक इन दोनों विशेषणों के विना भी उपाधिसाध्यका व्यापक होजाता है परन्तु साधनका अव्यापक नहीं बन सक्ता किन्तु व्यापक ही होजाता है इस से उक्त दोनों विशेषण व्यर्थ हैं और उपाधिभी संगत नहीं होसकै तथापि विशिष्टाभावके अतिरिक्त मानने से दोनों विशेषण व्यर्थ नहीं होसक्ते उपाधिभी चरितार्थ होजाता है या प्रकार परि-कर सहित मिथ्यात्व पञ्चलक्षणी निरासकरी

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अथा प्राकृतं निरूप्यते अप्राकृतं विकारशून्यं वस्तुद्वयांस्तु विशेषः भक्तजनैहरियेर्पितस्य प्राकृतस्यापि भोजन सामाग्र्यादेर प्राकृ-तत्त्वं जायते इति अतएव नप्राप्य प्राकृतः संसारोवर्त्तते इतिकेचित-वदंति वैकुंठादि गत शुकशारिका दीनामप्राकृति लौकिकशरीरादि

रूपम प्राकृतमेवा चेतनं तश्च ज्ञान जनकं इदमेव स्वप्रकाशरूपं शुद्ध सत्त्वद्रव्यमित्युच्यते अतश्च सुगंध पुष्पांजनोद्वर्त्तन वस्त्रभूषण विमान गोपुर चत्वर मंडपादि सर्वशुद्धसत्त्वद्रव्यात्मक मेव श्रीमद्भागवते। न वर्त्तते यत्ररजस्तमस्तयोः सत्वंचमिश्रं न च कालविक्रमः। नयत्र मायाकिमुता परेहरेरनुव्रतायत्र।

भाषा कांति प्रकाशिका

ताके अंतर अप्राकृति निरूपण करें हैं। अप्राकृत नाम विकार शून्य वस्तु तामें यह और विशेष है कि भक्तिजनों ने हरि को प्राकृत वस्तु भी प्रेम से अर्पण करी भोजन सामिग्री आदि सो भी अप्राकृत हो जाय है ऐसे जो कोई कहैं हैं सो भी ठीक है भगवत संवन्ध को अचिंत प्रभाव है याते अन्य भी अप्राकृत संसार वर्त्तें है वैकुंठादिक में जो तोता मैना आदि अप्राकृत लौकिक शरीरादि रूप के हैं सो अप्राकृत अचेतन है ताको ज्ञान की उत्पन्न करवे वारी स्वयं प्रकाश शुद्ध सत्व द्रव्य वर्णन करी हैयाते सुगंध फूल अंजन उद्वर्त्तन वस्त्र भूषणादि विमान गोपुर चौराहे मंडपादि सब शुद्ध सत्व द्रव्य के हैं सोई श्रीमद्भागवत में जब ब्रह्मा जी को भगवान ने अपने लोक के दर्शन कराये

सुरा सुराचिंताः श्यामावदाताः शतपत्रलोचनाःपिशंगवस्त्राः सुरुचः सुपेशसः॥ सर्वेचतुर्बाहवउन्मिषन्मणिप्रवेकनिष्काभरणाःसुवर्चसः॥प्रवालवैदूर्य्य मृणालवर्च्चं सांपरिस्फुरत्कुण्डलमौलिमालिनां॥भ्राजिश्नुभिर्यत्परितो विराजते लसद्विमानावलिभिर्महात्मनां॥विद्योतमानप्रमदोत्तमाद्युभिः सविद्युद भ्रावलिभिर्यथान भइति भागवते॥ प्रकृतिरिहकालः शुद्धसत्त्वंविभागइतिकिलकथयित्वात्रम्हतत्त्वं परस्तात्॥ कथयतिकमनीयं श्रीमदाचार्य्यदेवः प्रवरपरमहंसस्वामिभावाधिशाली इतिश्री.परमहंसवैष्णवाचार्य्य श्रीहरिव्यासदेवविरचितेवेदांतरत्नांजलौ द्वितीयपरिछेदः

भाषाकान्तिप्रकाशिका

तहां श्रीवैकुन्ठ को रूप वर्णन हैं जा वैकुंठ में रज तम नहीं तिन दोनों को मिलो भयो सहचर जड़ सत्व जहां नही तहां हरि के सेवक रज तम वाले असुर सत्व गुणी देवता जिन को वन्दना करैंवे रहैं काल को पराक्रम जहां नहीं सब की मूल माया ही जहां नहीं श्याम कांति कमल लोचन पीत बस्त्र सुन्दर मनोहर चार भुजा वाले प्रकाश मान मणिन के समूह की धुकधुकी भूषण पहरे तेज के पुंज बिराजैं हैं। मूंगा की वैदूर्य्य मणि कमल नाल को सी कान्ति कुण्डल कानन में झलकें किरीटन की पंक्ती मस्तक पर ऐसे महात्मा प्रकाश मान जिन

पर वैंठे उन बिमानन की पंक्ति सेवैकुंठ में शोभा
विजुली समान चमकैं प्रमदा उत्तमा तिन की
कांति प्रकाशमान तिन से वैकुण्ठ ऐसो दरसै
जैसे विजुली वादर सहित आकाश दरसै

दो० प्राकृति अचेतन काल पुन शुद्ध सत्त्व समुदाय
ये विभाग वर्णन किये श्री आचार्य राय ॥
ब्रह्मतत्व सबते परे सुन्दर परम अनूप।
स्वामिभाव हियधारके कहत आचार्य भूप ॥

इति श्री दासानुदास हंसदास कृत भाषा प्रवन्ध द्वितीय परिच्छेद समाप्तम्।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

तृतीय परिच्छेद प्रारम्भ।

सुरचित शुभवेशौ भूषितौ भूषिताभिरधि कृतपरहासौ नंदयंतौ जनान स्वान श्रुति भिरपि विमृग्यौ गोपिका नंगपालौ विमल कमल नेत्रौ नौमिभक्त्यैक नेत्रौ १ तत्रतावदात्मावारे द्रष्टव्यः श्रोतव्योमंत व्योनिदिध्यासितव्य इत्यादिना श्रवणादिकं च भक्तिसहकृतं साधनत्वे नाभिहितं तत्र कोयं श्रवणादिविधिः त्रयोहिविधेः प्रकाराः अपूर्वं विधि नियमविधिः परिसंख्या विधिश्चेति तत्र कालत्रयेपि कथमप्य प्राप्ति फलको विधिर पूर्व विधिः यथाव्रीहीन् प्रोक्षतीति प्रोक्षणस्य संस्कार —

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

सुन्दर रूप अनूप हैं दोऊ भूषण की छवि अंगन मांहो । कर परिहास विलास भरे स्वजनन को आनन्द कराहीं । वेदहु ढूढ़ थके नहि पाये श्रीराधा कृष्ण दिये गलवाहीं । अमल कमल से नेत्र बने वे प्रेमहि के आधीन सदाहीं । तामें श्रुति कहे है कि अरे आत्मा जो श्रीकृष्ण दर्शन करवे योग्य है वा दर्शन करवे को साधन श्रवण करनो मनन करनो और ध्यान है इत्यादि भक्ति सहित जो हरिचरित्र सुनो सो साधन विधान कियो तामें श्रवणादि कौन विधि है या विचार होवे पर तीन बिधि के प्रकार हैं अपूर्व बिधि नियम बिधि परिसंख्या विधि तामें तीन काल जो बस्तु कैसे भी प्राप्त नहीं ता फल की विधि को अपूर्व बिधि कहैं जैसे धान प्रोक्षण करै जैसे पानी के छींटा दे के संस्कार करै यह प्रोक्षण रूप संस्कार कर्म की

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

कर्मणो विधिं विनामानांतरेणाप्राप्तेः पक्षे प्राप्तस्याप्राप्तांशपरिपूर्णो विधिर्नियमविधि यथा व्रीहीनऽवहंतीति अत्र विध्यभावेपि पुरोडाश प्रकृति द्रव्याणांव्रीहीणांतन्डुल निष्पत्त्याक्षेपादेवावहनन प्राप्ति-

भंविष्यतोति न तत्प्राप्त्यर्थो विधिः किंचाक्षेपादेवावहननप्राप्तौतद्वदेव-लोकावगत कारणत्वा विशेषान्नखदलनादिरपि पक्षेप्राप्त यादिति अव-हनना प्राप्तांशसंभवात्तदंश परिपूर्णफलकः द्वयोः शेषिणोरेकस्य शेष-स्य वा एकस्मिन शेषिणोर्द्वयोः शेषयोर्वानित्य प्राप्तौ शेषांतरस्य-शेष्यं तरस्यवा ।

भाषाकान्तिप्रकाशिका

विधि विना और और प्रमाणों से अत्यंत प्राप्त नही है ताको यह अपूर्व विधि विधान करै है। एक पक्ष में जो प्राप्त है तामें अप्राप्त अंश को पूर्ण करै ताविधि को नियम विधि कहै हैं जैसे धान कूटै तहां विधि के विना ही पुरोडाश प्रकृति द्रव्य जो धान तिनको कूट नो प्राप्त भयो ताको प्राप्ति में विधि नहीं है काहे से कि चांवल निकारवे के आक्षेप से ही कूटनो प्राप्त भयो किंतु नखों से छील के भी चांवल सिद्धि होंय हैं या पक्ष की प्राप्ति से कूटवे को अंश नहीं प्राप्त होय ता अंश की परिपूर्ण फलवारी नियम विधि है अर्थात् चांवल छर के ही निकारै नख से दलन न करै दो शेषी की नित्य प्राप्ति में अथवा शेष अन्तरवा शेषी अन्तर की निवृति करवे वाली फल की तीसरी विधि परिसंख्या है

नि वृत्तिफलकोविधिस्तृतीयः॥ यथाअग्नि चयने इमामगृभ्णन् रशनामृतस्ये त्यश्वाभिधानीमादत्ते इत्यत्राश्वरशना गृहणंगर्द भरश नागृहणं चानुष्टेयं तत्रइमामगृभ्णान्निितिमं त्रौंलिंगादेवरशनागृ हणप्रका शन सामर्थ्यरूपात्गर्द भरसनागृहण इवाश्वरशनागृहणे पिनित्यं प्राप्नो तीति नतत्प्राप्तित्यर्थेंयंविधि :किंतु लिंगविशेषाद्गर्धं भरशनागृहणेपिमं त्र : प्राप्नु यादितितन्निवृत्यर्थः।यथा वाज्योतिष्टोमेशंय्व न्ताप्रायणीयां संतिष्ट तेनपत्नीः संयाजयंतो त्यत्राद्यवाक्ये नशय्यंत त्वेविहितेतदु त्तरभाव्यंगोपकरणे प्राप्ते नपत्नी रितिवाक्येनपत्नी संयाजभिन्ने पुस्क वाक्समि ष्टियजुरा दिषुकर णंपरिसंख्यायते इवंतुपूर्व पक्षरीत्यो दाहृतं

भाषाकान्तिप्रकाशिका

अर्थात दो की प्राप्ति में एक की निषेध करने वाली सो परिसंख्या विधि है जैसे अग्नि चयन यज्ञ में यह डोरी ग्रहण करै यह एक मंत्र है अश्व की डोरी ग्रहण करै यह दूसरो मंत्र है एक घोड़ा दूसरो गदहा तामें पहिले मंत्र से दोनों डोरी पकड़नो प्राप्त भयो मंत्र को लिङ्ग डोरी पकड़ने की सामर्थ्य प्रकाश करै है तासे गदहा की डोरी की तरह घोड़ा की डोरी पकड़नो नित्य प्राप्त है तासे अश्व रसना प्राप्ति के अर्थ यह विधि नहीं है किंतु घोड़ा के नाम लेवे से गर्दभ की डोरी पर यह मंत्र प्राप्त हो जाय ताकी निवृत्ति की विधि है जैसे अग्नि

ष्टोमयाग के विषय में शव्यंता प्रायणीया सन्तिष्ट
तेन पत्नी संया जयंती ऐसो लिखो है ताको
अर्थ यह है कि प्रायणीय नाम की इष्टि
शव्यंन्त पाठ करके समाप्त करनी चाहिये फिर
पत्नी संयाज का निषेध है यहां परशय्वन्ताया
आद्य वाक्य से शय्वंतत्व विधान किये से ताके
उत्तर में होवे वाले जितने भी पत्नी संयाजादि
अंग हैं सब को हीन करनो प्राप्त भयो फिर
न पत्नी इत्यादि पीछे के दूसरे वाक्य से पत्नी
संयाज का ही निषेध ठीक रहा या कारण ते
न पत्नीः या वाक्य से पत्नी संयाज्य से न्यारे
सूक्त वाक्य समिष्टिय जुरादि में न करवे की
व्यावृति करै हैं अर्थात् सूक्त इत्यादि करनो
पत्नी संयाजन करनो यह वोध करै हैं यह तो
पूर्व पक्ष की रीति से उदाहरण दियो नहीं तो

• अन्यथा संतिष्टतेइत्य करण शास्त्रस्य प्रत्यक्षत्वेन प्राप्ति परिसं-ख्यास्यात्साच स्वार्थ त्याग परार्थ कल्पना प्राप्तिबाधादि रूपांनतदो-षदुष्टा विधि[illegible]त्यंतमप्राप्तौ नियमः पाक्षिकेसति तत्रत्वन्यत्र च प्राप्तौ परिसंख्येतिगीयतेयस्य शब्दतो अर्थतोवा अयोग व्यावृति फलं सनिय सन्निधिः नियम परिसंख्यातिरिक्त फलक विधित्वमपूर्व विधित्वं एषामुदाहरण सांकर्येपि न क्षतिरितिनव्याः श्रवणं नाम वेदा[illegible]तत्रा-

क्यानि भगवत्तत्व प्रतिपादका नीतितत्वदर्शिन आचार्याद्वाक्यार्थ ग्रहणं एवमाचार्योपदिष्टार्थस्यस्वात्मन्येवमेवयुक्तमितिहेतुतःप्रविष्टापनं

भाषाकान्तिप्रकाशिका

तिष्टतेयो अकरगा शास्त्र के प्रत्यक्ष होवे से प्राप्ति परिसंख्या हो जायगी जो वस्तु कबहूं नहीं प्राप्त भई ताके लिये अपूर्व विधि है पक्ष में नियम है अन्यत्र प्राप्ति में परिसंख्या गाई जाय है जो शब्द से अर्थ से अयोग को दूर करै सो नियम बिधि है नियम परिसंख्या इन दोनों से न्यारी फलवारी अपूर्व विधि है यद्यपि इनके उदाहरणों को संकोच है तथापि हानि नहीं यह नबीन कहै हैं श्रवण ताको नाम है कि वेदान्त के वाक्य जिनमें भगवत्तत्व प्रति पोद्य है तिनको तत्वदर्शी आचार्य के बचन से अर्थ ग्रहण करनो और आचार्य के उपदेश किये भये अर्थ को यह युक्त हो है ऐसे जान के अपने मन के बिषय प्रवेश करनो

मननं अस्यार्थस्यानवरतभावनानिदिध्यासनं एतादृश श्रवणादेरप्राप्तत्वादपूर्वविधिरेवार्थंविचार्य्य स्यब्रह्मणः परमात्मनोभगवतो जगज्जन्मस्थिति मोक्षलयकारणत्वंलक्षणं यतोवाइमानि भूतानिजायंते येन जातानिजीवंति यत्प्रयंत्यभिसंविशंतीतिश्रुत्याभिहितंतत्रजगज्ज-

न्मस्थिति मोक्षलयेष्वे कैककारणत्वंलक्षणमनन्यगा मित्वात् तथा चलक्षण चतुष्टयमेवेदं परस्पर निरपेक्षमिति तत्वं श्री रामानुजस्तु सृष्टि स्थिति प्रलयकारणत्वं समुदितिमेक कमेधलक्षणमितिस्वभाष्ये आहतन्न व्यावर्त्याभावात् तदनुयायिनस्तुयत्प्रतियंतीति प्रलयः अभिसंविशं तीतिमोक्ष इति वदं

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

वाको नाम मनन है और फिर वाअर्थ को निरन्तर भाव नाकरनो सो ध्यान है ऐसो श्रवणादिक पहिले नहीं प्राप्त भयो तासे या को अपूर्व विधि कहैं विचार करवे योग्य जो ब्रह्म परमात्मा भगवानता को लक्षण जगतकी उत्पत्तिपालन मोक्षलय है सोई श्रुति ने कह्यो है जाते ये सब भूतानि उत्पन्न होंय है जाकर के जिये हैं जासेमोक्ष होय है जामें लय होंय है तामें जगत के जन्मस्थित मोक्षलय में एक एक कारण को लक्षण अनन्य गामी है तैसे ये चारौ लक्षण परस्पर निर्पेक्ष हैं यह तत्व है श्री रामानुजसृष्टि स्थिति प्रलय को कारणत्व एकही लक्षण है ऐसे अपनी भाष्य में कहते भये सो नहींहै काहे से कि व्यावर्त्तको अभाव है उन के

न्तितदपि नप्रलया नंतरमोक्षाधिकारिणो संभवात् मायावादिन-स्तु एकमेवलक्षणमिदमभिन्ननिमित्तोपादान तयाद्वितीयं ब्रह्मोपल क्षयति ब्रह्मणश्चोपादानत्वमद्वितीयकूटस्थ चैतन्यरूपस्य न परमाणू नामिवारंभकत्वरूपं नवाप्रकृतेरिवपरिणामत्वरूपं किंत्वविद्ययावियदादिप्रपंचरूपेणविवर्त्तमानत्वलक्षणं। वस्तुतस्तुतत्समसत्ताकोऽन्यथा भावः परिणामस्तद्समत्ताको विवर्त्त इतिवा कारण समलक्षणोऽन्यथाभावः परिणामस्तद्विलक्षणोविवर्त्त इतिवा कारणाभिन्नकार्य परिणाम।

भाषा कांति प्रकाशिका

अनुयायी प्रतियंति नाम प्रलयको अभि-संविशंति नाम मोक्षको बतावैं हैं सो भी नहीं बन सकै प्रलय के अनंतर मोक्षके अधिकारी कहांसे आवैं माया वादी तौ एकही यह लक्षण अभिन्न निमित्त उपादान ताकर के ब्रह्म को लक्षकरावै हैं अद्वितीय कूटस्थ चैतन्यरूपब्रह्म को उपादानत्व परमाणू को तरह आरंभकत्व रूपसे नहीं है और जैसे प्रकृति परिमाण को प्राप्त होय तैसे भी नहीं है किन्तु अविद्या करके आकाशादिक प्रपंचरूप से विवर्त्तमानत्व लक्षण है वस्तु करके तासमसत्ता के अन्यथा भाव होवे को परिणाम कहैं ता असमसत्ताको विवर्त्तक हैं ऐसीभी है अथवा कारण समलक्षण

के अन्यथा भाव होवे को परिणाम कहैं तासे जों विलक्षणताको विवर्त्तक हैं अथवा कारण से अभिन्न जो कार्य

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

स्तदभेदं विनैव तदव्यतिरेकेन दुर्वचं कार्यं इति विवर्त इति वा विवर्तपरिणामयोर्विवेक इत्याहुः। तत्र धर्मांतरमुत्थाप्य व्यावर्त्तकत्वरूपोपलक्षणत्वस्य निर्विशेषेऽसंभवात्उक्त लक्षणस्यविवर्त्तस्य विकल्पासहत्वात् माध्वास्तु उत्पत्तिस्थितिसंहारानियतिज्ञानमावृत्तिः। बंधमोक्षौ च पुरुषाद्यस्मात्सहरिरेकराडिति स्कांदोक्तया जन्माद्यस्य यत इति सूत्रस्यादि पदेन नियत्यादयोपिलक्षणानिसंतीति लक्षणाष्टकं स्वीकर्वंति तच्चिन्त्यं यतो वेति श्रुतौअनुक्तत्वात प्रमाणांतरेण लक्षणांतराण्यपि वक्तुंशक्यत्वाच्च।

भाषाकांतिप्रकाशिका

सो परिणाम है तासे अभेद विना ही तासे व्यतिरेक कहिवे में न आवै जो कार्य सो विवर्त है यह विवर्त्तपरिणाम दोनोंको विचार है। तामें यह कहनो है धर्मांतर को उठाय के व्यावर्तकत्वरूप को उपलक्षणपनो निर्विशेषमें नहीं वनै जाके लक्षण कहे ऐसे विवर्त्त में विकल्प नाम भेद सह्यो नहीं पड़े माध्वसम्प्रदायी उत्पत्तिस्थिति संहार नियत ज्ञान आवृति बंध मोक्ष या जीव के जा पुरुष से होंय सो हरि एक ही विराजन वारो है ये स्कन्द पुराण

के कहे लक्षण (जन्मादिजाते) या सूत्र में जो आदि पद है ता आदि शब्द से नियतादि भी लक्षण ब्रह्म में हैं ऐसे लक्षण आठ स्वीकार करें हैं तामें इतनो

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अथ यथोक्तचतुर्भिरेव लक्षणैर्लक्षयितस्य ब्रह्मणो निर्दोषत्वमनंतानवद्यकल्याणगुणगणाकरत्वंमुपास्यत्वं नित्यविग्रहं चाह स्वभावत इत्यादिना स्वभावतोपास्तसमस्तदोषमशेषकल्याणगुणैकराशिं। व्यूहांगिनं ब्रह्म परं वरेण्यं ध्यायेमकृष्णं कमलेक्षणंहरिं य आत्मापहतपाप्मा विजरोविमृत्युर्विशोकोऽविजिघित्सोऽपि पासः सत्यकामः सत्यसंकल्पः यः सर्वज्ञः स सर्ववित्तदैक्षतसे यं देवत्रीक्षतलोकान्नुसृजा इति नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानामेको बहूनां यो विदधातिकामानतं देवतानां परमं च दैवतं पतिं पतीनाम्

भाषाकान्तिप्रकाशिका

विचार है कि यतोवेति या श्रुति में नहीं है और दूसरे जो प्रमाण से ठीक करौ तौ और भी बहुत लक्षण कह सकै हैं अथ शब्द मंगल वाचक है जैसे कहे चार गुण तिन लक्षण से लक्ष्य कियो जो ब्रह्म ताको निर्दोष बतावैं हैं सो अनन्त सुन्दर कल्याण गुण गणों की खान है नित्य विग्रह है सो एक श्लोक से आचार्य देव वर्णन करैं हैं जाके स्वभाव से ही समस्त दोष दूर भये अशेष कल्याण गुणों

की एक राशि व्यूह जाके अंगमें रहै परमब्रह्म श्रेष्ठता को हम ध्यान करें हैं सो कमल नेत्र भक्तके मन हरवेवाले श्रीकृष्ण हैं जो आत्मा अपहत पाप्मा जाको जरा नहीं मृत्यु नहीं शोक नहीं भूक नहीं पिपासा नहीं सत्यकाम सत्यसंकल्प जो सब को ज्ञाता सो सब जानै सो देखतो भयो सो यह देवता देखती भई लोकन कोरचे तो भयो याप्रकार नित्यों को नित्यचैतनों को चेतन–

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

परमं परस्तात् विदामदेवं भुवनेशमीड्यं नतस्यकार्य्यं करणां च विद्यते ज्ञाज्ञौद्वावजावीशानीशौ तमीश्वराणां परमं महेश्वरं नतत्समश्चाभ्यधिकश्च द्रश्यते परास्य शक्ति र्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानवलक्रिया चेत्याद्याः श्रुतिर्गोहेयगुणान् प्रतिषिध्य अनन्यापेक्षमहिमैश्वर्यस्य सत्यकामत्व प्रमुखान् कल्याणगुणगणान् स्वरूपस्यैव ब्रह्मणः स्वाभाविकान् वदन्ति नचनिर्गुणवाक्यविरोधः प्राकृत हेयगुणविषयत्वात्तेषां निर्गुणं निरंजनं निष्फलं निःक्रियं शांतं इत्यादीनां किंच समस्त हेय गुणरहितानां च निर्गुणवाक्यनां सगुणवाक्यानांच विप्रमपहतपाश्मेत्यादि अपिपास इत्यंतेनहेय

भाषाकान्तिप्रकाशिका

जो एक वहुत को कामदेवै सबदेवतावोंको परम दैवत पतिनको भी पति परमसे पर स्तात सो भुवनको ईशस्तुति करवेयोग्यता को कार्य

कारण नहीं जानो जाय ता देवको हम जानेहैं एक अज्ञानी दूसरो सर्वज्ञ दोनो अजन्मा एक ईश दूसरो अनीश सोईश्वरोंको परम महेश्वर ताके समानही कोई नहीं अधिक कहां सेआवे ताकी नाना प्रकारकी पराशक्तिसुनी जायंहैं वे स्वाभाविकी ज्ञान वल क्रियादिक हैं इत्यादि श्रुति त्यागवे योग्यगुणोंको निषेध करके जो कोईकी अपेक्षा नकरै ऐसी महिमा ईश्वर्य वारे के सत्यसंकल्पादिप्र मुख कल्याण गुण समूहोंको ब्रह्मके स्वरूप भूतस्वाभाविक वतावें हैं यामेंकोई शंका करैकि ब्रह्ममें तौ निर्गुण वाक्य प्रमाणित हैंगुणकैसे वनै तौ विरोध नहीं प्राकृत त्याज्य गुण कोनिषेधहैं वेनिर्गुण वाक्य जैसे निर्गुण

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

गुणान् प्रतिषिध्यसत्यकामः सत्यसंकल्पः इति ब्रह्मणः कल्याणगुणान्विदधतीयं श्रुतिरेव विवेकं करोतीति सगुणनिर्गुण-वाक्ययोर्विरोधाभावादन्यतरस्यन मिथ्यात्वाशंकापि भीषास्माद्वातः पवत इत्यादिना ब्रह्मगुणानारभ्यते ये शतमित्यनुक्रमेण क्षेत्रज्ञानं दातिशयमुक्त्वा यतोवाचो निवर्तंते अप्राप्यमनसासह आनंदंब्रह्मणो विद्वानिति श्रुतेः ब्रह्मणः कल्याणगुणाणंत्यमत्यादरेण व्रवीति सोश्नुते सर्वान्कामान्सहब्रह्मणा विपश्चितेतिब्रह्मवेदन फलमवगम-यद्वाक्यंपरस्य विपश्चितो ब्रह्मणो गुणानंत्यं वदति विपश्चितो ब्रह्मणा सहसर्वान् कामानश्नुते काम्यंत इति कामाः—

निरंजन निष्कल निष्क्रिया शांत इत्यादि समस्त त्यागवेयोग्य गुण तिन करके रहितनिर्गुण वाक्य व सगुण वाक्यों की विषय अपहत पाप्मा यह आदिमें और अपिपास यह अंतमें त्यागवे योग्य गुणोंको निषेध करके सत्य काम सत्य संकल्प येब्रह्मके कल्याणगुणोंकी बतावन बारी यह श्रुतिही विवेक करैहै सगुण निर्गुण दोनो प्रकारके वाक्यको विरोध नहींहै अन्य रीतिसे भीमिथ्यापने कीशंका नहीं याब्रह्मकेभय सेपवन चलै सूर्य उदयहोय अग्नि जरावैहै, मृत्यु धावैहै इत्यादि ब्रह्मके गुण आरंभ करैं हैं मनुष्योंके आनन्द से सौगुणो आनन्द क्रम से ऊपर वतावते भये क्षेत्रज्ञको आनन्द अतिशय कह्यो वाणी मन करके सहित जाको नहीं पायके लौट आवै सो ब्रह्मके सम्बन्ध को आनन्द जानवे वारी यहश्रुतिहै ऐसे ब्रह्मके अनंत

कल्याणगुणाः ब्रह्मणा सह तद्गुणा न्सर्वा नश्नुते इत्यर्थः ननु यस्या मतं तस्य मतं विज्ञातमविजानता मिति ब्रह्मणो ज्ञानाविषयत्वमुक्तमि-ति चेन्न ब्रह्मविदाप्नीति परं ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवतीति ज्ञानान्मो-

क्षोपदेशात् ज्ञानं चोपासनात्मकं उपास्यचब्रह्म सगुणं तथाहि श्रुतयः वेदाहमेतंपुरुषं महांतमादित्यवरणां तमसः परस्तात् तमेव विद्वानमृत इह भवति नान्याः पंथा अय नायविद्यते सर्वे निमेष ज ज्ञिरे—

भाषाकान्तिप्रकाशिका

कल्याणगुण श्रुति आदर से बतावैं हैं सो विपश्चित ब्रह्मके साथ सब काम भोगै है ब्रह्मजानवे के फल बतावन वारे वाक्य परम ब्रह्मके अनंतगुण बतावैं हैं ब्रह्म के साथ सब कामना को प्राप्त होय चाहे जांय तिनको नाम काम हैं सो ब्रह्मके कल्याणगुण हैं सो ब्रह्मके साथ यह ज्ञानी तिन सब कल्याण गुण को प्राप्त होय है तामें शंका है कि जाको मत नहीं ताही को मत है जिनने नहीं जान्यों वेई जानते भये या प्रकार ब्रह्म ज्ञान को विषय नहीं है ऐसे कहैं हैं सो नहीं ब्रह्मको जानन वारो पर को प्राप्त होय है ब्रह्म को जाननवारो ब्रह्म होय है ज्ञान से ही मोक्ष उपदेश करी है सो ज्ञान उपासन आत्मक है और उपास्य सगुणब्रह्म है तामें श्रुति प्रमाण हैं मैं ऐसे महांतपुरुष को जानतो भयो आदित्य वरणहै तम से परे

ताही को जानके विद्वान अमृत को प्राप्तहोय हैं कोई और रास्तो मोक्ष का नहीं है सब पुरुष के निमेष से होते भये बिजुली—

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

विद्युतः पुरुषादधि ष्ठितस्ये शीकश्च न तस्य महद्यशः एवं विदुरमृतास्ते भवंतीत्याद्याःएतेन निर्विशेष ब्रह्मज्ञानादेवाविद्यानिवृत्ति रित्यपास्तं यतो वाचो निवर्त्तंते अप्राप्यमनसा सहेति ब्रह्मणो नंतस्यापरिमितगुणस्य वाङ्मनसयोरेता वदिति परिछेदायोग्यस्य च श्रवणेनब्रह्मे तावदिति ब्रह्मपरिछेद ज्ञानवतां ब्रह्माविज्ञातममतमि त्युक्तमपरिछिन्नत्वाद्ब्रह्मणः ननुनेह नानास्ति किंचन मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति यत्र हि द्वैतमिव भवति तदितर इतरं पश्यति यत्र त्वस्य सर्वमात्मैवा—

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

अधिष्ठाता पुरुषसे एशीक सो ताको बड़ो यश नहींया प्रकार जो जानते भये मोक्ष होतेभये इत्यादिक याते यह दिखायो कि निर्विशेष ब्रह्म के ज्ञान से अविद्या की निवृति होय है सो दूर कियो और जो वाणी मनकरके सहित नहीं प्राप्तहोके निवृत होयहै यह कह्योहै ताको अभिप्राय यह है कि ब्रह्म अनंत है अपरमित गुण हैं मन वाणी समुझलेय कि इत्नो ब्रह्म है सो परिछेदनहीं हो सकै ताको सुनके जो ऐसे जानते भये कि ब्रह्मइत्नो परिछेद है उनके सम्बन्ध

में अविज्ञात नाम न जाननो अमत यह कह्यो काहेसे कि ब्रह्म अपरिछिन्न है तामें फिर शंका है कि यहां नानाप्रकार को कुछ नहीं है जोनाना प्रकार को देखै है सो मृत्युते मृत्युको प्राप्त होय है जब द्वैतकी तरह होय तब इतर इतर को देखै है जा समय याको सब आत्मां होतो भयो–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

भूत्तत्केन कंपश्येत् तत्केनकं विजानीया दितिभेदनिषेधोबहुधाद्दश्यते अत: कथं पार्थक्येन ईश्वर तत्वनिरूपणमितिचेन्न अत्रस्वंस्य जगतः ब्रम्हणो जातत्वात् तदन्तर्यामित्वेनचतदात्मकत्वेनैक्यात्प्रित्यनीक नानात्वस्यैवनिषेधात् ननुयदाह्येवैतस्मि नुदरमंतरंकुरुते अथतस्य भयंभवतीतिब्रम्हणि नानात्वंपश्यतोभयप्राप्तिश्रुति सिद्धेति चेतउच्यते ब्रम्हणिअंतर मवकाशोविच्छेदएवउक्तंच महर्षिभि यन्महूर्त्तं क्षणं वापि वासुदेवोन चिंत्यते॥साहानिस्तन्महच्छिद्रं साभ्रांतसाचविक्रियेत्यादि

भाषाकान्तिप्रकाशिका

तब कौन करके कौनकोदेखैकौन करके कौनको जानै यह भेदको निषेध बहुधादीखै है फिर कैसे ईश्वर तत्व प्रथक निरूपण करवे योग्यहै ताको यह समाधान है कियह सब जगत ब्रह्मते उत्पन्न भयोहै भगवान सबके अन्तर्यामी हैं सब जगत तिनको आत्मक है अंतर्यामीप

नेसेतदात्मकत्वसे ऐक्यता है प्रत्यनीक नाना प्र
कारको निषेध है फिरभी शंकाहै कि जासमय
याब्रह्म केविषय उदर अंतर करैहै ताको भयहोय
हैऐसे ब्रह्ममें नाना प्रकार देखवे वारे को भयकी
प्राप्ति श्रुति से सिद्धहै ताको कहैंहैं ब्रम्ह में
अंतर नाम अवकाश ब विच्छेद को है सोई
यह ऋषिन ने कह्योहै जोमुहूर्त्त अथवा क्षण
वासुदेव को न चिंतवन करै सोई बडीहानि
और सोई वडो छिद्र है सोई भ्रांति सोईविक्रि
याहै इत्यादि

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

नन्वेकमे वाद्वितीयं ब्रम्हेत्य त्राद्वितीय पदंगुणतोपिसद्वितीय
तानसहते अतः सर्वशाखा प्रत्ययन्यायेनैव कारण वाक्या नामद्विती
य वस्तु प्रतिपादन परत्व मभ्युयगमनी यं कारण तयोप लक्षितस्या
द्वितीयस्यब्रम्हणो लक्षण मिदमुच्यते सत्यज्ञानमनं तंब्रम्हेतिअतोलिल
क्षयिषेतंब्रम्ह निगुण मेवेतिचेन्न जगत् कारणस्यब्रम्हणःस्वव्यतिरि
क्ताधिष्ठानंतर निवारणे नाद्वितीयपदस्यतदैक्षुत वहुस्यांप्रजायेयेतित
त्तेजोसृजतेत्यादि विचित्र शक्तियोग प्रतिपादन परत्वात् सर्व शाखा
प्रत्यय न्यायश्चात्र भवतो विपरीतफलः

भाषाकान्तिप्रकाशिका

और भी वादी कीशंकाहैकिएकही निशचय
अद्वितीय ब्रम्हहै यह श्रुति कहेहै यास्थल में

अद्वितीय पदगुणाते भी द्वितीयता कोनहीसहे तासे एकशाखासे सब शाखा की पहिचानहो जाय या न्याय करके कारणके वाक्य अद्वितीय वस्तु को प्रति पादन करै हैं ऐसे मानलेनो कारणता करके उपलक्षित जो अद्वितीयब्रह्मताके यहलक्षणहैं सत्यंज्ञान अनंत ब्रम्हेति याते जो ब्रम्ह को लक्ष्य करावै हैं सो ब्रम्ह निर्गुणहै ऐसे जो बादीं कहै ताको कहे हैं सो नही जगतकोकारण जो ब्रम्हताके विना दूसरोअधिष्ठान नहीहै ताकेनिवारणमेंअद्वितीय पददियो ता समानकोई दूसरो नहीहैं सोदेख तो भयो बहुत होजाँव उत्पत्ति के अर्थ सो तेज रचतो भयो इत्यादि विचित्र शक्तियोग प्रतिपादनके अर्थ अद्वितीय पद दियो

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

सर्व शाखा सुकारणा वि यिनां सर्वज्ञ त्वादीनां गुणानां अत्रो र संहार हेतुत्वात् अतः कारण वाक्यंस्वभा वादपिसत्यं ज्ञानमनं तब्रम्हेत्य नेनसगुण मेवप्रतिपाद्यते किंचसत्यं ज्ञानमनंतंब्रम्हे त्यत्र सामा नाधि करण्यानेक विशेषण विशिष्टै कार्थ विधान व्युत्पत्या पिननि र्विशेष वस्तुसिद्धिः भिन्नप्रवृत्ति निमित्तानांशब्दा नामेकस्मिन्न र्थेवृत्तिः सामाना धिकरण्यं इतिशब्दिकाः तत्र सत्य ज्ञानादिपदमु ख्यार्थैगुणैरेक स्मिनर्थे पदानां वृत्तौ निमित्तभेदो वश्याश्रयणे यद्

ति॥तत्त्वम स्यादि वाक्ये ष्वपि सामाना धिकर ण्यन निर्विशेष वस्त्वै क्यपरंतत्त्वंपदयोः सविशेषाभि धायित्वात्

भाषा कांति प्रकाशिका

तुम्हारी शाखा प्रत्यय न्याय यो स्थलमें विपरीत फलको दाता भयो सबशाखा के विषय कारण मेंप्राप्त भये जोसर्वज्ञत्वादि गुण तिनको उप संहार भयो याते कारणके वाक्य स्वभावते भी सत्यज्ञान अनंत ब्रह्म यहहै याकरके सगुणको ही प्रतिपादन करैं हैंऔर सत्यज्ञान अनंतब्रम्ह में सामानाधिकरण्य अनेक विशेषण करके विशिष्ट जो एकार्थ ता को विधान है ताकी व्युत्पत्ति करके भी निर्विशेष वस्तु सिद्ध नहीं होय शब्दके जानन वारे न्यारी न्यारी प्रवृत्ति केनिमित्त वारे शब्दोंको एक अर्थमें लगायवेको सामानाधिकरण्य कहैहैं तहां सत्य ज्ञानादिपद जोहै तिनमुख्य अर्थ और गुणों करकेएकअर्थ मेंजो उन पदों कोलगायो जायतौताके निमित्त अवश्य भेदको आश्रय लेनो होयगो। तत्वमसि (सोतूहै) इत्यादि

तत्पदमनन्यगोचरानंतविशेषणविशिष्टं जग कारणं ब्रह्म-प्रतिपादयति त्वं पदं च संसारित्वविशिष्ट जीवात्मानं तत्त्वं पदस्य निर्विशेषस्वरूपपरत्वे स्वार्थः परित्यक्तःस्यात् एवं च सामानाधिक-रणप्रवृत्तयोस्तत्त्वमिति द्वयोरपि पदयोर्मुख्यार्थपरित्यागो न लक्षणा च समाश्रयणीया सर्वेष्वपि वेदांतवाक्येषु समानाधिकरण निर्विशेषु तत्तद्विशेषणविशिष्टस्यैव ब्रह्मणोऽभिधानात् यथानीलोऽयमानी-येत्युक्ते नीलमादिविशिष्टमेवानीयते तथेति ज्ञेयं किंच सर्वेषां प्रमा-णानां सविशेषवस्तु विषयत्वान्निर्विशेषेप्रमाणाभावः नचस्वानुभवं सिद्धं तदिति वाच्यं अनुभवानामपि इदमहमदर्शमतिके नचिद्विशेषण

भाषाकांतिप्रकाशिका

वाक्य के विषयमें भी जो सामानाधिकरण्य तानिर्विशेष वस्तु में एक्य को नही बतावै हैं तत और त्वं ये दोनो पद सविशेषकोविधान करैहैं तामें ततजोपद सोअन्यको गोचरनहीअनंतादि विशेषण वारे जगतके कारण ब्रम्ह कोप्रतिपादन करैहैं त्वं जोतूंसो संसारी जीवात्मा को बतावैहै तत्त्वं इन दोनो पदोंको जोनिर्विशेष स्वरूप में लगावोतौ स्वार्थ हीछूटजाय याप्रकार इन दोनों पदको सामानाधिकरण जोकरोगे तौ मुख्य अर्थ को छोड़के लक्षणा को आश्रय लेनो पड़ेगो वेदांत वाक्यके विषय तिन तिन विशेषण विशिष्ट ब्रम्ह मेंही सामानाधिककरण्य

होयहै जैसे कोईने कह्योकि नीलकमल लावो तौ नीलेरंग कोकमल लावेहैं तैसोयाप्रकरणमें जाननो और सब प्रमाण सविशेष वस्तुकोही प्रतिपादन करै हैं

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

विषयत्वात् न च तत्र शब्दः प्रमाणं शब्दस्यपद वाक्य रूपेण प्रवृत्या निर्विशेषे भिधानस्य सामर्थ्या भावात् प्रकृतिं प्रत्यय योगेन-हिपदत्वं पदसमुदायो वाक्यं तस्यानेक पदार्थ संसर्ग विशेषाभिधा-यित्वेननिर्विशेष वस्तु प्रतिपादना सामर्थ्यात् तथाहिनहि निर्धमके-वस्तु निवाक्यस्य प्रामाण्यं संभवति वाक्यंहिपदार्थ ज्ञानद्वारा बोध-कं पदार्थ ज्ञानं च गृहीत संगति केभ्यः पदेभ्यो वृ्याभवति संगति ग्रहश्च वाक्यार्थ ज्ञानात्पूर्वंमे व प्रमाणां तरोपस्थिति वृद्ध व्यवहारादि ना भवति न चात्र निर्धर्मके ब्रह्मणि प्रमाणां तरं प्रक्रयते

भाषाकान्तिप्रकाशिका

जो कहौ कि मत होय निर्विशेष में प्रमाण अपने अनुभव ते सिद्धि है तौ अनुभवों को भी जैसे यह मैं देख तो भयो तौ कोई विशेषण वारो ही विषय है ता निर्विशेष में शब्द भी प्रमाण नहीं है शब्द की वाक्य रूप से प्रवृति होय है तासे निर्विशेष के अभिधान में शब्द की सामर्थ्य नहीं है प्रकृति प्रत्यय के योग करके पद कह्यो जाय है पद समूहको वाक्य कहैं सो वाक्य पदार्थ को संसर्ग विशेष जामें ताको

विधान करै हैं निर्विशेष वस्तु को नहीं विधा-
नकरसकै तासे निर्धर्मक वस्तु के विषय वाक्य
नहीं प्रमाण होसकै वाक्य पदार्थ के ज्ञान द्वारा
बोध करावै है पदार्थ को ज्ञान गृहण करी जो
संगति ताके पदों की बृत्ति करके होय है सं-
गति गृहण करनी वाक्य अर्थ के ज्ञान से पहिले
दूसरे प्रमाण अर्थात उपस्थित भये जो बृद्धों
के व्यवहारादि तिन कर के होय है या निर्धर्मक
ब्रह्म में प्रमाण अन्तर की सामर्थ्य नहीं तैसेही

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

तथाहिनतावत्प्रत्यक्षं तत्र प्रमाणं तस्य निर्विकल्प सविकल्प भेदभिन्नत्वात् तत्रा निर्विकल्पक नाम केनचिद्विशेषेण वियुक्तस्य ग्रहणां न सर्व विशेष रहितस्य सविकल्पकं तुसविशेष विषयमेवजात्यादि अनेक पदार्थ विशिष्ट विषयत्वात् अत एक जातीय द्रव्येषुप्रथम पिन्ड ग्रहणं निर्विकल्पकं द्वितीयादि पिन्ड ग्रहणं सविकल्पकमित्युच्यते नाप्यनुमानं तस्य प्रत्यक्षादि दृष्ट संबंध विशिष्ट विषयत्वात् नेन्द्रयाणि नानुमानं इतिश्रुतेश्च भावरूपत्वेना भावा गोचरत्वात यूशाहवन यादि वच्छास्त्रा देवतदुपस्थि तेरति चेन्न। वैषम्याद्यूदाहवनीयादीनां शब्द शक्य तावच्छेदकधर्मवत्वादिहच सर्व धर्मातीत्वेन पद वृत्य विषय त्वात्

भाषाकांतिप्रकाशिका।

न तामें प्रत्यक्ष प्रमाण हो सकै है प्रत्यक्ष
प्रमाण में निर्विकल्प सविकल्प दो भेद न्यारे२
हैं तामें निर्विकल्प ताको कहैं कि कोई एक

विशेषण से वियुक्त होय सब विशेषण से रहित न होय और सविकल्प तौ सविशेष को कहैं अर्थात जाति आदिक अनेक पदार्थ से बिशिष्ट होय याते एक जाति के द्रव्य के विषय पहले पिण्ड-मात्र ग्रहण करनो निर्विकल्प है दूसरे जाति आदि सहित पिन्ड ग्रहण करनो ताको सविकल्पक हैं ता निर्धर्मक ब्रह्म में अनुमान भी नहीं वन सकै अनुमान तौ प्रत्यक्षादि में जो देख्यो सुन्यो है ताके सम्बन्ध विशिष्ट को विषय करै है वा ब्रह्म में इन्द्री और अनुमान नहीं पहुंचै यह श्रुति भी है तहां वादी कहै हैं कि भाव रूप से अभाव अगोचर भी ले लैनो जैसे यूप आवहह्न करवे योग्य है अर्थात यूप को देब-ता सूर्य्य आबाहन करवे योग्यहै तहां यूप से

तथाहि पदवृत्तिताबद्द्वेधा मुख्या अघन्याचतत्रामुख्यासामान्य विशिष्टव्यक्ति विषयास्माच्छद्वादय मर्थो बोधव्य इतीश्वरेच्छारूप: संकेत इतितार्किकाः सामान्यमात्रयोगोथथापंकजपदस्या वयवशक्तेः कुमुदपद्मयोरविशिष्टत्वेपि भूरिप्रयोग वशात्पद्मेपिनियमोपपत्तेरि-त्याहु: जघन्यापिद्विविधालक्षणा गौणी च तत्रशक्य संवधेलक्षणा यथागंगायां घोष इत्यत्रप्रवाहशक्तस्य गंगापदस्यतत्संवंधेतीरे वृत्तिरेतस्या: साक्षाच्छक्यवृतित्वेपि परंपरयापदवृत्तित्वमित्यविरोधः अत्रचोद्देश्यान्वयानुपपत्तिर्वा—

आदित्य को ग्रहण है तैसे ही शास्त्र से निर्विशेष की उपस्थिति है ताको कहें हैं सो नहीं विषम है यूपाहवनीयादि शब्दकी वाच्यता अवच्छेदक है आदित्य धर्मवारो है यह निर्वि-शेष ब्रह्म सब धर्म से अतीत है तामें पद की वृत्ति नहीं पहुंचै पदकी वृत्ति दो प्रकार की मुख्या जघन्या तामें मुख्या ताको कहैं कि सामान्य व्यक्तिमेंया शब्द से यह अर्थ जानवे योग्य है ईश्वरकी इच्छारूप संकेत यह तार्किक कहैं सामान्य मात्र योग है जैसे पंकज पदकी अवयव शक्ति कुमुद पद्म इन दोनों में है कोई में विशेषता नहीं है पर बहुत प्रयोग पंकज शब्द को पद्म में ही है यह नियम है जघन्या भी दो प्रकार की लक्षणा गौणी तामें शक्य के संबंध वारी लक्षणायथा गंगामेंघोष यहां प्रवाह जाको शक्तऐसे गंगापदकी ताको संबंधी किनारो तामें बृत्तिभई अर्थात वीच प्रवाह में गांव कैसे होय—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

जंयथावामंचाक्रोशंतीत्यत्रमंचशक्तस्य मंचपदस्य मंचसंवद्धे षुपुरुषेषुवृत्तिः शक्तवृत्तिलक्ष्यमाण गुण संबंधोगौणीयथा सिंहो-माणवक इत्यत्रसिंह पदस्य सिंहवृत्ति शौर्यादिगुणलक्षणयातद्वति-मानवकेवृत्तिरिति अतएव लक्षणा गौणीतोवलवती गौण्या वृति द्वयात्मकत्वात्तदुक्तं अभिधे याविनाभूत प्रतीतिर्लक्षणोच्यते ॥ लक्ष्यमाणगुणैर्योगाद्वृत्तेरिष्टातुगौणतेति व्यंजनाख्या परावृत्तिरित्य लंकारिकाः तेतुगौणीलक्षणा मध्यंतर्भाव्य मुख्यालक्षणाव्यंजना चेतित्रैविध्यमाचक्षते व्यंजनाचय त्रगतोस्तमर्क इति ।

भाषा कांति प्रकाशिका

तासे संबंध को जो कनारो तामें गांव है याकी सक्षातशक्य वृति होवे पर भी परंपरा करके पदकोबृति पनो भयो कुछ विरोध नही यास्थल में उद्देश जो प्रवाह ताकी अन्वय की उपपत्ति नहीं है यह बीज है अथवा जैसे मंच चिल्लाय हैं या स्थल में मंच शक्तिकी मंच पदकी मंच पर बैठे जो पुरुष तिन में बृति है अर्थात मंच पर बैठे जो पुरुष वे चिल्लाय रहे हैं शक्तकी बृतिव देखे गये जो गुण तिन के संबंधते गौणी बोली जाय है जैसे यह मनुष्य सिंह है यास्थलमें सिंह पदसे सिंहकी बृति शौर्यादि गुण वा मनुष्य में देखके तामें बृत्तिकरी याते लक्षणा गौणीते वलवान है यामें

दो बृत्ति हैं सोई कह्यो है जो विधान करनो है ताके नहीं विना भूत की प्रतीति लक्षणा उच्चारण करै है लक्ष्यमाणे गुणों के योगते गौणी बृत्ति वाञ्छित है एक व्यंजनानामको और बृत्ति अलंकार वारे कहैं हैं–

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

वाक्य प्रयोगानंतरंदूरंमागा इतिपण्यान्य पसार्य्यतामिति सं ध्योपास्यतामित्यादि बहूनां बहुविधार्थ प्रत्ययो भवति तत्र च न शक्ति नत्रा लक्षणा किंतु शब्दस्यैवान्वय व्यतिरेकाभ्यामपरा व्यञ्जनाख्या - वृत्तिराश्रयणी येति वदंति यत्तु यौगिको योगरूढश्च शब्दः स्यादौ पचारिकः मुख्योलाक्षिणिको गौणः शब्दः षोढानिगद्यते इतिवैयाकरणैः षड्विध वमुक्तं तन्मुख्य जघन्य योरवांतर भेदमादाययोजनीयं तथा हि मुख्यो रूढः यौगिको योगरूढ इत्येकं त्रिकं मुख्यायां लाक्षणिकः औपचारिको गौण इत्यपरं त्रिकं जघन्यायां

भाषाकान्तिपूकाशिक

वेता को गौणी लक्षणा के मध्य में अंतर्भावना करके मुख्या लक्षणा व्यञ्जना यह तीन प्रकार को वर्णन करै हैं तामें व्यञ्जना कहै हैं कोई ने यह बचन कह्यो कि सूर्य्य अस्त भयो वटोही दूर मत जाय वनिया दुकान बढ़ावैं, ब्राह्मण संध्या उपासना करैं, बहुतों को बहुत प्रकार के अर्थ की प्रतीति होय है तामें शक्ति

नहीं लक्षणा भी नहीं किंतु शब्द को ही अ-न्वयव्यतिरेक करके अपराव्यञ्जना नामकी बृत्ति आश्रय करने योग्य है ऐसे कहे हैं और छय प्रकार को शब्द यौगिक, योगरूढ, औपचारिक मुख्या लाक्षिणिक, गौण, व्यैयाकरणी कहे हैं सो मुख्य जघन्या इन दोनों के अवांतर भेद में योजना करने योग्य हैं तैसे ही मुख्य रूढ, यौगिक, योगरूढ यह एक त्रिगड्डा मुख्या के विषय ला-क्षिणिक, औपचारिक, गौण यह अपरतीन ज-घन्या के विषय हैं ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

लक्षणा पित्रि विधा अजह त्स्वार्था जहदजहत्स्वर्था जहत्स्वा-र्था चेति तत्राद्या वाचा अर्थापरित्यागे नैवान्यत्रांवर्तमाना शक्तितु ल्या सर्व जघन्यातो वल वती यथा काकेभ्यो दधिरक्षतामिति लोके उपघातक त्वेन काकपदस्य काकतदि तरेषु वृत्तिः यथाचाअष्टीरुपद धातीत्यत्रा अष्टिश ब्दस्य मंत्रो पधेयेष्टका सुवृत्तिः अष्टिमंत्रा वाहुल्ये नेति यथा वाशोणोधावती त्यत्राशोण गमन लक्षणस्य वाक्यर्थस्य विरु द्ध त्वा त्तदपरि त्यागेन तदाश्रया श्वादिषु वृ त्तिः केचित्तु शोणो धावती त्यादिनो दाहर णंतादात्म्य स बंधेन तत्रापि मुख्य त्वो पप त्ते : अतएव चतुष्ट यीशब्दानांवृत्तिरिति महाभष्यकारै रुक्त चतुष्टय चजाति

भाषाकान्तिप्रकाशिका

लक्षणा भी तीन प्रकार की है अजह-त्स्वार्था (स्वार्थ नहीं छोड्यो) जहदजहत्स्वार्था

कुछ स्वार्थ छोड्यो कुछ नहीं छोड्यो जहत्स्वा-
र्था (सब स्वार्थ छोड़ दियो) तामें पहले
अजहत्स्वार्था वाच्य को अर्थ नहीं परित्यागकर
के अन्यत्रभी तुल्य शक्तिसे वर्तमान जैसे कौवा-
वों ते दही की रक्षा करौ या प्रकार लोक
में नष्ट करवे वाले काक पद की काक से इतर
बिल्ली आदि में भी वृत्ति भई अथवा जैसे अग्नि
को धारण करै या अग्नि शब्द को मंत्र करके
युक्त जो ईटैं तिनके विषय वृत्ति है अग्नि के
मंत्र बाहुल्य करके जैसे शोण नाम लाल धावैहै
शोण जो लाल रंग ताको दौड़ना नहीं बनै तासे
गमन लक्षण जो वाक्य को अर्थ सो विरुद्ध है
ताको नहीं त्याग करके ताके आश्रय अश्वा-
दिके विषय वृत्ति भई कोई शोण धावै है इत्यादि
करके उदाहरण तादात्म्य संबंध में बतावैं हैं

सिद्धान्त रत्नाञ्जालि पूर्वार्द्ध

गुणक्रिया द्रव्य स्वरूपं तत्र गौरित्या दौजातिः शुक्लो नीलइत्या
दौगुणः चलइत्यादौक्रियाडित्थइत्यादौ द्रव्य स्वरूपमेव लक्षणांगी-
कारेचतद्विरुध्येते त्याहुः जहदजहत्स्वार्था शक्यैक देश परित्यागे न
शक्यैक देशे वृत्तिरियमपि जहल्लक्षणातो गौणीतश्चवलवती वाक्यैक
देशान्वया यथा सोयं देवदत्त इत्यादौ अत्रहितत्कालवैशिष्ट्यै तत्काल

वैशिष्ट्ययोर्युगपदन्वये विरोधात्त दुपलक्षित देवदत्त स्वरूप मेव शक्यैकदेश लक्षणया पदाभ्या मुपस्थाप्यते इयमेव भागत्यागलक्षणेत्युच्यते

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

तामें भी मुख्यपने की प्राप्ति है याही ते चार शब्दों की बृत्ति महाभाष्य कारों ने कही है जाति, गुण, क्रिया, द्रव्य को स्वरूप तामें गौ इत्यादि विषय जाति शुक्ल नील इत्यादि में गुण चलनो यामें क्रियाडित्थ इत्यादि में द्रव्य स्वरूप है या लक्षणा के अंगीकार करवे से विरोध होय है यह कहते भये जहदजत्स्वार्था यामें शक्य को एक देश परित्याग करके शक्य के एक देश में बृत्ति है लक्षणा और गौणी ते यह बलवान है वाक्य के एक देश में या को अन्वय है जैसे सोई यह देवदत्त है या प्रकरण में पहिले काल में देख्यो देवदत्त नवीन योवन पुष्टशरीरादि वे विशेषण त्याग देने या कालकी बृद्ध अवस्था दुर्बलता सो भी त्याग देनो दोनों विशेषण एक काल में अन्वय करवे में विरोध पड़ै है देवदत्त को पिंड मात्र लेनो शक्य के एक देशमें लक्षणा करके दोनों पद स्थापन होंय हैं.

यह भागत्याग लक्षणा कही जाय है जहत्स्वार्था कोतो वाच्यअर्थ को सब अंश त्यागके अन्यत्र में बृत्ति है जैसे गंगा में गांव

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

जहत्स्वार्थातु वाच्यार्थस्य सर्वांशत्यागेनान्यत्र वृत्तिः यथागंगायां घोष इत्यादौ इयंचगौणातो वलवती सर्वलक्षणा तोदुर्वलेतरवृत्ति संभवेनाद्रियते सर्वमुख्यार्थवाधात् इति शब्द वृत्तयःनिरू पिताःआसा मेकतरापि नाद्वितीये ब्रह्मणिभवितुमर्हतितत्रा दौरूढेरसंभवउच्यतेशक्तिग्रहस्तु क्वचित्प्रवृत्तिलिंगानुमानात यथा घटमानयेति वाक्य श्रवण समनंतरं कश्चित्कंवुग्रीवादिमंतमर्थ मानयतितस्या नयनक्रिया प्रत्यक्षत उपलभ्य तत्कारणत्वेनतस्य कृतिमनुमानयतस्याः कृतेः स्वकृतिदृष्टांतेन प्रवर्तक ज्ञानजन्यत्व मनुमिनोतितच्चज्ञान शाद्धान्वय व्यतिरेकानु विधायित्वात्कारणांतरस्य चानुपस्थितेस्तस्यश

भाषाकान्तिप्रकाशिका

यह गौणीसे बलवती सब लक्षणासे दुर्वल है याकी बृत्ति इतर में जाय है तासे नहीं आदर करी जाय है सब मुख्य अर्थको बाधा करै है ये शब्द की बृत्तिनिरूपण करीं इन में से एक भी अद्वितीय ब्रह्ममें नहीं घटै, तामें पहिले रूढि को असम्भव होनो कहैं हैं शक्तिको ग्रहण कहूं कहूं प्रबृत्ति को चिन्ह ताके अनुमानते होय है जैसे कही कि घट लावो यह बात सुन के कोई कंबुग्रीवादि वारो एक अर्थ लावै है कोई दूसरो घटलाय-

वेकी क्रिया प्रत्यक्ष देखके वा कारणता की कृति अनुमान करै है ताकी कृति से अपनी कृति के दर्शन करके ज्ञान उत्पन्न होनो अनुमान करै है सो ज्ञान शब्द के अन्वयव्यतिरेक से विधान भयो और कुछ कारण तो है ही नहीं तौ घटकी लायवे की जो कर्तव्यता–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

इस्यैव घटकर्मनयन कर्तव्यता प्रतिपादने सामर्थ्यंकल्पयति तत्रावापोद्धापाभ्यां प्रत्येक सामर्थ्यं क्रमेण निश्चिनोति इति शक्तिग्रह-क्रमः एवं दिष्टयावद्धं तेभद्रं पुत्रस्तेजात इत्यादि वाक्य श्रवणस मनंतरं श्रोतुमुखविकाशादिलिंगेन हर्षमनुमायतस्यचकारणां तरानु-पस्थितेः पुत्रजन्मनश्चमानां तरेण ज्ञातत्वात्तज्जन्यतां निश्चित्यतआ नं प्रत्यन्वय व्यतिरेकाभ्यामिदंज्ञानजनकमितिकल्पयित्वा क्रमेणपूर्व-वत् प्रतिपदशक्तिग्रहतद्धदत्रग्रह्मज्ञानस्य प्रवृत्यादिजन कत्वा भावा त्प्रमाणांतरागो चरत्वाच्चनतत्रशक्तिग्रहात्रसरः क्वचिदुपमानाच्छक्ति ग्रहयथागोसदृशोगवय।

भाषाकांतिप्रकाशिका

ताके प्रतिपादन में शब्द की सामर्थ्य कल्पना करै है तामें लेजायवे लेआयवे से एक एक में क्रम करके सामर्थ्य निश्चय करै है या प्रकार शक्तिग्रहको क्रम है याही प्रकार कोई ने कह्यो मंगल होय कल्यान बढै तुम्हारे पुत्र उत्पन्न भयो इत्यादि वाक्य सुने पीछे

सुनवे वारे को मुख विकाश भयो ताते ताको हर्ष अनुमान कियो, वा हर्ष को कारण दूसरो तौ हैही नहीं पुत्र को जन्म शब्द के सिवाय और प्रमाण से तौ जान्यो नहीं ताको जन्म निश्चय करके ता ज्ञानके प्रति अन्वय व्यतिरेक ते यह शब्द ही ज्ञान उत्पन्न करवे वालो है ऐसे कलपना करके क्रम से पहिलेकी तरह शक्तिग्रह होय है तारीति से या ब्रह्मज्ञान में प्रबृत्यादि को उत्पन्न होनो नहीं बनै प्रमाणांतर को गोचर नहींतौ शक्तिग्रह को अवसर कहां है—

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

इति वाक्यं श्रुतवतो नागरिकस्य कदाचिदरण्य गमना नंतर गो सदृश व्यक्त्यंतर दर्शने पूर्वश्रुत वाक्यर्थ स्मरणेन गो सादृश्याद्व वय पदनिश्चयःकचिद्वै धर्म्याद्य थाधिकर भमति दीर्घग्रीवं कठोर कंटका शिनमित्यादिनिंद्रा वाक्य श्रुत वतस्तादृश व्यक्ति दर्शने पूर्व वत् करभपदवाच्य त्वनिश्चयः तदुभयं ब्रम्हणिन संभवति साधर्म्य वैधर्म्य शून्य त्वात्मा नांतरा योगाच्च कचिदाप्त वाक्या द्यथाकंबुग्री वादि मान घट पदवाच्य इति तद्व दप्यत्र नसं भवति उद्देश्यांशोप स्थापक पदा भावात् कचि त्प्रसिद्धार्थ पद सामा नाधिकर ण्यात् यथेह सह कार तरौपिकौरौती तिकर्तरि प्रत्यक्ष प्रसिद्ध पिकपद वाच्यत्व निश्चयः

भाषा कांति प्रकाशिका

कहूं उपमानते भी शक्तिग्रह है जैसे गौ

के समान गवय यह वाक्य सुनवे वारो नगर वासी कोई समय बनमें गयो तहां गौ समान दूसरी व्यक्ति देखी जाको दरशन करके पहिलो सुन्यो जो वाक्य अर्थताको स्मरण करके गो समान गवय यह पद निश्चय करै है कहूं वै धैर्म्य सो भी शक्तिग्रह होय है जैसे ऊंट को धिक्कार है लंबी नार वारो कठोर कंटक खायवे वारो इत्यादि निंदा वाक्य कोईने सुने और फिर तैसी व्यक्ति देखी तौ पहिले की तरह ऊंट पद वाक्य वारो निश्चय होय है सो दोनों ब्रह्म में सम्भव नहीं न कोई के साधर्म्य है न वैधर्म्य है न प्रमाण अंतर यामें योग पावै है कबहूं आप्त वाक्य से जैसे कंवुग्रीवादि मानघट पद वाच्य सो भी वहांसम्भव नहीं, काहेसे कि उद्देश अंशको स्थापन करवेवारो पद नहीं है कहूं प्रसिद्ध अर्थ के पद के समानाधिकरणयते जैसे आम्वके बृक्षपर कोयल बोल रही है बोलवेवारी प्रत्यक्ष प्रसिद्ध–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि वपूर्द्धि

यथा वज्रहस्तः सहस्राक्षः पुरंदर इत्यादौ वज्रहस्ताद्याकृति विशिष्टपुरंदरादि पदवाच्यत्वाध्यव सायस्तद्वदपिनेह सम्भवति

निर्विकल्पेतस्मिन्सर्वस्यापि पदस्या प्रसिद्धार्थत्वात् क्वचिद्वाक्यशेषाद्यथा यववराहादि शब्दानां पदाम्या औषधयोम्लायंत्यथैता मोदमानाएवावतिष्ठंतिवराह मनुधावंतीत्यादिवाक्यशेषात्कंगुकंकादि व्यावृत्यावाच्यार्थ विशेष निश्चयः यथावास्वर्गयूपाहवनीयादि शब्दानांयन्नदुःखेनसंभिन्नमित्यादि वाक्यशेषादलौकिकार्थ विशेष निर्णयः तद्वदपि ब्रम्हणिनसंभवतिवाक्यशेषस्यापि ब्रम्हविषयित्वा संभवात् नचब्रम्हविदाप्नोतिपरमिति परमपुमर्थ साधनं—

भाषाकान्तिप्रकाशिका

तामें पिकपद निश्चय भयो जैसे वज्र हाथ में जाके ऐसो हजार नेत्र बारो पुरंदर (इन्द्र) इत्यादि में वज्र हाथमें हजार नेत्र जाके ऐसी सूरत बारे में पुरंदर पद निश्चय भयो तैसे भी ब्रह्म में सम्भव नहीं निर्विकल्प ताब्रह्म में सब पदों का अर्थ प्रसिद्ध नहीं है कहूं वाक्य शेषसे भी जैसे यववराहादि शब्दों के पद अन्य औषधि कुम्हलाय गईं ये हरी भरी मोदमानतिष्टै हैं वाराह के पीछे दौड़ैं हैं इत्यादि वाक्य शेषतेकंगुकंकादि की व्यावृति करके वाच्य अर्थको विशेष निश्चय होय है अर्थात अन्याकंगु वाराह के पीछे कंक जैसे स्वर्ग के यूप आहवन करवे योग्य है जो दुख करके न्यारो नहीं इत्यादि वाक्य शेषते अलौ-

किक अर्थ निर्णाय होय हैं तैसे भी ब्रह्म में सम्भव नही वाक्य शेष को भी ब्रह्म विषय नहीं होसकै जो वादी ऐसे कहैं कि ब्रह्म को जाननवारो मोक्षको प्राप्तहोय है परम पुर्षार्थको साधन ब्रह्म ज्ञान है–

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

ब्रह्मज्ञान मित्यभिहिते किंतद्ब्रम्हेत्या कांक्षायां सत्यंज्ञान मनंतंब्रम्ह इति ब्रम्ह लक्षणमुपदि शति तथाचसत्यादि पदोपस्थापिता द्वितीये वस्तुन्येव ब्रम्हपद शक्तिग्रहोभविष्यति इतिवाच्यंसत्यादिपदेभ्योपिनिर्विकल्पोपस्थिते रसम्भवात्तत्रापि वाक्य शेषांतरानुधावनेन वस्थाशक्येनसमं सम्बंधाग्रहान्न लक्षणापि नहि लक्षणयैवलक्षस्वरूपोपस्थितिः तस्याः स्मारकत्वात् स्मरणस्य चपूर्वज्ञानजन्यत्वनियमात् किंचनाजहत्स्वार्थाविशिष्टोपस्थितिः प्रसंगात् तत्वमस्या दिवाक्ये--

भाषाकान्ति प्रकाशिका

याप्रकार के कहवे पर पूछी जाय कि सो ब्रह्म कौन है तब सत्य ज्ञान अनंत यह ब्रह्म के लक्षण उपदेश करै हैं तब सत्यादि पद से उपस्थापित जो अद्वितीयवस्तु तामें ब्रह्म पद की शक्तिग्रह होयगी ताको कहैं कि ऐसो मतकहो सत्यादिपदों करके निर्विकल्प की उपस्थिति सम्भव नही है तहां भी वाक्य शेष के अंतर के अनुधावन में व्यवस्था है

शक्यके साथ संबंध नहोवे से लक्षणाभी नहींहोसकै लक्षणामें लक्ष्यस्वरूप को उपस्थापति नहीं बनै लक्षणा स्मरणकरावै है स्मरण पूर्व ज्ञानसे जन्मै यह नियमहै अजहत्स्वार्थासे उपस्थिति कोप्रसंग नहींबनै तत्वमस्यादि के वाक्य विरोध से अन्वय की प्राप्त नहीं होय

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

विरोधेनानन्वयापत्तेः नापि जहदजहत्स्वार्था तस्याः शक्य संबंधवति प्रमाणांतरोपस्थितेदेवदत्ता दौसंभवः प्रमाणान्तरानुप स्थिते सर्व संबंधशून्येऽनवकाशा दतएवनजहत्स्वार्थापि तदंगी का-रेवा गंगापदलक्ष्यस्य तीरस्या गंगात्ववत्स त्यादि पदलक्ष्यस्या सत्य त्वादिः स्याद्वा च्यत्वस्य सर्वात्मना परित्यागात् ना पिगौणी तत्र सं भवति सर्व सादृश्य शून्यत्वान्माया वादमते प्रभ्वादिगुणयोगे न गौ णयस्वीकारः नापि व्यंजना वृत्ति स्तत्रासंभवति तस्यानिः संबंधे अप्र सरात् तस्मान्नि र्विशेषे वृत्तिमा त्रायोगान्ननिर्विशेषे पद विधया वाक्य विधया चोप निषन्मानं ममतुमतेप्राकृता प्राकृत द्विविध भेद भिन्नान्नि र्विशेषरहि तमेवनिर्वि शेषमितिनास्मत्प्रतिबंन्दी

भाषाकान्तिप्रकाशिका

जहदजहत्स्वार्था भी नहीं बनै सो शक्य के संबंध वारी है प्रमाण अंतर से उपस्थित जो देवदत्त तामें संभव है प्रमाण अंतर से जाकी उपस्थिति नहीं सब संबंध से शून्य तामें या लक्षणा को अवकाश कहां है जहत्स्वार्था भी नहीं बनै ताके अंगीकार करवे से गंगा पद को

लक्ष्य जो तीर ताको जैसे गंगापनों नहीं है तैसे सत्यादि पद को लक्ष्य जो ब्रह्म ताको असत्य-त्वादि होयगो काहे से कि वाच्य अर्थ को सर्वा-त्मा त्याग है गौणी भी संभव नहीं है सब साद्दश्य से शून्य है माया वाद के मत में प्रभ्वादि गुण को योग ब्रह्म में है नहीं, ता करके गौणी स्वीकार नहीं व्यञ्जना वृत्ति भी तामे नहीं संभव है विना संबंध के सो भी नहीं पसरै तासे नि-र्विशेष में वृत्ति मात्र की योग्यता नही निर्वि शेष में पद की विधि करके वाक्यकी विधि-करके उपनिषद प्रमाण नहीं मेरे मत में तो प्राकृत-अप्राकृत दो प्रकार के भेद से भिन्न

भाषाकान्तिप्रकाशिक

प्रकृतिमनुसरामः विष्नोर्नुकंवीर्य्याणिप्रवोचं यः पार्थिवानि विममेरजांसिइतिनतेविष्णोर्जायमानोन जातोदेवमहिम्नः परमंतमाये तिसहस्रधामहिमानः सहस्रइत्यादिश्रुत्यंतरेभ्यश्चब्रम्हणोनंतकल्याण गुणैकराशित्वंसिद्धं व्यूहांगिनमिति वासुदेव प्रद्युम्नानिरुद्धसंकर्षण रूपसमुदायो व्यूहः तस्यांगिनंवयं ध्यायेमइत्यर्थः यथोक्तं श्रीभाग-वते वासुदेवः संकर्षणः प्रद्युम्नः पुरुषः स्वयं अनिरुद्ध इति ब्रम्हनमूर्त्तिव्यूहोभिधीयते सविश्वतैजसप्राज्ञ तुरीयइति वृत्तिभिः अर्थेन्द्रया-शयज्ञानैर्भगवान् परिभाव्यते—

भाषाकान्तिप्रकाशिका

जो अचेतन विशेषता से रहित सोई निर्वि

शेष है तासे हमारी प्रतिबंदी नाम वंधन नहीं है अब अपने प्रकरणमें चलै हैं विष्णुभगवान के पराक्रम सोऊ न कह सकै जो पृथ्वी के रजके कणिका गिन लेय हेविष्णु जो तुम्हारी महिमा को अंत पावै सो न जन्म्यो न जन्मैगो आपकी महिमा सहस्रधा नाम अनंत है इत्यादिक श्रुति अंतरोंसे ब्रह्म अनंत कल्याण गुण को राशि है यह सिद्ध भयो वासुदेव प्रद्युम्न अनिरुद्ध संकर्षण रूप ये व्यूह जाके अंग हैं ता अंगी को हम ध्यान करै हैं जैसे श्री मद्भागवत में कह्यो हे ब्रह्मन वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न स्वयंपुरुष अनिरुद्ध ये व्यूह मूर्त्ति कही जायं हैं विश्व तैजस प्राज्ञ तुरीय इन वृत्तियों करके अर्थ इन्द्री आशय ज्ञान करके भगवान ही भावना किये जाय हैं

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

अंगोपाँगायुधाकल्पै र्भगवाँस्तच्चतुष्टयं । बभर्तिस्मचतुर्मूर्त्तिं भगवान् हरिरीश्वर इति अत्रेदंबोध्यं वासुदेवो विश्वोजागर्त्यभिमानी सत्वाधिष्टातृत्वात् प्रद्युम्नस्तैजसः स्वप्नाभिमानी रजोधिष्टातृत्वात् संकर्षणः प्राज्ञः सुषुप्त्यभिमानी तमोधिष्टातृत्वात् निर्गुणत्वात्ज्ञागर्त्यादिषु निर्विकार त्वेनानुगतत्वाद निरुद्धस्तुरीयोजागरणादिषु

एक रूपात्मतत्वं एवं तत्तदधिष्टित् सत्वादि तोजागर्त्ति स्वप्न सुषुप्त-
यो भवन्तीत्यर्थः प्रमाणं श्रीभागवते द्रष्टव्यं अथ प्रधानेश्वरः प्रद्युम्नः
अनिरुद्धस्तु समष्टि देहाँतरात्मा ब्रम्हाण्डांतर्यामी पुरुषाह्वयःव्यष्ट्यां
तरात्मातुवासुदेवःयथोक्तं प्रथमंमहतःस्रष्टिद्वितीयंत्वंडसंस्थितंतृतियं

भाषा कांति प्रकाशिका

अंग उपांग आयुध आकल्प करके भगवान
हरि ईश्वर चतुर्मूर्ति चारौं को धारण करैं हैं
इति यामें ऐसो जानवे योग्य हैं वासुदेव विश्व
जागर्त्ति अभिमानी सत्वके अधिष्टाता प्रद्युम्न
तैजस स्वप्न अभिमानी रज के अधिष्टाता संकर्ष
ण प्राज्ञ सुषुप्ति के अभिमानी तम के अधिष्टाता
अनिरुद्ध तुरीय जागर्त्तादि अवस्था में निर्विका
र करके अनुगत हैं और सब जागरणादि अव
स्था में जिनको एक रूप आत्मा को तत्व है
या प्रकार तिन तिन अधिष्टाता सहित सत्वा
दिक से जागर्त्ति स्वप्न सुषुप्ति होय है प्रमाण
श्रीभागवत में देखो ताके अंतर प्रधान के ईश्वर
प्रद्युम्न हैं अनिरुद्ध समष्टि देह के अंतरात्मा
ब्रह्माण्ड के अन्तर्यामी पुरुष उनको नाम है
व्यष्टि के अंतरात्मा वासुदेव हैं सोई कह्यो है
प्रथम महत की सृष्टि दूसरी अण्ड की

सर्व भूतस्थं तानि ज्ञात्वाविमुच्यत इति सर्वोत्तमोऽनन्यापेक्ष महिमैश्वर्य्यः श्रीकृष्ण एव स्वयं रूपः तस्य वासुदेव प्रद्युम्नानिरुद्ध संकर्षण रूपो व्यूहश्चतुः करणं अतः सर्वेषां चित्त बुद्धिमनोहं कारा णामधिष्टातृत्वं व्यूहयस्यश्रूयतेयानि अस्मदादिचित्ताद्यधिदैवतानि तानिभगवतश्चित्तादीनियथा दर्शेर्विवनेगानि प्रतिविंवेयथास्थान मेवप्रतीयेरंस्तथैव भग वतोपिचित्तादिस्थानाया वासुदेवादयंगानि विश्वस्मिन्यथास्थानमेव चित्ताद्यधिष्टातृत्वेन श्रूयते चन्द्ररुद्रादीनां रूपांतरत्वेनतदंशत्वान्न

भाषाकान्तिप्रकाशिका

संस्थिति तीसरी सब भूतों में स्थिति तिनको जानके संसार से छूटै है सब से उत्तम जाकी महिमा ईश्वर्य कोई की अपेक्षा नहीं करै सो श्रीकृष्ण स्वयं रूप हैं तिनके वासुदेव प्रद्युम्न अनिरुद्ध संकर्षण व्यूह चार करण हैं यातें सबोंके चित्त बुद्धिमन अहंकारों के अधि-ष्टातापनो व्यूहों को सुन्यो जाय है और जो हमारे सब के चित्तादिकों के अधिदैवत हैं सोई भगवान के चित्तादिकों के हैं जैसे दर्पण में विंवके अंगप्रति विंवमें यथास्थानमें प्रतीत होंय है तैसे ही भगवत के चित्तादि में स्थित वासुदेवादिक अंग या विश्व में यथा स्थानपर चित्तादिकोंके अधिष्टाता सुनेजाय हैं। भगवान

के अंग में चन्द्ररुद्रादिक रूपांतर भगवान के अंश है–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

विरोधःइति अत्रायंविवेक भूतेभ्यःप्राणिनःश्रेष्टास्तेभ्योवैमनुजाः खलु मनुजेभ्योमराः सर्वेदेवेभ्यश्चतुराननः ब्रम्हणः शंकरः श्रेष्टस्तत्परोविष्णुरेवहि तस्माच्छ्रेष्ठः शेषशायी तस्माच्छ्रेष्ठो विराटविभुः तस्माच्छ्रेष्ठोहिविज्ञेयोमहाविष्णुर्महाविराट। तस्माच्छ्रेष्टः प्रधानेशः पुरुषाख्योगुणात्मकः तत्परोब्रह्मविज्ञेयोवासुदेवःपरात्परः परमात्मा परंज्योतिर्निरीहोनिर्गुणोविभुः तदधिष्टाता कृतिमानस्वेच्छाचारी समस्तवित् भावनीयश्च सर्वेषांगुणागुणविवर्जितः कृष्णाख्यं परब्रह्मनित्यंनित्यगुणाश्रयः सर्वैश्वर्ययुतः साक्षात् सर्वमाधुर्य्यवान्स्वयं इतितत्वसागरोक्तेश्चसिद्धांतरीत्यापिसर्वस्वरूपश्रेष्ठत्वेन–

भाषाकांतिप्रकाशिका

ताते कुछ विरोंध नहीं अब ऐसो विचार करौ कि सब भूतों से प्राण वारे श्रेष्ठ हैं, तिनसे मनुष्य श्रेष्टतिन मनुष्यों से देवता श्रेष्ठ हैं, सब देवतावों में ब्रह्मा श्रेष्ठ हैं, ब्रम्हाजी से महादेव जी, तिनसे परे विष्णु, तिन से श्रेष्ठ शेषशायी, तिन से श्रेष्ठ विराट्विभुतिन से श्रेष्ठ महाविष्णु महा विराट, तिनसे परे प्रधानके ईश पुरुष जिनको नाम गुणात्मक तिन से परे ब्रम्ह वासुदेव परते परे जानवे योग्य हैं, सोई वासुदेव परमात्मा परंज्योति चेष्टा रहित निर्गुण विभु हैं। तिंनके

अधिष्टाता कृतिमान अपनी स्वच्छन्द इच्छा से आचरण करवेवारे समस्त को जानैं सब करके भावना करवे योग्यगुण अगुणसे वर्जित श्रीकृष्ण नामके परब्रम्ह नित्य नित्य गुण के आश्रय सर्व ईश्वर्य युक्तसाक्षात सब माधुर्य्यसे पूर्ण स्वयं आप हैं–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

स्वयं भगवतः श्रीकृष्णस्यांतरंग त्वाच्चतुर्णामनियम्यत्वं सुव्यक्तं अतःश्रीकृष्णस्तेषामधिष्टातातैःसेव्यश्चब्रह्मादयस्तु वसुदेवादि द्वारानियम्यास्तदंशत्वात् भूतादीनांच ब्रम्हादिद्वारा नियम्यत्वमिति अतश्च व्यूहांगित्वेनसर्वप्रधानोशेषकल्याण गुणैकराशि श्रीकृष्णएव स्वयंभगवान वतारीतिसिद्धं अवतारो नाम निज संकल्प पूर्वक भक्त जनाधीन व्यक्तिकृतविग्रहः अवतारास्त्रिधाः लीलावतारा: पुरुषावतारा गुणावताराश्च तत्रलीलावतारा: चतुः सननारद वाराहमत्सयज्ञ—

भाषा कांति प्रकाशिका

या तत्व सागर के सिद्धांत से भी सब स्वरूप से श्रेष्ठ ता स्वयं भगवान श्रीकृष्णको है वेचार व्यूह अंतरंग है और नियम्य हैं याते श्रीकृष्ण तिनके सेव्य और अधिष्ठाताहैं ब्रह्मा-दिक वासुदेवादिक के द्वारा नियम न किये जाय हैं काहेसे कि तिनके अंश हैं भूतादिकों के नियम न करवेवारे ब्रह्मादिक हैं याते व्यूह

जिनके अंगते भये वे सब से प्रधान अशेष कल्याण गुणों की राशि श्रीकृष्ण हैं सोई स्वयं भगवान अवतारी यह सिद्ध भयो अवतार नाम निज संकल्प पूर्वक भक्तजन के आधीन विग्रह प्रकट करनो तामें अवतार तीन प्रकार के हैं लीला अवतार, गुणावतार तामें लीला अवतार यह हैं चार संकादिक, नारद, वाराह, मत्स्य, यज्ञ–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

नर नारायण कपिल दत्त हयग्रीव हंस पृश्णि गर्भ ऋषभदेव पृथु नृसिंह कूर्म धन्वंतरि मोहनी वामन परशुराम रघुनाथ व्यास बल-भद्र हय ग्रीव कृष्णबुद्धकल्कीत्यादयः लीलावतारा आपिचतुर्विधाः आवेशावतारा: प्रभावावतारा: विभावावतारा: स्वरूपावतारा श्चेति तत्रावेशावतारा द्विविधा: स्वांशावेशावतारा शक्तय।वेशावतारा श्चेति तत्रांशावतारा: कपिलपरशुरामादयःशक्तयावेशावतारास्तु यत्रएकैक.शक्ति संचारमात्रंतेच चतुःसननारद पृथुप्रभृतय- अधिकशक्ति संचारे च प्रभावाव तारत्वमेव चतु-सनादीनां प्रभावावतारश्च यत्राधिक.शक्ति संचारः ते चहंसऋषभधन्वंतरि मोहनी व्यासादयः ततोऽयधिक सं. चारों येषुतेविभवावतारा-

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

नर, नारायण, कपिलदत्त, हय ग्रीव हंस पृश्णिगर्भ, ऋषभ, पृथु, नृसिंह, कूर्म, धन्वंतरि, मोहनी वामन परशुराम रघुनाथ व्यास बलभद्र हयग्रीव कृष्ण बुद्ध कल्कीत्यादयः लीलावतार

भी चार प्रकार के आवेश अवतार प्रभ–
वावतार विभवावतारःस्वरूपावतार तामें आवेश
अवतार दो प्रकार के अपने अंश के अवतार
शक्ति के आवेश के अवतार तामें अंशावतार
कपिल पर्शुरामादिक शक्ति 'आवेशावतारों' में
जिनमें एक २ शक्ति संचार मात्र है। वे चार
सनकादि नारद पृथुआदिक अधिक शक्ति स
ञ्चार जिनमें उनको प्रभावतार में गिन लेनो
चतुः सनादि प्रभावावतार में हैं विशेष अधिक
शक्ति सञ्चार जिनमें वे हंस ऋषभ धन्वंतरि
मोहनी व्यासादिक तासे भी अधिक सञ्चार
जिनमें वे विभव अवतार हैं जैसे

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

यथामत्स्य कूर्म नरनारायण वाराह हयग्रीव ।पृश्नियगर्भ बल-
भद्रयज्ञादयः सर्वतोप्याधिक्याः स्वरूपावताराः तेतु नृसिंहोरामःकृष्ण
श्चेति यद्वास्वरूपावतारो नाम सर्वस्वरूपश्रेष्ठः सर्वमाधुर्यवान स्वय-
मेव भगवानखिलेश्वरः इतरसजातीयतया स्वरूपं प्रकटयन विराजमा
न इति गूढंपरब्रह्ममनुष्य लिंगमित्यादि प्रमाणात् श्रीकृष्ण एव तुस्व
यं भगवांस्तस्मादधिकः समश्चकोपिमास्तीत्युक्तमधस्तात् वैकुण्ठ-
नाथस्तु श्रीकृष्णस्य विलासः तुल्यशक्तिधारित्वात् अथपुरुषावताराः
ते त्रयः पृथमपुरुषो महत्स्रष्टा कारणार्णवशायी पृकृत्यंतर्यामीस प्रद्यु-
म्नांशोपि महाविराडंतर्यामित्वेन संकर्षणांशस्तस्यानंतत्वात् द्वितीयः

भाषाकान्तिप्रकाशिका

मत्स्य कूर्म नर नारायण वाराह हयग्रीव पृष्णि गर्भ बलभद्र यज्ञादिक सबसेअधिक स्व-रूप अवतार हैं वे श्री नृसिंह रामकृष्ण यद्वा स्वरूप अवतार नाम सब स्वरूप से श्रेष्ठ सब माधुर्यवान् स्वयं भगवान् अखिल के ईश्वर इतर सजाति में मिलके स्वरूप प्रगट करके वि राजमान हैं गूढ परम ब्रह्म। मनुष्य लिंग इत्यादि प्रमाण ते तासे श्रीकृष्ण ही स्वयं भगवान सब से अधिक हैं। तिनके कोई बराबर नहीं अधिक कहां से होयगो सो पहिले कहि आये हैं। वैकु ण्ठ नाथ तौ श्रीकृष्ण के विलास हैं, उनके तुल्य शक्ति धारण करै हैं। ताके अंतर पुरुषावतार वर्णन करै हैं। वे तीन हैं प्रथम पुरुष महत्स्र ष्टा कारणार्णव में शयन करैं। प्रकृति के अन्त र्यामी प्रद्युम्न के अंश है तौ भी विराट के अं तर्यामी पने से संकर्षण के अंश हैं, सो अनंत हैं दूसरे

पुरुषोगर्भोदशायी अनिरुद्धांशोऽपि समष्टीविराडंतर्यामि त्वेन प्रद्युम्नांश ङ्कामस्तस्यै वतद्गर्भधारणा समर्थ्यात् अतएव प्रधानेश इत्युच्यते तृतीयः पुरुषःक्षीरो दशायीव्यष्टि विराडंतर्यामी अनिरुद्धांशः समिष्टि देहान्त रात्मा अथऽयस्यंतर्यामी तुवासुदेवांशः पुरुषाह्वयश्च तुर्थः अथ गुणावताराः गुणे षुसत्वादिषुअवताराः गुणावताराः सत्व गुणेविष्णुः पालनकर्त्ता सवासुदेवएवसच लक्ष्मीद्वारा पालयति तथोक्तं श्रीशुकेन। श्रीस्वाधृताः सकरुणेन निरीक्षणेन यत्र स्थितैधयत साधिपतींस्त्रि लोकनित्यादि रजोगुणे ब्रह्मा सृष्टिकर्तागर्भोदशायीनाभिपद्मोद्भवः प्रद्युम्नांशएव स्वयमेवेंद्रोयज्ञ

भाषा कांति प्रकाशिका

पुरुष गर्भोदशायी अनिरुद्ध के अंश भी हैं पर समष्टि विराड के अंतर्यामी होवे से प्रद्युम्न के अंश हैं, काम तिन को अंश है, ताको गर्भ धारणकी सामर्थ्य नहीं है। तीसरे पुरुष क्षीरोदशायी व्यष्टि विराडंतर्यामी अनिरुद्धांशः समष्टि देहके अंतरात्मा और व्यष्टि के अन्तर्यामी तौ वासुदेव के अंश पुरुष नाम के चौथे हैं ताके पीछे गुणों के अवतार वर्णन करै हैं सत्वादि गुणों के विषय अवतार वे गुणावतार कहें जाय है तामें सत्व गुण के विषय विष्णु पालन कर्ता सो वासुदेव ही हैं। लक्ष्मी जी के द्वारा पालन करैं हैं, सोई श्री शुकदेव जी ने कह्यो है लक्ष्मीजी

अपनी करुणा की चितवन से देख के जहां स्थित होंय सहित अधिपतियों के त्रिलोकन को वढ़ावैं हैं रजोगुण के ब्रह्मा सृष्टि कर्ता गर्भो दशायी की नाभि-कमल से उत्पन्न प्रद्युम्न के अंश हैं जैसे कबहूं स्वयं यज्ञ भगवान ही इन्द्र होते भये

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

इति वत्स्वयमेव ब्रह्मापिकस्मिंश्चित्कल्पे भवती तितत्वं यदि तुकचि त्कल्पेतादृशपुण्यकारी जीवएवब्रह्मातर्हि भगवत् प्रद्युम्नस्य सृष्टि शक्ति प्रवेशेना वेशावतार एव ब्रह्मा, तस्यापि द्रष्टुरीशस्य कूटस्थ स्याखिलात्मनः सृज्यंसृजामिसृष्टोहमीक्षयैवाभिचोदित इत्यादि प्रमाणात् किंचसत्यलोकांतः समष्टिविराटस्थानो ब्रह्मणएव विग्रहः प्राकृतः सब्रह्मादृत्युच्यते अन्यजीवः सूक्ष्मोहिरण्यगर्भोयमपि ब्रह्मा अस्यांतर्यामीत्वीश्वरएव तमोगुणेरुद्रः संहारकर्त्ता ससंकर्षणांशएव भ्रूजन्मासर्वसंहर्त्तारुद्रः संकर्षणांशक इति प्रमाणात् किंचा-यंसदाशिवोनिर्गुणश्चेत् तदासगुणशिवस्यांशी अतएवास्य—

भाषाकान्तिप्रकाशिका

तैसे कोई कल्प में ब्रह्मा भी होंय यह तत्त्व है और जो कोई कल्प में ऐसो पुण्यकारी कोई जीव ही ब्रह्मा होय तौ भगवान् प्रद्युम्न की सृष्टि करवे की शक्ति प्रवेश होवे से आवेशावतार ब्रह्मा है सो श्रीभागवत में कह्यो सो जो द्रष्टा ईश कूटस्थ अखिल को आत्मा ताको

में रचो भयो ताके रचे भये को में रचौ हूं, ताकी चितवन को प्रेरो भयो इत्यादि प्रमाणों से सत्य लोक के भीतर समष्टि विराट स्थान ब्रह्मा को विग्रह है, सो प्राकृत बोलो जाय है। याकोजीव सूक्ष्महिरण्य गर्भ यहभीब्रह्माहै, ताको अन्तर्यामी ईश्वरहै। तमोगुणमें रुद्र संहारकरवे वाले रुद्रसंकर्षण के अंशहैं। भृकुटी से जन्म सबके संहार कर्ता संकर्षणके अंश यहप्रमाणहैं, जो ये सदाशिव निर्गुण हैं तौ सगुण शिव के अंशी हैं, तासे इन को बिष्णु के साथ समानता है, केवल पालनादि धर्म में नतु स्वरूप में

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

विष्णुनासाम्य माधिक्यं च विरंचितः अथ श्रीब्रह्मरुद्रमूर्तीनां भक्ति प्रवर्त्तकत्वादाचार्यत्वमपि बोधव्यं किंचसनक श्री ब्रह्मरुद्राः वैष्णवाः क्षितिपावनाः इत्यादि पाद्मेयाः प्रोक्तावेदंत आभ्यामाचार्य्यैः पद्मजादिभिश्चेति श्रीभागवते चत्वारःसंप्रदाय प्रवर्त्तका चार्य्याउक्ता

भाषाकान्तिप्रकाशिक

ब्रह्मा से अधिक हैं और श्री ब्रह्मरुद्र ये भक्ति भी प्रवर्त्त करै हैं, इन को आचार्य भी जानने योग्य हैं। श्रीसनक श्रीरुद्र ब्रह्म ये वैष्णव पृथ्वी को पवित्र करैं हैं, यह पद्मपुराण में

लिख्यो है श्रीमद्भागवत में चार संप्रदाय प्रवर्तक आचार्य्य लिखे हैं बेदतंत्र करके ब्रह्मादि आचार्यौंने वर्णान कियो है–

सिद्धान्त रत्नाञ्जालि पूर्वार्द्ध

अथसर्वंखल्विदंब्रह्मेत्यादि वाक्यैः सर्वव्यापकंब्रह्मेतिस्थितं तच्चद्विविधं अंतर्यामी बहिर्यामीभेदात् अंतर्यामित्वंनामांतः स्थित्वा-प्रेरकत्वंय आत्मनितिष्टन्नित्यादि श्रुतेःईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेर्जु-नतिष्टतीत्यादि स्मृतेश्च अयंचांतर्यामीश्वरः उपासकानामपरोक्षो-पिभवति यथोक्तं श्रीभागवते अंतर्वहिश्चामलमब्जनेत्रंस्वपुर्षेच्छानुग्र-हीतरूपं पौत्रस्तवश्रीललनाललामंद्रष्टास्फुरत्कुंडल मंडिता ननमिति ज्ञानिनांतुतावन्मात्र रूपेणप्रतिभासते अतिभावनयाविधुरस्यमृत-भार्याया अपरोक्षवत् परोक्षस्वभावस्यापि व्रह्मण अपरोक्षंभवति सचांतर्यामी द्विविधः चेतनांतर्यामी अचेतनांतर्यामी—

भाषा कांति प्रकाशिका

और भी कहैं हैं श्रुति के वाक्य हैं कि यह सब बिश्व ब्रह्म है तासे सबमें व्यापक ब्रह्म है यह ठीक भयो सो दो प्रकार को अंतर्यामी जो अंतर में प्रेरणा करै एक दूसरो वहिर्यामी जो वाहिरमें प्रेरणा करै तामें ये प्रमाण हैं जो आत्मा में तिष्टै इत्यादिक श्रुति श्रीगीता में भी है हे अर्जुन ईश्वर सब भूतों के हृददेश में तिष्टै है माया के चरख पर चढाय के सब भूतों को घुमावै है यह अंतर्यामी ईश्वर उपा–

सकों को दर्शन भी देय है सो श्री भागवत में दिति से कश्यपने कह्यो अंतरमें वाहिर में जो कमलदल लोचन अपने भक्तकी इच्छा से जो रूप प्रगट करे तेरो नाती लक्ष्मी ललना को जो मुकट रूप कुन्डल मन्डित मुखारविन्द को दर्शन करैगो ज्ञानियों को तौ तावन्मात्र रूप से भासे है जैसे कोई की अति प्यारी स्त्री मरगई ताको वियोग विरहमें अति उत्कट भावना जो वंधजाय ताको जैसे सर्वत्र स्त्रीकी स्फुरणा होय है तैसे परोक्ष स्वभाव भी ब्रह्म अपरोक्ष होय है-

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

चेति तत्र चेतनांतर्याम्युक्तः अचेतनांतर्यामी चयः पृथव्यांतिष्टन्नित्यादि श्रुत्यानु संधेयः। वहिर्यामी त्वंतुवहिः स्थित्वानियामकत्वं तच्च श्रीगुरुचरणारविन्दे प्रसिद्धमेव यथोक्तमुद्धवेन। योंतर्वहिस्तनुभृतामशुभं विधुन्वन्नाचार्य चैत्यवपुषा स्वगतिंव्यनक्तीत्यादि अथमन्वंतरावतारा। ऋषभधर्म्म सेतु विष्वक्सेनाजित वामन वैकुण्ठहरि सत्यसेन यज्ञविभूवृहद्भानु समुदाय योगेश्वराः अथयुगावताराः शुक्ल रक्तपीतकृष्णाः अर्चावतारो द्विविधः आराधितस्वयं व्यक्ति भेदात् भक्तजनैः पूजत्वेन आराध्यमंदिरादौ स्थापितोयः सआराधितार्चावतार इत्युच्यते। गौपालप्रतिमांकुर्याद्वेणुवादनतत्परां

भाषाकांतिप्रकाशिका।

सो अन्तर्यामी दो प्रकार चेतनांतर्यामी

अचेतनांतर्यामी तामें चेतनांतर्यामी तौ कहि आये अचेतन अन्तर्यामी में प्रमाण जो पृथ्वो के विषयतिष्टै इत्यादिकश्रुति अनुसन्धान कर लेन वाहिर के शिक्षा देवे वाले श्रीगुरू के चरण कमल प्रसिद्ध ही हैं सोई श्रीमद्भागवत में उद्धव जी ने कह्यो है जो तनुधारियोंके अन्तर बाहिर अशुभ नाशकरत आचार्य सु चैतन्यवपु होके अपनी गति प्रगट करैं हैं अथ मन्वन्तर अवतार वर्णन करैं हैं ऋषभ धर्म सेतु बिष्वक्सेन अजित बामन वैकुण्ठ सत्यसेन यज्ञ बिभू वृहद्भानु ये सब योगेश्वर हैं अथ युगाबतार बर्णन करैं हैं शुक्ल रक्त पीतकृष्ण अब अर्चाबतार कहें हैं सो दो प्रकार के एक आराधित दूसरे स्वयं व्यक्ति भक्तजनों ने पूजाके लिये आराधन करके मन्दिरादि में स्थापन किये उनको आराधित अर्चाबतारकहें हैं ताको प्रमाण कहें हैं वेणु बजाय वे में तत्पर ऐसी गोपाल की प्रतिमां करै

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

वर्हीपीड़ां घनश्यामां द्विभुजामूर्द्धसंस्थितामित्यादिप्रमाणात् आराधकभक्तजनाधीनाखिलात्म संस्थितिरेवार्चावतार स्वभावः शै-

लादिभेदेन यागाधिष्टानमष्टधा तथाश्रीमद्भागवते शैलीदारुमयीलौहीलेप्या लेख्याचसैकती । मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्ट विधास्मृता चलाचलेति द्विविधा प्रतिष्ठा जीव मन्दिरमिति किंचाचलायां न कृष्णस्यह्या वाहनविसर्जने प्रत्ययतार तस्येनचलायांस्यात्तत्रा भवेत् । लेप्ये.सैकतयोर्द्वयं शालिग्रामे न सर्वथा । शैलीकाष्टमयी.लौहीहार्दी मणिमयी धुहि । स्नान भूषादिकं देयं सर्वथा हरिवल्लभं । लेप्या लेख्यासिकता सुतत्तुदेयं यथार्हतः

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

मोरपंख को आपीड़ घनश्याम दो भुजा ऊंचे में स्थित इत्यादिक प्रमाणते अर्चाअवतार को स्वभाव है कि आराधन करवे वाले भक्तजन के आधीन सब आत्मा की स्थिति राखै हैं शैलादि भेदकरके हरि के अधिष्ठान आठ प्रकारके हैं सोई श्री भागवत में हैं शैली (पाषाणकी)दारु(काष्ठकी)लौही(सुवर्णादिक) लेप्यकी चित्र लिखी वालूकी मनमें बनावै मणि की ये आंठ प्रकार की प्रतिमा हैं। एक चला दूसरी अचला दो प्रकारकी जीवमन्दिर की प्रतिष्ठा है चला जो सर्वत्र गमन करै अचला जो एक मन्दिर में स्थित कहूं न जाय सकै तामें अचला में श्रीकृष्णको बुलावनो भी नहीं विदाकरनो भी नहीं विश्वास के तार-

तम्य से चला में आवाहन विसर्जन होय भी, नहीं भी होय, लेप्या व सैकती में दोनों हैं शालिग्राम में सर्वथा आवाहन विसर्जन है ही नहीं। पाषाण वारी काष्टवारी सुवर्णवारी मनो-मयी मणिमयी के विषय स्नान भूषणादिक

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

सुलेप्य लेख्ययोःकार्यं परिमार्जनमेवहि सैकतायांतुसर्वंतद्वि-नास्नानसमर्हणं अथस्वयंव्यक्तः सालिग्रामः स्वयंव्यक्तिरनादि सिद्ध-एवतु सालग्रामेपिभगवानाविर्भूतोयथाहरिः नतथान्यत्रसूर्यादौ वैकु ठेषुचसर्वशः शिलात्वामलकीतुल्यासूक्ष्माचातीवयाभवेत् तस्यामेव सदाब्रह्मन श्रियासहवसाम्यहं सालिग्रामेत्ववोदेवोदेवोद्वारावतीभवः उभयोः संगमोयत्रतत्रसन्निहितोहरिः नतथारमतेलक्ष्यानतथास्वपुरे-हरिः सालिग्रामेशिलाचक्रे यथासरमतेहरिः

भाषा कांति प्रकाशिका

सर्वथा हरि प्यारे को देने योग है। लेप्या लेख्या सिकता के विषय यथा योग पूजा कर वेयोग है। लेप्य लेख्य इन दोनों में परिमार्जन योग्य है स्नान नहीं सैकतामें विना स्नान सब होसकै। अब स्वयं जो व्यक्तहैं तिनको वर्णन करें हैं। सालिग्राम भगवान अनादि सिद्ध स्वयं व्यक्तिसाक्षात हैं जैसे सालिग्राममें भगवानको प्रागट्यहै तैसे और सब स्थलसूर्यादि वैकुंठादि

में नहीं है आमला के बराबर शिला अत्यन्त सूक्ष्म जो होय, हेब्रह्मन! ताके विषय में सदा लक्ष्मी सहित वसौं हौं यह भगवान ने कह्यो सालिग्राम में देव प्रगट भये द्वारावती मेंप्रगट भये दोनों संगम जहां हैं तहांहरि निकट ही रहैं हैं और भी कहैं हैं तैसे लक्ष्मी के साथ आप हरिरमण नहीं करैं अपने पुरमें तैसे नहीं रमैं शालिग्राम शिला में जैसे रमैं हैं–

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

अथातोब्रह्मजिज्ञासा विजिज्ञासस्वतद्ब्रह्मेति वदंतितत्वविदस्तत्वंयत्ज्ञानमद्वयं ब्रह्मेतिपरमात्मेति भगवानितिशब्दते इत्यादौ प्रसिद्धेन ब्रह्मशब्देन श्री कृष्णंविशिनष्टि ब्रह्मेति यत्रस्वरूपेणगुणैश्च वृहत्वं सब्रह्मशब्दस्यमुख्यार्थः अयमर्थः वृहिवृद्धावितिधातोरौणादिकेनमन प्रत्ययेन ब्रह्मपदस्यव्युत्पन्नत्वाद्योगवृत्यावृहद्वाचकत्वेतस्य वृहत्संकोचाभावात् देशकालवस्तु गुणपरिच्छेदशून्यत्वंपर्य्यवस्यतीत्यतोब्रह्मशब्दः भगवत्येवमुख्यवृत्तइति वृंहतोह्यस्मिन्गुणाइति श्रुतेश्च—

भाषा कांति प्रकाशिका

अब श्रीमदाचार्य देव ने श्रीकृष्ण को परब्रह्म व भगवान स्वयं जो वर्णन कियो ताकी पुष्टीके प्रमाण दिखावैं हैं तामें पहिले सूत्रक–है अथनाम कर्म करके पुण्य करके संचित जो लोकस्वर्गादिक तिनको नाश जाने ताके

पीछे तिन में अक्षय सुख नहीं है याकारणते ब्रह्मकी जिज्ञासा करनी सो ब्रह्म है ताकी जिज्ञासा करो। श्रीमद्भागवत में भी है तत्व के जाननवारे जातत्व को अद्वय ज्ञान बतावैं हैं सो ब्रह्मपरमात्मा भगवान इन शब्दों से बोल्योजाय है इत्यादि प्रमाणों से श्रीकृष्ण को ही वर्णन करै हैं। जोस्वरूप गुणों करके वढ्यो होय सोई ब्रह्म शब्द को मुख्यार्थ है बृहिधातु बृद्धि के विषय औणादि गण से मन्प्रत्यय करके ब्रह्मपद की व्युत्पत्तिभयी योग बृति करके भी बृहत कहवे से ताको संकोच नहीं यह ठीक भयो देश से परिछेदन ही काल करके वस्तु करके परिच्छेदनहीं गुण करके परिछेद नहीं याते ब्रम्ह शब्द भगवत–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

श्रीकृष्णएवमुख्यवृत्तः अन्यत्रत्वौपचारिकः यस्यपादनखज्योतिस्नातरं ब्रह्मेति शब्यते ब्रह्मणोहि प्रतिष्टाहं। पूर्वैतरन्यन्नखमंडलत्विषेत्यादौभगवद्धि ग्रहप्रभायाएवब्रह्मशब्दार्थत्वोक्तेश्च ब्रह्म परमात्मा भगवच्छद्वानांसामानाधिकरण्योक्तेश्च शुद्धेमहाविभूत्याख्ये परेब्रह्मणिशब्यते मैत्रेयभगवच्छब्दः सर्वकारणकारणे संभर्त्तेतितथाभर्त्ता भकारार्थोद्वयान्वितं नेतागमयितास्रृष्टागकारार्थः तथामुनेऐश्वर्यस्यसमग्रास्यवीर्यस्ययशसःश्रियःज्ञानवैराग्ययौश्चैवषरण्णांभगइतीरणावसंलित·

अभूतानिभूतात्मनोखिलात्मनि सर्वभूतेष्वशेषेषुवकारार्थः अतोऽव्ययः ज्ञानशक्तिबलैश्वर्यवीर्य ।

भाषाकान्तिप्रकाशिक

में ही मुख्य वर्त्तें है बढ़े होंय जाके विषय गुण यह श्रुति है सो श्रीकृष्ण ही में मुख्य ब्रह्म भगवान शब्द वर्तें है औरों में उपचारमात्रहैजाके नखकीज्योतिपरब्रह्मशब्दसेबोली जाय है सोई गीताजीमें कह्यो ब्रह्मकी प्रतिष्ठा मैं हूं श्री मद्भागवत में अक्रूरजी ने कह्यो जाके नखमन्डल की कांति करके पहिले बहुत तरते भये भगवद्विग्रहकी प्रभा को ब्रम्ह शब्द बोलें हैं ब्रम्ह परमात्मा भगवान शब्दों का सामानाधिकरण्य भी कह्यो है हे मैत्रेय भगवत शब्द शुद्ध महाविभूति के पति परब्रम्ह सब कारणके कारण के विषय बोल्यो जाय है भरण करवे वालो, पोषण करवे वालों ये दो भकारके अर्थ हैं। ले जायवे वारो, प्राप्त करायवे वालो हे मुने यह गकार को अर्थ है, समग्रऐश्वर्य-वीर्य-यश-श्री-ज्ञान-वैराग्य इन छयको भगवान बोलैहैं। ताभूतात्मा अखिलात्मा के विषय सब भूत वसें

हैं और सो समग्रभूतों में वसै यह वकारको अर्थ अव्यय है–

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

नेजांस्यशेषतः भगवच्छब्दवाच्या निविनाहेयैर्गुणादिभिः एव-मेषमहाशब्दोमैत्रेय भगवानिति परमब्रह्म भूतस्य वासुदेवस्यनामगः तत्रपूज्यपादार्थोक्तिपरिभाषासमन्वितः शब्दोयंनोपचारेणह्यन्यत्रह्युप-चारतः समस्ताः शक्तयश्चैतानृपयत्रप्रतिष्टतः तद्विश्वरूपवैरूप्य-रूपमन्यद्धरेर्महत् समस्तशक्तिरूपाणितत्करोतिजनेश्वरः देवतिर्यङम-नुष्याख्याचेष्टाबंतिस्वलीलया जगतामुपकारायनसाकर्मनिमित्तजा चेष्टातस्याप्रमेयस्यव्यापिकाव्याहतात्मिकेति वैष्णवेपराशरः।

भाषाकान्तिप्रकाशिका

ज्ञान शक्ति बल ऐश्वर्य वीर्य तेज यह सब भगवत नाम से बोले जाय हैं त्यागवे योग्य कोई गुण नहीं हैं याप्रकार हे मैत्रेय यह भगवान महाशब्द परमब्रम्ह भूतवासुदेव के नाम में प्राप्त भयो तामें पूज्यपादकी अर्थ उक्तिसे परिभाषा–सहित यह शब्द उपचार सहित कृष्णमें नहीं हैं औरों में उपचारते हैं हे नृप सब शक्ति जामें प्रतिष्ठित हैं सोई विश्वरूप्यवैरूप्य अन्य हरि को महतरूप हैं सोजनेश्वर सब रूप शक्तिदेवता पशुमनुष्य रूपकी अपनी लीला से करै हैं और सो लीला जगत के उपकार के अर्थ हैं कर्म के

निमित्त से नहीं है ताश्रप्रमेयकी चेष्टा व्यापिका वव्याहृतात्मिका है यह बृहद्वैष्णा वमें पाराशर जी ने कह्यो–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

एतत् सर्वमभिप्रेत्योक्तं श्रीभागवते अथापियत्पादनखाव-सृ ःष्टं जगद्विरंचयोपहृताहंगांभः। सेशंपुनात्यन्यतमोमुकुन्दात्कोनाम-लाके भगवत्पदार्थ इति एवमोंकारोपिभगवद्वाचकएव रक्षणार्थ-स्यावतेः खलुरूपमेतत् अवतेष्टिलोपश्चेतिसूत्रात् ओमिति ब्रह्मेत्यादि श्रुतेः एवंचतिसृणांव्याहृतीनांवर्ण त्रयात्मकोंकर व्याख्यानरूपत्वात् तासामपिभगवद्वाचकत्वमेव तथाहि भूरितिवहुत्वार्थस्यभवतेः कपि-रूपमेतत् इममेवार्थंभगवानाचार्य्योप्याहपरमिति परंपूर्णमित्यर्थः पूर्णत्वादि निमित्तमुपादायभूरादयः शब्दाभगवति प्रवर्त्तंते इत्याशयः एवमविभागाज्जगत उत्पादनात्भुव—

भाषा कांति प्रकाशिका

यही अभिप्रायसे श्रीमद्भागवत में कह्यो अथ जाके चरण नख से निकलो गंगाजल जगत गुरू ब्रह्मा जा की पूजा करैं, सो महादेव सहित सब को पवित्र करै तो ऐसे मकुन्द से अन्यतम और कौन लोक में भगवतपदार्थ है याही प्रकार ऊंकार भी भगवद्वाचक है अव धातु रक्षणके अर्थमें है ताको यह रूप है अवति कोटि नाम स्वरांत लोप होवे से ओं भयो ओं

यह ब्रह्म को नाम श्रुति में भी है याही रीति से तीन व्याहृति को वर्ण त्रयात्मक ओंकार रूप व्याख्या है तिनमें भी भगवान वाच्य हैं तथा भू यह बहुत अर्थ में है भवतिकोक्कपि प्रत्यय से यह रूप भयो यही अर्थ श्रीमदा-चार्य्य भगवान ने भी कह्यो परं नाम पूर्ण पूर्णादिनि मित्त को लेके भूरादिक शब्द भी भगवान में वर्त्तें हैं याप्रकार अविभागते जगत के उत्पादन करवेते भुवः

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

अंतर्भाविण्यर्थस्य भवतेरेवक्रप्रत्ययरूप सुखरूपत्वात्स्व- स्वशब्दो हि सुखवाची यन्नदुःखेनसंभिन्नंनचग्रस्तमनंन्तरं अभिलाषोपनी तं च तत्पदंस्वः पदास्पदमित्यादौप्रसिद्धः एवंगायत्रीप्रतिपाद्योपिभगवा-नेव तथाहि जगत्प्रसवहेतुत्वात् सविता भगवानेव भरणगमनयोगेन भर्गशब्दर्थोभगवानएतेनगायत्र्यांयोभर्गोनोअस्माकंधियः प्रचोदयात् प्रेरयेत्तस्यसवितुर्देवस्यतद्व रेण्यंरूपंधोमहि चिंतयाम इति भर्गना-मकः सविताप्रतिपाद्योदृश्यते तत्कथंभगवत्परत्वमित्यपास्तं ध्येयः सदासवितृमंडलमध्यवर्ती त्यागमविरोधाच्चत्र ऐवंपुरुषसूक्ते दिभग-वानेवप्रति पाद्यः तथाचश्रुतिः

भाषा कांति प्रकाशिका

अंत भाविणि अर्थ भवते को क्रप्रत्यय रूप है सुखरूपस्व स्वशब्द सुखबाची है जो

दुख करके भिदो नहीं जो पीछे ग्रस्यो नहीं
नहीं जो अभिलाषा को प्राप्त करावै ताको पद
सुखपद कोस्थान है इत्यादि प्रसिद्ध है
याहीरीति से गायत्री में भी प्रतपाद्य भगवान
हैं तथाहि जगत के उत्पत्ति के हेतु से
सविता भगवान हैं भरण गमन के योग करके
भर्ग शब्द को अर्थ भगवान हैं गायत्री के
बिषय जो भर्ग है सो हमारी बुद्धि को प्रेरणा
करौ तासविता देवता को हम श्रेष्ठ रूप से
चिंतवन करै है कोई जो या अर्थ से शंका
करै है कि भर्ग नाम सूर्य को है तो गायत्री
भगबत पर कैसे होयगी तौ ऊपरके सिद्धांतसे
समाधान भयो जो भर्ग नाम भगवानको
न होय तौ आगम में लिख्यो है कि सविता
मन्डल के बीच में वर्त्तै सो ध्यान करवे योग्य
है तासे बिरोध होय ऐसे ही पुरुष सूक्त में भी
भगवान प्रति पाद्य हैं सोई श्रुति में लिख्यो है

सवायंपुरुषः सर्वासुपुर्षु परिशयोनैनर्नकिंचनसंवृत्तमिति

आवृत्तमज्ञानमित्यर्थः सर्ववेदार्थत्वंभगवतः सिद्धंसर्वेवे-
दाय पदमामनंतीत्यादिश्रुतेः

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

सो निश्चय यहपुरुष सवपुरोंके विषय शयनकरैहै
वासे कुछ छिपो नहीं सववेदको अर्थ भी भगवत
पर प्रसिद्धहै सबवेद जाके चरण को मनन करैहैं
इत्यादि श्रुति भीहै।अबयह विचारहैकि जिन श्री
कृष्णको ऊपरमें प्रतिपादन कियो सो कौनहैंसोई
आचार्य भगवान वर्णन करैहैं१ शान्ति कान्ति
गुणों के मन्दिर स्थिति सृष्टि लयमोक्षकेकारण
व्यापक परम सत्य अंशीऐसे नन्द घरके प्रकाशक-
रवेवाले तिनको दन्डवत करौहौं श्रीभगवतनाम
के कौमुदी कारोंने कृष्ण शब्दको तमालसमान
श्याम कान्ति यशोदा के स्तन पान करवे वालेपर
ब्रह्म में रूढ वतायोहै प्राचुर्य करके तामेंही प्रयोग
करवेसे प्रथमप्रतीतियशोदासुतमेंही होयहैयद्यपि
प्रसिद्ध शास्त्रमें वसुदेव देवकी के बेटा हैं सोई लि
ख्योहै २ वसुदेव के वेटा देव कंसचाणूरके मर्दन
करवे वाले देवकीके परमानन्दरुपरोसे कृष्णजगत

गुरू को दन्डवत करोहौं तथापि विशेष अभिप्राय नन्द के आत्मज परहैसोईश्री शुकदेवजीनेश्रीभागवतमे वर्णानकियो

भाषाकांतिप्रकाशिका

नन्द१ तौ अपने आत्मजके उत्पन्न भयेमें बड़ोउदार मन जिनको अहलाद जन्म्यो इत्यादि उत्पन्न होनो और आत्मजत्व रूप से उत्पन्न होनो और भी यशोदा सुत पशुप अंगजनन्द सूनना वल्लभी नन्दन इत्यादिक नन्दके बेटा में प्रयोग बहुत हैं शास्त्र सिद्धांत से भी नन्द आत्मज में प्रयोग बहुत हैं पर जो सिद्धांत सुगम रीति से विना कष्ट कल्पना सबके हृदय में आपात करके मोद बढावै सोठीक है भगवान श्री कृष्णा कोई के पति पुत्रादिक नहीं हैं जो द्रुढ करके उन से जो संबंध बांधै ताको ताही रीतिसे सुख विधान करैं हैं देवकी के पुत्र

१—शान्तिकान्तिगुणमन्दिरं हरिं स्थेमसृष्टिलय मोक्षकारणं ॥ व्यापिनंपरम सत्य मंशिनं नौमिनन्दगृहचंदिनं प्रभुं ।
२—वसुदेव सुतंदेवंकंसचारणूरमर्दन ॥ देवकीपरमानन्दं वन्देकृष्नजगद्गुरूं ।

होवे में भी दृष्टांत दियो कि जैसे पूर्व दिशा में चन्द्रमा उदय होय श्रीवसुदेव देवकी को पुत्र भावतौ है पर ऐश्वर्य मिलो है श्रीकृष्ण २ महा-राजने ही कह्यो कि तुमने मो में ब्रह्म भाव और पुत्र भाव बारम्बार कियो सो तम मेरी परागतिको प्राप्तहोउगे जन्म समय में (विदतोसि भवान साक्षात् पुरुषःप्रकृतेपरः)इत्यादि स्तुति करनो भी प्रसिद्ध है तासे उनको पुत्र भाव दृढ नहीं श्रीकृष्ण मानेके पुत्र हैं ब्रह्माजीकी नासिका से वाराहजी प्रगट भये पर उन के पुत्र नहीं स्तम्भसे नृसिंहजीको प्राघट है पर स्तम्भनन्दन नहीं उत्तराके उदर में जायवे से भी परीक्षत के भैया नहीं भये कारण यह कि उनने माने नहीं तासे श्री नन्दयशोदा ही पक्को पुत्रभाव करते भये तासे नन्दात्मज-

---

श्रीभगवतेनन्द १ स्त्वात्भजोत्पन्नेजाताल्हादोमहामनाः

श्री भागवते२ युवांमांपुत्रभावेन ब्रह्मभावेन चासकृत् ॥
चिंतयन्तौकृतस्नेहौयास्येथेमदगतिंपरां ।

में कोई प्रकारको संदेह नहीं सोई ग्रंथकारको पूज्य पाद श्रीगुरुदेव भट्टजी महाराज ने कह्यो वसौ मेरे नयनन में दोऊ चन्द। गौर वरण बृषभानु नन्दनी श्याम वरण नद नन्द ॥ श्री आचार्य ग्रंथकार श्रीकृष्ण को स्वरूप सर्वैश्वर्यमान व माधुर्य्यवान ऊपर वर्णन कर आये हैं जाको जैसो भाव ताकौ तैसे रूप से दरसें हैं प्राघट समय ब्रज मथुरा द्वारका तीन प्रकार की लीला है। ब्रजवासी मात्र को माधुर्य शुद्ध को भाव है ईश्वर्य कबहू भास जाय है पुरवासियों को सर्वदा ईश्वर्य ज्ञान है माधुर्य कबहूं कबहूं उदय होय है ऐश्वर्य नाम प्रभुता को है तासे संकोच भय संभ्रमादि होय हैमाधुर्य नाम वंधु समान जानै शील गुण रूप लीला वयस मनकी हरवे वाली हैं तासे शुद्धदृढ़ प्रीति होय है ऐश्वर्य माधुर्य दोनों एक अधिष्ठान में प्राप्त भये से जो होयहै ताके उदाहरण दिखावै जब कंसको मारके श्रीकृष्ण१ देवकी वसु-

नहीं रही फेर अपने बन्धुवों को आयके सुखदेतो भयो बडो मंगल है कोई पूछे कि असुर कैसे मर गयो ताको सीधो सिद्धान्त है ५ हिंसक अपने पापसे आप मर गयो बेटा हमारो साधू समता करके भय से छूट गयो और जो कोई अद्भुत पराक्रम को काम गोवर्धनादि धारण देखैं तामें गर्गाचार्य के बचन से समाधान होजाय कि नन्द ६ यह तुम्हारो बेटा नारायण समान कीर्त्ति अनुभाव गुणों में होयगो याको तुम पालन करौ यह वात्सल्यवारेनको वर्णनकियो

१—दृष्ट्वेदंमानुषंरूपं तवसौम्यजनार्दन ॥ इदानींमस्मिसंवृत्तः सचेतः प्रकृतिं गतः ।

२—श्रीमद्भागवते अहंममासौपतिरेष मेसुतोव्रजेश्वरस्याखिलवित्तपासती ॥ गोप्यश्चगोपाः सहगोधनाश्च मेयन्मायथेत्थं कुमतिः समेगतिः ।

३—इत्थं विदिततत्वायागोपिकायांस ईश्वरः ॥ वैष्णवींव्यतनोन्मायां पुत्रस्नेहमयींविभुः ॥ सद्योनष्ट स्मृति गोंपीसारोप्यारोहमात्मजमिति ।

४—किनस्तपश्चीर्णमधोक्षजार्चनं पूर्त्तेष्टदत्तमुतभूतसौहृदम यत्सम्परेतः पुनरेववालकोदिष्ट्यास्वबन्धूनप्रणयन्नु पस्थितः

५—श्रीमद्भागवते हिंस्रः स्वपापेनविहिंसितः खलः साधूसमत्वेनभयाद्विमुच्यते ।

६—दशमे तस्मान्नन्दात्मजोऽयं तेनारायणसमोगुणैः ॥ श्रिया कीर्त्यानुभावेनगो पायस्व समाहितः ।

सखा सब माधुर्य्यमें भरे हैं शुकदेवजीने कह्यो १ श्री दामां से हारे भगवान कृष्णा अपनी पीठपर चढावते भये और कांत भाव वारिन को तौ श्री परीक्षत जी के प्रश्नमें ही प्रसिद्ध है २गोपी कृष्णा को केवल कांत जानती भयीं ब्रह्म नहीं जानती भयीं। कोई वादी शंका करै यह ऐश्वर्य ज्ञानको आवरण माया कार्य अज्ञान को प्राप्त करावै है ताके लिये कहैं हैं परम ऐश्वर्यादि ज्ञानवारों को भी जब प्रीति प्रवल बढै तब ऐश्वर्य ज्ञान तिर-स्कार पावै है श्रीदेवहूती कपिलदेव जी के

३उपदेश से सब तत्त्व जानतीं भयीं पर बेटा कपिलदेव के गये पर विरह से ऐसी व्याकुल भयीं जैसे वत्सला गौबछरा बिना जो वसुदेव देवकी भगवान के जन्म समय महातत्व प्रतपादक स्तुति करते भये सोई बोले ४ तुम्हारे हेतु से हम

१—दशमे उवाहभगवान् कृष्णो श्रीदामानं पराजितः।

२—कृष्णं विदुः परंकांतं नतुब्रह्म तयामुने।

३--तृतीयस्कंध श्रीभागवत वनंप्रवृजतेपत्यावपत्यविरहातुरा ज्ञात तत्वापि अभून्नष्टे वत्स्ये गोरिववत्सलेति।

४--दशमे समुद्विजेभवद्धेतोकं सादहमघोरधीः।

अधीर बुद्धि कंससे बहुत उद्वेग पावे हैं १सर्वज्ञ बल्देबजी ने जब सुनो कि अकेले श्रीकृष्ण रुक्मिणीके हरिवे को गये हैं तौ बड़ीसेना लेके स्नेहसे भरे भये कुन्दनपुर आबते भये २युधिष्ठिरजी श्रीकृष्णके तत्त्व जानने बाले द्वारिका जाती समय चतुरङ्गनीसेना संगकर देते भयेतासे माधुर्य ऐश्वर्य को आच्छादन करले सो परम प्रेम को कार्य है ब्रह्मज्ञान जासे नीचे रहे तहां माया कहां पहुंचै इन माधुर्य भाव बारों को सब से श्रेष्ठ भी बताये हैं गिरराज धारणके अंतमें सब ब्रजबासियों ने जब श्री कृष्णसे पूछी कि तुम कौन हो यक्षराक्षसदेब गंधर्ब कोई हो तब भगबानने कह्यो कि जो तुमको मेरे सम्बन्ध से लज्जा न हो तौ मैं तुम्हारो बान्धब जनम्यो हौं तामें बात्सल्य बारी यशोदा को सुकदेबजी बोले

१—दशमे श्रुत्वेतद्भगवान् रामेति कृष्ण चैकंगतंहंतु कन्या कलहशंकितः बलेनमहतासार्द्धंभ्रातृस्नेहपरिप्लुतः त्वरितः कुण्डिनं प्रायाद गजाश्वरथपत्तिभिः ।

२—दशमे अजातशत्रुः पृतिनां गोपीथायमधुद्विषः॥ परेभ्यः शङ्कितः स्नेहात्प्रायुङ्क्त चतुरङ्गणी ।

१ यह गोपिका के बेटा कृष्ण जैसे भक्तिवारेन को सुख पूर्वक मिलें हैं तैसे ज्ञानियोंको-औरआत्मभूतनको नहीं मिलें और यसोदा के तो बेटा ही हैं सख्यरस वारिनको भाग्य श्रीमद्भागवत में है२ जिन श्रीकृष्णाकी चरणरज बहुत कष्ट करके मन जिनने वश कियो ऐसे योगियों को भी दुर्लभ है सो उन बालकोंके नेत्रन के आगे विराजै अहोब्रज के सखावों के का भाग्य वर्णन करैं कान्त३ भाव वारियोंकी महिमा लक्ष्मी जी से भी अधिक श्रीउद्धवजी ने वर्णनकरी याप्रकार परम स्नेह वारे ब्रजभक्त हैं तासे दृढ पुत्र भाव श्रीनन्दयशोदा के होवे से उन्हींके पुत्रहैं अब उन्हीं श्रीकृष्णाके आचार्य निम्बार्क भगवान जन्मकर्मादि वर्णन करें हैं

१—दशमे नायंसुखायोभगवान देहिनांगोपिकासुतः ज्ञानिनां चात्मभूतानां यथाभक्तिमतामिह ।

२—श्रीद्भागवते दशमस्कंदे यत्पादपां सुर्वहुजन्मकृच्छ्रतोघृतात्मभिर्योगिभिरप्यगम्यः ॥ सएवयद्दृग्विषयेस्व यं स्थितः किंवर्णय नेदिष्ट महोव्रजौकसाँ ।

३—दशमे नायं श्रियोङ्गउनितान्तरतेः प्रसादः स्वर्य्योषितां नलिनगन्धरुचांकुतोऽन्या ।

जन्मकर्म१ गुणरूपयोवन कवि आपके दिव्य बतावैं हैं आपचित मंगलके स्थान हौ यहवेद को वादपायो जाय है गीताजीमें भी भगवान ने कह्यो २जन्मकर्मगुणरूप मेरे दिव्य हैं ऐसे जोतत्व करके मोको जानै सो देह छोड़ के मोकोप्राप्त होय संसारमें नहीं आवै जन्म१ कर्म२ गुण३ रूप४ योवन५ नाम६ लीला७ धाम८ इत्यादि तामें पहिले जन्म बर्णन करै हैं श्री वसुदेवके घर श्री नन्दके घर

वसुदेवकेघर जैसेश्रीमद्भागवतमें ३आधीरातउत्कट अंधकारमे जबसबजनोंकी उत्कट याचना भयी तासमय सबहृदयरूपीगुहामें बिराजैंजोबिष्णूदेव रूपीदेवकीकेविषयप्रगटमये जैसेपूर्णचन्दमापूर्व

१—श्री नेम्बार्क वाक्य जन्मकर्म गुणरूपयोवनं दिव्यमेवकवयो वदंतिने ॥ श्रौतवादुपलभ्यते तथाचानिर्विशेषचिन्मंगलालये ।

२—श्रीनद्गीतासु जन्मकर्मचमेदिव्यमेवंयोवेत्तितत्त्वत ॥ त्यक्त्वादेह पुनर्जन्मनैतिमामेति सो र्जुन ।

३—श्रीमद्भागवतेदशमे निशीथेतमउद्भूते जायमानेजनार्द्दने देवक्या देवरूपिण्यां विष्णुसर्वगुहाशयः ॥ आविरासीद्यथा प्राच्यां दिशीन्दुरिवपुष्कलः ।

दिशामें प्रगटहोय २ नन्दके घरमें तहांही श्री भागवतमे गोपियोंने जबयशोदाके सुतउत्पन्न भयोयहसुनी बड़ेहर्षको प्राप्तहोके वस्त्रभूषणश्रंजनादिकसे अपनीआत्मा कोभूषित करतीभयी नबीनकुंकुमकी परागतासे मुखकी शोभा अथवा नवीनकुंकुमके परागकीसी मुखकमल कीकांति जिनकोबधाई समयकीभेटलेके बडी जल्दी नन्दघर जातीभयीपुष्टनितम्व चलायमान कुच जिनके अब रूप वर्णन करैं हैं रूपनामविग्रह जो सच्चिदानन्द घनतामें सुन्दर रमणीय अंगों का यथावत निवेश और शोभा तामे पहिले भगवद्विग्रहसच्चिदरूप है ताको सिद्धांत श्रुति स्मृतिके प्रमाणसे श्रीमदाचार्य ग्रंथ कर्तावर्णन करैं हैं और जो मायासे भ्रम पायके अन्यथा विवाद करैं है उन को निरास भी है

---

२ दशमे गोप्यश्चाकर्ण्य मुदिता यशोदायाः सुतोद्भवम् । आत्मानं भूषयांश्चक्रुर्वस्त्राकल्पांजनादिभिः नवकुङ्कुमकिञ्जल्कमुखपङ्कज भूतयः । वलिभिस्त्वरितं जग्मुः पृथुश्रोण्यश्चलतकुचाः

अथविग्रहस्य नित्यत्वेश्रुतयः आदित्य वर्णं तमसः परस्तात् यदा पश्यः पश्यतेरुक्मवर्णं ऋतं सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं कृष्ण पिंगलम् विश्वतश्चक्षुः सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् पादोऽस्य विश्वा भूतानित्रिपादस्या मृतंदिवि । तस्माद्विराडजायत वेदाहमेतं पुरुषं महांतं यएषोंतरादित्ये हिरण्मयः पुरुषोदृश्यते एकोनारायणा सीन्नब्रह्मा न च शंकरः पुराकल्पायायेस्वकृत मुदरी कृत्यविकृतिं शेते य थोर्णनाभिः सृजते गृह्णते चेत्याद्याः एवं चावतार विग्रहाः सर्वेपि नित्याएव तथाहि अंतरतः कूर्मपर्यंतं इत्यारभ्य पूर्वमेवाहमिहा समांति तत्पुरुषस्यपुरुषत्व मिति च श्रुतेः किंचआनन्दरूपम मृतंयद्विभातिआ

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

भगवद्विग्रहके नित्यतामें श्रुति आदित्य वरणतमसे परे जा समय देखवे वारो सुवर्ण वर्ण ऋतसत्य परब्रह्म पुरुष कृष्ण पिंगलकोदेखै है सब ओर चक्षु हजारों सीसको पुरुष हजारों नेत्र हजारों पांव चरण में जाके विश्व के भूत मात्र त्रिपादकी अमृतस्वर्गमें तासेविराड उत्पन्न भयो या महांत पुरुषको मैं जानूं हूं आदित्यके अंतर यह हिरणमय पुरुष दीखै है एक पहिले नारायण हीरहे नब्रह्मा नमहादेव पहिले कल्पके अंत में सब विकार को उदरमें धरके सोवै है जैसे मकड़ी जाला रचै और निगलै इत्यादिक याहीप्रकार

अवतार विग्रह भी सबनित्य हैं तैसे ही अंतरते कूर्मपर्यंत आरंभ करके पहिलेमें ही यहांहो सोपुरुष को पुरुषपनो है यह श्रुति आनन्द रूप अमृत जो प्रकाश पावै है नखतें लेके सब आनन्दरूप है कौन आत्मक भगवान है यह प्रश्न होतसंते

सिद्धांतरत्नाजलिपूर्वार्द्ध

प्रणखात्सर्वएवानन्द:किमात्मको भगवान् ज्ञानात्मक ऐश्वर्य्यात्मक इत्यादि श्रुतेर्भेदाभावेपि अहिकुन्डलन्यायेन विग्रहवत्वोपपत्तिः एवञ्च संख्याकानां श्रीगोपीनांरासमंडले एकस्मिन्नेवक्षणे श्रीकृष्णस्या नेक दर्शनादेकस्यापि तस्या वतारिण अनेक रूपवत्तोपपत्तिः। यत्तु चन्द्रमण्डलगता मृत सङ्घा तन्या ये न चेतनेतरानधिष्टित भौतिक देह समवेतत्व मित्यवतार विग्रहेष्वयं विशेषइति स्वीकृत्य दृष्वी ब्रह्म पर विप्र प्रविश्य यमुनाजल मित्यारभ्य सतुदान पतिस्तदेत्यंत विष्णु पुराणं चोदाहृत्य इति मामनुष्य देहकवंचिता। प्राकृतदेह परमेश्वर ज्ञानमक्रूरस्य जातं इदं च दिव्य रूपं कदाचिदक्रूरोद्धवादि परम भागवतैर्दृश्यते

भाषाकान्तिप्रकाशिका

ज्ञानात्मक ऐश्वर्यात्मक यह उत्तर है इत्यादि श्रुति करके यद्यपि देह देहीमें भेद नहीं है तथापि सर्प कुन्डलन्याय करके विग्रहकी उपपत्ति है जब कुन्डल आकार सर्प रह्यो तब कुछ अन्य वस्तु मिलाई नहीं गयीं जासे कुण्डल प्रतीतभयो सर्पको शरीर मात्रहै जब सर्प लम्बो भयो कुण्डल नरह्यो तब कुछ वामेसे निकर न गयो ऐसे ही असं

रुव्य श्रीगोपियों के रासमण्डलमें एकही क्षणमें एक हीकृष्णा के अनेक रूपदर्शन होते भये साक्षात अब तारी श्रीकृष्णा से अनेकरूप होजानो असंभव नहीं है और कोई एकको ऐसो प्रलाप है कि जैसे चन्द्र मन्डलमें अमृत को संघात है ता न्यायसे भग— वानके सिवाय चेतन तौ और है नहीं परभौतिक देहको अबतार विग्रह में मिलाप है यह विशेष है यह स्वीकार करके हे विप्र अक्रूर यमुना जल में प्रवेश

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

भौतिकंतुसर्वैरितिकस्यचितप्रलापः तदसत् श्रीमद्भागवतादि विरोधात् तथाहि अस्यापि देववपुषोमदनुग्रहस्यस्वेच्छामयस्यनतु- भूतमयस्यकोऽपि नैशेमहित्ववसितुमनसांतरेणसाक्षात्तवैव किमुता- त्मसुखानुभूतेरिति वृहद्वैष्णवेच योवेत्तिभौतिकंदेहंकृष्णस्यपरमात्मन ससर्वस्याद्बहिः कार्यः श्रौतस्मार्तविधानतः मुखंतस्यावलोक्यापि- सचैलंस्नान माचरेत इति महाभारतेपि नभूत संघ सं स्थानोदेहोस्य- परमात्मनइति ।

भापाकान्तिप्रकाशिक

होके परब्रह्मकी ध्यान करतो भयो यहां ते आरम्भ करके सो दानपति या अंतपर्य्यंत विष्णु पुराण को उदाहरण करकें मनुष्य देह से वंचित नहीं अप्राकृत देह परमेश्वर ज्ञान

अक्रूर को उत्पन्न भयो इति यह दिव्य रूप कबहूं अक्रूर उद्धवादिक परमभागवतोंकीदिखाई पड़े हैं भौतिक देह सब देखें हैं यह उन को कहनो असत है श्रीमद्भागतादिक से विरोध पडै है सोई दशमस्कन्द में ब्रह्माजी बोले हे देव मेरे ऊपर कृपा करके जो यह अवतार वपु आपने प्रकाश कियो यह स्वभक्तों की इच्छा मय है भूतमय नहीं है कोई भी अथवा ब्रह्मा भी मन अंतर करके याही की महिमा जानवे को सामर्थ्य नहींहै। यहवपु शुद्ध सत्वमय अर्थात चिदानन्द है, तब फिर अपने सुखको अनुभव जामें ऐसे आप अबतारी की महिमा न जान सकै ताकोका कहनो। बृहद्वैष्णवमें भीजो कोई कृष्ण परमात्मा को भौतिक देह जानै है, सो सब श्रौत स्मार्त विधानते बाहिर करवे योग्य जो वैष्णव

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

प्राकृतत्वस्योपाधित्वाच्च तमेतंगोविंदंसच्चिदानन्दविग्रहं अत स्री पुष्पसंकाशंनाभिस्थाने प्रतिष्ठितं ।दुर्दर्शमतिगंभीरमजंश्यामंवि-शारद इत्यादि श्रुतिभ्यश्च ।

भाषा कांति प्रकाशिका

ताको मुख देख लेय तौ सचैलस्नान करै। महाभारत में भी इन परमात्मा को देह भूतों के समूह को नही है १ताहीं श्रीअङ्कके उद्देश्य से शुकदेवजीने कह्यो जाको अंतर नहीं वाहिर नहीं जाको पूर्व नहीं पश्चिम नहीं पूर्वपश्चिम वाहर भीतर जगत जामें और जगतरूप जोता अव्यक्त मनुष्याकार अधोक्षज को जैसे कोई प्राकृत को वांधै तैसे वांधलियो या श्लोक से अप्राकृतता सिद्ध है प्रेम पराधीन चिदानन्द को प्रेम से यशोदा ने बांध लियो। श्रुति में भी है गोविन्द सच्चिदानन्द विग्रह अतसी पुष्प सो वरण नाभिस्थानमें प्रतिष्ठित दुर्दर्श अतिगंभीर अजन्मा श्याम विशारद इन प्रमाणों से कोई सन्देह नहीं।

रूप दो प्रकारको मथुरा द्वारिका में चतु-र्भुजव्रजमें दोभुज तामें पहिलो मथुरामें जन्म

१—श्रीमद्भागवत नचान्तर्न बहिर्यस्य न पूर्वं नापिचापरं ॥ पूर्वापरं बहिश्चान्तर्ज गतो योजगञ्चय : तंमत्वा ॥ त्मजमव्यक्तं मर्त्य-लिङ्ग मधोक्षजम् ॥ गोपिको लूखलेदाम्ना वबन्ध प्राकृतंयथा ।

१ ताअद्भुत बालको वसुदेव जी दखते भये कमलवत नेत्र जाके चार भुजा शंख चक्र गदा आयुध उठाये श्री वत्सको चिन्ह गले से कौस्तुभकी शोभा पीतवस्त्र निवीड वादरसो सौभग महा अमोल वैदूर्य्यमणि के किरीट कुन्डलतिन की सहस्र कांति केशों पर पडी उदार कांची कंकणादि करके विरोचमान विराजमान हैं द्वभुजयथा भागवतेदशमे२मोरको मुकुट नटवर वपु कानन में कर्णिका सुवर्णवत चटकीलो पीताम्बर पांच वरणों के फूलों की माला वै जयन्ती पहिरे वेणु के छेदों को अधर-सुधा से पूरते गोप-सखा कीर्ति गावें, तिन के समूह को संग लिये अपने चरण के सुख देवे वाले बृन्दावन में प्रवेश होतेभये श्री अंगके लक्षण वर्णनकरैं

१—श्रीमद्भागवतेदशमे तमद्भुतंवालकमं बुजे क्षणंचतुर्भुजं शंखचगदायुदायुधुम् श्रीवत्सलक्ष्यं गलशोभिकौस्तुभंपीताम्बरं सान्द्रपयोंदसौभगम् महार्हवैदूर्यकिरीट कुन्डल त्विषापरिष्वक्त सहस्रकुन्तलम् उद्दामकांच्यं गदकंकणादिभिर्विरोचमानंवसुदेवरोक्षत ।

२—द्विभुजयथातत्रैव वर्हापीडंनटवरवपुः कर्णयोः कर्णिकारंविभ्रद्वासः कनिककपिशंवैजयन्तीच मालाम् रध्रान्वेणोरधरसुधया पूरयन्गोपवृन्दैः बृन्दारण्यं स्वपदरमणं प्राविशद्गीतकीर्त्तिः ।

श्रीकृष्णके श्रीअङ्गमें वत्तीस महतलक्षण हैं श्री अङ्गके सात स्थान में रक्तिमां(ललाई) छय अंग में तुङ्गता(उचाई) तीन अङ्गमें विस्तार तीन अङ्गमें खर्वता(छुटाई)तीनअंगमेंगम्भीरता पांच अंगमें दीर्घता पांच स्थानमें सूक्ष्मता सोई कात्यायनसंहिता में नेत्रके अंतमें हाथ चरण के तलमें तालूजिह्वा अधरोष्ट नखइन सातस्थान में ललाई वक्षस्थल स्कंध नख नासिकाकटि मुख इनछय स्थलमें उचाई नासा भुज नेत्र हनु (कपोलकोपरिभाग)जानु इन पांच अंगमें दीर्घता त्वचा केश लोमदांत हाथो के अंगुरी के पर्व इन पांच स्थल में सूक्ष्मता तथा वक्षस्थल भालकटि इन तीन अंग में विस्तार ग्रीवाजंघा तथा शिशन इन तीन अंगमें खर्वता छुटाई नाभि स्वर बुद्धि इन तीन अंगमें गम्भीरता ये वत्तीस लक्षण महतपने के कृष्णके श्री अंग में हैं

३—तथाकात्यायने अक्ष्यंतहस्तांघ्रितलेषुतालुजिह्वाधरोष्टेषु-नखेषुशौएयं वक्षः स्थलस्कंधनखेषुना साकट्याननेषून्नमताचयस्य दोजानुचक्षुर्हनुनासिकासुदैर्घ्यं तथा सूक्ष्मतदोपलक्ष्याः त्वक्केशदंतांगुलिहस्तशाखास्वग्रंथयोवक्षसिभालकट्योः तानस्त थाखर्वतयात् युक्ताग्रीवाचजंघाचतयाचमेहनं नाभिः स्वरान्ताः कृतयोगांभीराद्वा वशादेतानिसुलक्षणानि ।

[1]दशममे हस्त कमल की शोभा अक्रूरने वर्णन करी जाहस्तकमलकी इन्द्र पूजा करते भये और बलि महाराज जाकी पूजा करके तीन जगत की इन्द्रता पावते भये मुमुक्षुवोंको संसार भय दूर करवे वालो सकामियोंको अभ्युदय देवे वालो और रासक्रीडाके विहार में सौगन्धिक कमल कीसी सुगंधी जामें आवैं ऐसे करकमल गोपियों के मुखको श्रमजल पोछै [2]तहां ही चरण कमल वरणन कियो जाचरण कमलको ब्रह्मा महादेवादिक देवता अर्चन करैं ऐसे परम ऐश्वर्य वारो लक्ष्मी देवी पूजा करैं यह अतिशय सौभाग जाको मुनि भागवतों के सहित अर्चन करैं ऐसो परमपुर्षार्थ रूप है औरसखावोंसहित जो चरण गाय चरायवे जाय यह

१—श्रीमद्भागवते दशमे। समर्हणंयत्र निधाय कौशिकस्तथा बलिश्चाप जगत्त्रियेन्द्रतां। यद्वाविहारे व्रजयोषितां श्रमंस्पर्शेनसौगंधिक गंध्यपानुदत्

२—तत्रैव यदर्चितं ब्रह्म भवादिभिः सुरैः श्रियाचदिव्यामुनिभिः ससात्वतैः गोचारणायानुचरैश्चरद्वनेयद्गोपिकानां कुचकुंकुमाङ्कित

दयालता वर्णन करी और जो गोपियों के कुच कुमकुम करके अंकित यह माधुरी कही सो चरण प्रेम मात्र से सुलभ हैं चरणचिन्ह यथा दक्षिण चरणमें ग्यारह ध्वजा१ पद्म२ वज्र३ अंकुश४ यव५ स्वस्तीक६ ऊर्द्धरेखा७ अष्टकोण८ शंख९ चक्र१० छत्र११ वामचरण में आठ त्रिकोण१ कलश२ अर्द्ध चन्द३ अम्बर४ गोष्पद५ मत्स्य६ जम्बूफल ७ इन्द्रधनुष दोनोंचरणमें १९

१चरणरजकी महिमा वर्णन करैं हैं श्री मद्भागवत दशममे श्रीलक्ष्मी जिनने वक्षस्थल में स्थान पायो तुलसी सहित जिन के चरण कमल रजकी चाहना करैं और दास सब सेवन करैं जालक्ष्मींकी कृपा कटाक्षके अर्थ और देवता प्रयास करैं हैं गोपी कहैं हैं तैसेहीं हम भी तुम्हारे चरण रजकी प्रपन्न हैं अब कर्म बर्णन करें २एकदशमेकर्म पुण्य प्राप्त करायवेवाले तत्काल

२—श्रीमद्भागवते एकादशे कर्माणि पुण्यनिवहानि सुमंगलानि गायज्जगत्कलमला पहराणि कृत्वा। कालात्मनानिवसताय दुदेव गेहे पिण्डार्क स मगमन्मुनयो विसृष्टाः

१ श्रीर्यत्पदांबुज रजश्चकमे तुलस्या लब्धापि वक्षसिपदंकि लभृत्यजुष्टं। यस्याः स्ववीक्षण कृतेन्यसुर प्रयासस्तद्वद्वयंचतत्पाद रजः प्रपन्नः

सुख देवे वाले कलियुग के मल हरवेवाले सब जगत गावै ऐसो करके कालात्माभगवान यदु देव उग्रसेन के घर वशते भये और मुनिपिंडा र्कमें बसते भये अश्व मेधादिक कर्म पुण्य उत्पन्न करैं परतत्काल सुख नहीं होय पुत्र लालनादि से ततकाल सुख होय परपाप नष्ट नहीं होय प्रायश्चित्तादिकों से पाप नष्ट होय पर दुर्वा- सना नहीं जाय भगवत कीर्तनादिक से ततकाल पुण्य होय सुख होय सब पाप नष्ट होय समूल वासना जाय और सो भजन रूपी पुण्य नाशमान नहीं सोई १ दशम के अंत में शुक- देवजीने कह्यों या प्रकार हरिने अपने भक्ति धर्म रक्षाके अर्थलीला मूर्ति प्रगट करी और ताके अनुरूप विडम्बन कियो वेकर्म

हरि के संसारी कर्मों के नाश करवे वाले हैं तासे जाके उन के चरणों के आनन्द लेवे की इच्छा होय तो यदूत्तम के गुण कर्म सुनै वे

१—दशमे । इत्थंपरस्य निजधर्मरिरिक्षयात्त लीलातनोस्तद नुरूपविडम्बनानि । कर्माणि कर्मकषणानि यदूत्तमस्यश्रूयादमुष्यपद योरनुवृत्ति मिच्छन्

कर्म जैसे गिरधारण अघविदारणादि इन एक
एक में परमाद्भुतता भरी है अघासुर के पेट में
भोजन के छीके लेके सब सखा सहित आप गये
पर जठरा अग्निसे सखादिकोंको का चर्चा भोजन
की सामिग्री भी न विगडी योगियों के ध्यान
में न आवैं सो साक्षात पेट में गये असुर की
ज्योति श्री अंग में प्राप्त भई ऐसे सब कर्म
अलौकिक आत्मा की महिमा को प्रगट करैं हैं
गुण यथा प्रथम स्कन्धमें पृथ्वी जीने वरणनकिये
१सत्यनाम यथार्थबोलनो २शौचअर्थातशुद्धता
३दयापरायोदुखनसह्यो जाय ४क्षांतिनामक्रोध
आये पर भी चित्त संयम करलेनो ५त्यागनाम
मांगवे वाले को हाथ से देनो ६संतोष नाम अलं-
बुद्धि ७आर्जवनामसरल स्वभाव ८शमनाम मन
निश्चल करनो ९दम नाम बाहिर की इन्द्री
निश्चल करनो १०तप नाम अपनो धर्म आच-
रण करनो ११साम्य नाम जाके वैरी मित्र न

१-श्रीभागवते प्रथमस्कन्दे। सत्यं शौचंदया शान्तिस्त्यागः सन्तोषआर्जवम्। शमोदमस्तपो साम्यंतितिक्षोपरितिः श्रुतं। ज्ञानं विरक्ति ऐश्वर्य्यं शौर्यंतेजोबलंस्मृति

होय १२तितिक्षापरायो अपराध सहनो १३ उपरतिनाम मिलती वस्तुमें उदासीनता१४श्रुते शास्त्रको विचार १५ज्ञानआत्म विषयः १६विरत्ति नाम तृष्णान होनी१७ऐश्वर्यनाम सबकोनियम न करनो १८शौर्य संग्रामको उत्साह १९ तेज नाम प्रभाव २० वलनाम दक्ष होय२१स्मृत नाम करवेयोग कर्मको अनुसन्धान

स्वातंत्र्यं कोईके२२आधीन न होनो २३ कौशलं अर्थात क्रियाकी निपुणता २४कांति नाम सौन्दर्य२५धैर्यनामव्याकुल न होनो २६ मार्द्दव नाम चित्त कठोर न होनो २७प्रागल्भ्य नाम अतिशय प्रतिभाको है २८प्रश्रयनाम नम्रता २९शील नाम सुन्दर सुभाव३०सहनाम मनकी पुष्टता ३१ओज नाम ज्ञानइन्द्री की पुष्टता ३२वल नाम कर्मइन्द्रीकी पुष्टता ३३भग नाम भोग मिलनो ३४ गाम्भीरता क्षोभ न होनो ३५ स्थैर्य्य नाम चंचल न होनो ३६आस्तिक्यनाम श्रद्धा ३७कीर्त्ति नाम यश ३८मान अर्थात पूज्य-पनो ३९अनहंकृति नाम गर्भ न होनो ये और भी

महागुण जिनकी बड़े बड़े महत चाहना वारे प्राप्तिकी इच्छा करैं हैं सो श्रीकृष्णमें नित्य वसै हैं दया में शरणागतको पालन औौर भक्त सुहृदय ताभी आयगयी वलमें दुष्कर और क्षिप्रकारी पनो भी आयो तेजमें प्रताप व प्रभावभी आय गयो कांति में नारीगण को मन हरनो भी आगयो मार्दवमें प्रेम के वश होनो भी आयगयो प्रगल्भ्यमें वावदूकपनो प्रश्रय में लज्ज्या मान देनो भी आयगयो तथा मीठो बोलनो शीलमें साधुवों को आश्रय देनो भी आयगयो आस्तिक्य- में शास्त्र चक्षूपनोभी आयो और भी गुण वैरिन को मारके गतिदेनो आत्माराम मुनियोंको आक र्षण करनो यह है जगतके पालनादिक पहिले कहि आये हैं १सुधर्माध्ववोधमें लिखा है किऔर जीवमें येगुण दुरावेश हैं होंय तौ कहूं आभासमात्र होय और कृष्ण में सूर्य समान प्रकाश पावैं है

स्वातंत्र्यं कौशलंकांति धैर्यंमार्दवमेवच । प्रागल्भ्यं प्रश्रयशीलं सहओजोबलं भगः । गांभीर्यं स्थैर्य्यं मास्तिक्यं कीर्तिमानोऽनहंकृति एतेचान्ये च भगवन्नित्यां यत्र महागुणाः । प्राथ्यामिहत्व मिच्छद्भि- र्नवियंतिस्मकर्हिचित् । सुधर्माधववोधे । १गुणीवामीदुरावेशाज्जीवे- ष्वाभासिताः कचित् । सूर्या इव प्रकाशंते तस्मिन् सर्वेश्वरेश्वरे

ब्रज के नटवर वेषमें द्वारिकादि रूप से माधुरी विशेष है तासे लीला विलाससे पूर्णतमता नन्दनन्दन को है।वेणु बजानो और प्रेमसे प्यारी योंके बश व आधीन होनो यह ब्रज के ठाकुर में अनोखोपनो है।यद्यपि मथुरा द्वारिका ब्रज में एक ही स्वरूप की लीला है पर जहांके भक्तों को जैसो प्रेम तैसी ही माधुरी प्रकाशै है। अब उत्कृष्ट गुणोंके उदाहरण दिखावै हैं १कानोंको प्यारो गुण सहित वाक्यतो को मीठो बोलनो व वावदूक कहैं दशममें गोपी कहैं हैं हे कमल लोचन तुम्हारी मधुर गिरा और मनोहर वाक्य बड़े बुद्धिमानों के मन हरैं अथवा अज्ञान कोभी मन खैंचलेंय तासे हम विधिकरी अर्थात टहलनी मोहित भयी तासे हमको अधरामृत प्यावो २ दक्ष दुष्कर अर्थात कोई पर न होसकै ऐसा कर्म

१- श्रीमद्भागवते दशमे मधुरया गिरावल्गुवाक्यया बुधमनोज्ञया पुष्करेक्षणः । विधिकिरीरिमावीर मुह्यतरधरसीधुनाप्यायस्वनः

२- तत्रैवउत्तरार्द्धे दशमे यानियोधैः प्रयुक्तानि शस्त्राणि च कुरुद्वह । हरिश्तान्यच्छिनत्तीक्ष्णैः शरैरेकैकशस्त्रभिः

ऐसेपाराशर वाक्यं । रासमण्डल वन्धोपि कृष्णपार्श्वं मज्झिता । गोपीजनेन नैवा भूदेक स्थान स्थिरात्मना

करै और जल्दी करै ताको दक्ष कहैं नरकासुर के संग्राममें ताके योधाबों ने जोजो शस्त्र चलाये उन के चलाये पीछे आपने चक्र चलायो ताको माथो काटके फिर तीन तीन तीक्षण बाणोंसे बे शस्त्र बीचमें ही काट दिये आपके पास तक नहीं आवन पाये पाराशर जीने कह्यो रासमें श्री कृष्ण ऐसे जल्दी नृत्य करते भये कि एक ही कृष्ण सब रास मण्डलीकी गोपियों को अपने अपने निकट प्रतीत होते भये

१ कृतज्ञ थोड़ी भी सेवाकरी भयी को जो बहुत मानलेय सो कृतज्ञ है महाभारत में श्रीकृष्ण बोले कि जा समय द्रोपदी को दूशासन ने वस्त्र खैंचो मैं दूर रह्यो द्वारिका में टेर सुनी यद्यपि वस्त्र बढ़ायके उनकी लाज रखदीनी तौ भी हे गोविंद यह ऊंचे स्वरसे बुलायवेको ऋण मेरे हृदय में बढ़ रह्यो है कोई रीतिसे निकरै नहीं

१—महाभारते ऋणमेतं प्रवृद्धंमे हृदयान्नाप सर्पति। यद्गोविन्दैति चुक्रोश कृष्णामां दूरवासिनं

१बशी जाने इन्द्री जीत राखीं ताको बशी कहैं सोई भागवत के प्रथम स्कंध में लिखो है श्री कृष्णा की स्त्रीद्वारिका में पटरानी यद्यपि अतिशय प्रभाववारी तौभी तिनके गम्भीर भावकी सूचन करनवारी निर्मल मनोहर हास और लज्ज्या की चितवन जासे काम से रहित श्रीमहादेवने भी बश होके अपनो धनुष त्याग कियो पर वे उत्तम स्त्री अपनी विभ्रमादि चेष्टा के द्वारा श्रीकृष्णा की इन्द्रीमथन करवेको समर्थ नही होतीभयी

२समः रागद्वेषसे जो छुट्यो होय ताको सम कहैं दशममें नागपत्नी बोलती भयीं हे श्रीकृष्णा या अपराधी काली पर जो तुमने दन्ड कियो सो न्याय ही भयो काहेसे कि आप को अबतार दुष्टोंको दन्डके अर्थ है और आप की शत्रु व पुत्रमें समानद्दृष्टि है दन्डभी देवो

१—वशी श्रीभागवते प्रथमस्कन्दे। उद्दाम भाव पिशुनामल वल्गुहास व्रीडावलोक निहता मदनोऽपियासां। संमुह्यचापमजहात् प्रमदुत्तमास्ता यस्येन्द्रयं विमथितुंकुहकैर्नशेकुः

२- सम श्रीमद्भागवते दशमे न्यायोहिदण्डः कृतकिल्विषे ऽस्मिंस्तवावतारः खलनिग्रहाय। रिपोःसुतानामपि तुल्यदृष्टिर्धत्तेदम फलमेवानुशंसन

तौ भी लाभही होय है १दया आश्चर्यकी बात है पूतना स्तनमें विष लगायके श्रीकृष्णाकेमार वेके अर्थपान करावती भयी यद्यपि महाखोटी है पर ताको भी आपधाय की गति देते भये तौ उनसे विशेष और कौन दयालू हैं जाकीं हम शरण जावैं २सुहृत सुहृत दो प्रकारको एक तो भक्तके १बचन की रक्षा करनो दूसरो भक्तोंको सुलभतामें पहिले भक्त बचनकी रक्षा श्री भागवत के प्रथम स्कन्धमें भींष्मजी वोले कि अपनी वेदरूप प्रतिज्ञाछोड़के मैंने जोप्रतिज्ञा करी कि श्रीकृष्णाको शस्त्र गृहण कराय देवें ताको सत्य करते भये रथसे नीचे कूद के रथ को पैहा अथवा चक्र हाथमें लेके जैसे हाथीके मारवे को सिंह आवै मेरे वधको आवते भये तासमय पृथ्वी चलायमान होती भयी पीताम्बर उतरगयो

१—दया तृतीयस्कन्दे अहोवकीयस्तनकालकूट जिघांसया पाययद्प्यसाध्वी। लेभेगतिर्धातृउचितां ततोन्यंकं वादयालुंशरणं व्रजेम

२सहृत भक्तवचन रक्षा प्रथम स्कन्दे। स्वनिगम मपहायमत्प्रतिज्ञ मृतमधि कर्तु मवप्लु तोरथस्थः धृतरथ चरणो भ्याचलद्गुहरि रि·वहं तुमिभंगतोत्तरीयः

भक्तसुलभ विष्णुधर्म में १तुलसीदलमात्रसे और एक चुल्लू जल प्रदान करवेसे भक्तवत्सल हरि अपने भक्तोंको अपनी आत्मापर्यंत वेच देंयहैं २भक्तोंकीरक्षा श्रीअर्जुन श्रीयुधिष्ठिर जी से बोले कि जो दुर्वासाऋषि दस हजार चेलों की पंक्तिलेके भोजन करै सोहमारेवैरि योंके पठाये आये तब श्रीकृष्ण बन में आके वाभयंकर भयसे हमारी रक्षा करते भये अर्थात निमंत्रण करके भोजन करायवेकी वा वन में हमारी सामर्थ्य नहीं रही द्रोपदी भोजन कर चुकी वास्थाली सूर्यकी दीभयी जामें द्रोपदी के भोजन करें पीछे वादिन एकदाना न निकरै सो टोकनी मंजगयी श्रीकृष्णाने वाईटोकनीमें एक शाक को पत्तालगोदिखायो द्रोपदी के हाथसे वाशाक के पत्ता को संकल्प पढ़वायके

विष्णुधर्मे तुलसीदलमात्रेण जलस्य चुलकेनच । विक्रीणीतेस्व मात्मानंभक्तेभ्यो भक्तवत्सलः

२— भक्तारक्षा प्रथम स्कन्धे श्री भागवते । योनोजुगोप बनमेत्य दुरन्तकृच्छ्राद्दुर्वाससोऽरिरचिता दयुताग्रभुगयः शाकान्नशिष्टमुपयुज्य यतस्त्रि लोकीं तृप्तानमंस्तसलिले विनिमग्नसंघः

विश्वात्माभगवान पूर्ण होजाय यहमंत्र द्रोपदीजी से कहवायके आप हाथमें लेके भोजन करगये तौ दुर्वासा सहित सबके पेट ऐसे भर गयेकि जल में स्नान करै जो मुनिगण को समूह सो अपनी तौ का बात सब त्रिलोकीको तृप्त मानते भये

१ईश्वर्य तृतीयस्कन्दने स्वयंत्रिलोकीके अधीश जिनके बराबर कोई नहीं अतिशयकोई कहांसे आवै अपने स्वाराज्य लक्ष्मीसे समस्त काम प्राप्तभये भेंटके देवे वाले ब्रह्मादिक लोक पाल अपनी किरीटकी कोटि से सदा चरण चौकी को दन्डवत करैं २व्यूहनाम अवतार जाके अंग है सौ श्रीजयदेव कृत गीत गो विन्दमें मत्स्य रूपसे वेद उद्धार किये कच्छप

१— ईश्वर्य श्रीमद्भागवते तृतीय । स्वयन्त्व साम्याति शयस्त्रिधीशः स्वाराज्य लक्ष्म्याप्तसमस्तकामः । बलिहरद्भिश्चिरलोक पालैः किरीट कोटीडित पादपीठः

२- व्यूहांङ्गी गीतगोविन्दे । वेदानुद्धरते जगन्ति वहते भूगोलमुद्बिभ्रते । दैत्य दारयते बलिंछलयते क्षत्रक्षयं कुर्वते । पौलस्त्यं जयतेहलकलयते कारुण्यं मातन्वते म्लेच्छान्मूर्च्छयतेदशाकृतिकृते कृष्णाय तुभ्यंनमः

रूपसे पीठ पर पर्वत धारण कियो वाराहरूप से पृथ्वी उद्धार करी नृसिंहरूपसे हिरण्यकश्यप को बक्षस्थल फाड्यो वावनरूपसे बलको छल्यो परशरामरूप से क्षत्री नाश किये रामरूप से रावण मारो बुद्धरूप से पशूवों पर कृपा करी बलराम रूप से हल गृहण कियो कल्किरूप से म्लेच्छ संहार किये ऐसे दशरूप धारणकरवे वाले कृष्ण तुम्हारे अर्थ नमस्कार है सब १ अवतारों के ऊपर विराजै सो अवतारी जानौ सोई श्री भागवत प्रथम स्कन्द में कही जो२ ये अबतार वर्णन किये कोई पुरुष नारायणके अंश हैं कोई कला हैं और श्रीकृष्ण तौ स्वयं भगवान अबतारी हैं सोई ब्रह्मसंहितामें रामादि मूर्तिमें कला नियम करके बसते भये

२और भुवन में नाना प्रकार के अवतार करते किंतु कृष्णरूप तौ स्वयं परं पुरुष आप

१— सर्वावतार राज्यष्टि। सर्वावतार राज्यष्टिरवतार्य व गम्यते। श्रीभागवते एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान स्वयं

२-ब्रह्मसंहितायां। रामादि मूर्त्तिषुकला नियमे नतिष्टन् नानाव तार मकरोद्भुवनेषु किंतु। कृष्णः स्वयं सम भवत्परमः पुमान्यो गोविन्दमादि पुरुषं तमहं भजामि

ही होते भये ऐसे गोविन्दआदि पुरुषकों में
भजन करों हों १ विरक्तव उपरति प्रथम
स्कंद में श्री कृष्ण प्रकृतिके प्रपंचमें रहके भी
ताके गुणों से अलग रहै यह ईश को ईश्वर्य
है व्यतिरेक में द्रष्टान्त है प्रकृति आश्रय वाली
बुद्धिको जैसे जीवको ज्ञान योग्य पावै है तैसे
नहों अथवा आश्रय जो भागवत तिनकी बुद्धि
प्रपंचमें पड़ी भी प्रकृति के गुणों में जैसे नहीं
लगे तैसे नहीं लगे जिनको स्त्री प्रेम के मोह
से अपनो अनुबृत नाम टहलुवामानती भयी
और स्त्री लम्पट जानती भयीं अपने भर्ताको
प्रमाण नहीं जानके ईश्वर को अपनी मतिके
अनुसार जानती भयीं एकादशस्कंधमें २ भगवान
विश्व की आत्मा लोक वेद के रस्ता में चलैं
द्वारिका में रहिके सब विषयसेवन करैं पर

१— विरक्ति उपरति श्रीभागवते प्रथम स्कन्धे । एतदीशन
मीशस्य प्रकृतिस्थोपि तद्गुणै र्नयुज्यते सदात्मस्थैर्यथा वुद्धिस्तदाश्रया
तंमेनिरेऽवलामौड्यात् स्त्रैणंचानु वृतरहः । अप्रमाण विदोभर्त्तुरी
श्वरं मतयो यथा

२-एकादशे भगवानपि विश्वात्मा लोकवेदपथानुगः कामान्
सिषेवेद्वारवत्यामसक्तः सांख्यमाश्रित इति

निराशक्तसांख्य ज्ञानके आश्रय होके सेवन करैं तासे भगवानस्वरूपानन्द से परिपूर्ण कोई के बश नहीं पर प्रेम के वश हैं

१ सुन्दरता तंत्रमें है श्री कृष्णको थोड़ीं जवानीको प्रारम्भ भयो तब अरुण मुख और अंग के विकार प्रकाश होतेहो पंचशर(वाण) जाके ऐसे काम को थोड़ा संभ्रम प्रगट होतो भयो तौ हरि व्रज अंगनावों के मन हर लेते भये सोई गोपाल सहस्र नाम में२फूले नील कमलसी कांति जाकी ऐसौ सुन्दर मुख चन्द्र मोर पक्ष को मुकट प्यारो श्री वत्स चिन्ह उदार कौस्तुभ धारण करैं सुन्दर पीताम्वर गोपियों के नेत्र कमल से जामूर्तिकी पूजा होय गैय्यागोपों के समूह जिन के ओर पास श्रीकृष्ण

१—सौन्दर्य्य तंत्रे। संजाततारुण्य मनागुपक्रम आरुण्य वक्रोत्विवृतांगविक्रियः आविर्भवत्पंचशराल्प संभ्रमो गोष्टांगनानांमन आहरद्धरिः

२—गोपालसहस्रनामे फुल्लेन्दीवरकान्ति मिन्दु बदनं वर्हावतं स प्रियं। श्रीवत्सांक मुदार कौस्तुभ धरं पीताम्वरंसुन्दरं गोपीनां नयनोत्पलार्चितनो गो-गोपसंघावृत गोविन्दं कलवेणु वादन परं दिव्यांग भूषं भजे।

मनोहर वेणु बजायवे में तत्पर तिनको मैं भजन करौं

भाषाकान्तिप्रकाशिका

क्षण क्षण मे जाको नवींन नवीन रूपको दरशन होय सोई रूप परमरमणीय कहावै सोई श्रीभागवत प्रथमस्कन्दमें १ यद्यपि श्रीकृष्ण अपनी पटरानियोंके सर्वदा एकान्तमें निकट रहैं तथापि उनके चरण कमल क्षण क्षणमें नवीन नवीन लगैं उनचरण कमलसे कौनस्त्रीको उपरामहोयगो महा चंचल भी लक्ष्मी जिनको कबहूं नहीं छोडै २ प्रेमवश्यता पहिले कहिआये और भी कहैंहैं दशममें सखाब्राह्मण प्यारे सुदामा तिनके अंग संगकरके भगवान ऐसे आनन्दको प्राप्तभये कि कमल नेत्रोंसे महाप्रीतिकरके आंसू छोड़ते भये आत्मारामसुनियों के मनआकर्षण

१—क्षणं क्षण योनवता मुपैतितद्रूप भजते रमणीरताया। प्रथमस्कंद यद्यप्यसोपाशर्वगतोरहोगतस्तथापि ।तस्यांघ्रियुगं नवंनवं पदे पदे काविरमेत्ततत्पदाश्चलापि यच्छ्रीनजहाति कर्हिचित्।

२-प्रेम वश्यता दशमे सख्यु प्रियस्य विप्रर्षेरङ्गसङ्गातिनिर्वृतः प्रीतोव्यमुञ्चदऽब्विन्दून्नेत्राभ्यां पुष्करेक्षणः

करै १तामें पहिले श्रीसनकादिक चरण कमलकी तुलसीकीसुगंधीसे आकर्षित भये सोई श्रीभागवत की तृतीयस्कंदमें प्रसिद्ध है२लीला गुणसे शुकदेव जीको आकर्षण कियो सोई द्वतीयस्कन्दमें परी-क्षतजीसे आप कहते भये कि मैं निर्गुणमें परि-निष्ठ रह्यो पर उत्तमश्लोक की लीला ने चित्त गृहण करलियो तासे यह आख्यान श्रीमद्भागवत अध्ययन करतो भयो

३ रुक्मिणीजी को गुण रूप से आकर्षण भयो सोई रुक्मिणीजीने पत्रीमें लिख्यो दशम स्कन्दमें कि हे भुवन सुन्दर तुम्हारे गुण कैसे हैं कि सुनवेवारोंके अंतर हृदय में प्रवेश होके अंगको ताप हरै हैं और तुम्हारो रूप दर्शन करवे वारों को सब अर्थको प्राप्तकरायवे वारो है ताको सुन

---

१ आत्माराम गणाकर्षी तत्र चरण तुलसी सौरभेन सनकादीनांतृतीयेतस्यारविन्द नयनस्य इत्यादिना

२ लीला या शुकदेवस्य द्वितीयस्कंदे परिनिष्टतोपिनैर्गुण्ये उत्तम श्लोक लीलया गृहीतचेतः राजर्षेराख्यान मधीतवान

३ गुणरूपाभ्यांरुक्मिण्याराकर्षणंदशमे ॥ श्रुत्वागुणानभुवन सुन्दरश्रुण्वतांते नि विश्यकर्णविवरै हरतोङ्गतापं ॥ रूपंदृशांदशमतामखिलार्थलाभं त्वय्यच्युताविशच्चित्तमपत्रपंमे

के मेरो निर्लज्ज्य चित्त तुममें प्रवेश भयो [१]
वेणु शब्द और रूपसे गोपीवर्गको आकर्षणगोपी
बोलीं हे प्यारे त्रिभुवनमें ऐसी कौन स्त्री है कि
तुम्हारे वेणु गीतके लम्बे मनोहर स्वरसे मोहित
होयके बड़ों के पथ से चलायमान न होय और
त्रिलोकीको सौभग यह रूप देखके जासे गैय्या
पक्षी मृगा पुलकावलि धारणकरैं कौनन चलैं
अर्थातसब मोहित होय श्रीगोपी व श्रीरुक्मिणी
आदि आत्मारामों की भी गुरू हैं

२ स्त्रियोंकी स्थिरता हरै स्नेह मुख्यसे सो
स्त्रियों को धीरज हरवे वालो कहावै प्रथम
स्कन्दमें पृथ्वीजी ने कह्यो कि दा पुरुषोत्तम को
विरह कौन सहै जो प्रेमकी चितवन रुचिरमन्द
मुस्क्यानसे मनोहर बोलीसे मथुरा की मनिनियों
को मानसहित धीरज हरलेते भये जाके चरण

१ वेणुशब्दरूपाभ्यांगोपी नामाकर्षणं दशमे कास्त्र्यङ्गतेकलपदायतवे णुगीत सम्मोहितार्य्य चरितान्न चलेत्त्रिलोक्यां त्रैलोक्यसौभगमिदञ्चनिरीक्ष्यरूपं यद्गोद्विजद्रुमम्मृगाः पुलकान्यबिभ्रन्।

२ स्त्रीस्थैर्यंहरतिस्नेहमुख्यैः स्त्रीस्थैर्य्यंहारकः यथावाभागवते कावासहेतविरहंपुरुषोत्तमस्य प्रेमावलोकरुचिरस्मितवल्गुजल्पैः स्थैर्य्यंसमानमहरन्मधुमानिनी नांरोमोत्सवोममयदंघ्रिविटंकतायाः

के स्पर्शसे मेरे यह रोमांचको उत्सवंहो तो भयो १ प्रतिज्ञा जाकी दृढ़ कोई न मेट सकै सो दृढ़ व्रत कहावै जैसे हरिबंश पुराण में आप हरिने कह्यो हे मुने मैं तुमसे सत्य कहों न देवतान गन्धर्वगणन राक्षस नसर्पन असुरन यक्ष मेरी प्रतिज्ञा नाश करवे को कोई समर्थ नहीं भये २ भक्तों ने जाको शोध लियो ताको हरि गृहण करै ताप- वित्र आत्माको अपनों लोक देवैं सो तृतीय स्कन्दमें उद्धवजीने कही और जो लोकमें बीरजो संग्राममें आये श्रीकृष्णाके मुख कमलकी माधुरीजो नेत्रोंको रमावै नयनोंसे पान करके अर्जुनके अस्त्र से मरके पवित्र भये तिन श्रीकृष्णाके धामको प्राप्त भये

३ आसक्तोंको जाके अंगके दर्शन से

१ दृढ़व्रत प्रतिज्ञाभृद्धरिवंशेयया हरिः नदेवगंधर्वगणानरा- क्षसानचासुरानैवचयक्षपन्नगाः ममप्रतिज्ञामपहंतुमुद्यतामुनेसमर्थाः खलुसत्यमस्तुते

२ भक्तशोधितस ग्राहो सत्पूतात्मस्वलोकदः यथा श्रीभागवते तथैवाचान्येनरलोक वीरा य आह वे कृष्ण मुखारविन्दं नैत्रैः पिवंतो नयनाभिरामंपार्थास्त्र पूतापदमापुरस्य

३ आसक्तोरु तृडांगोयमतृप्ताःपश्यतांदृशः यथाश्रीभागवते नित्यंनिरीक्षमानानांयद्यपिद्वार कौकसाम् नवितृप्यंतिहिदृशः श्रियो- धामांगमच्युतं

बड़ी दर्शनकी भूख उपजै सोई प्रथम स्कन्द में यद्यपि द्वारिकावासी श्रीकृष्णके अंग के नित्य दर्शन करैं पर शोभाके स्थान अच्युतके अंग दर्शन करके नेत्र तृप्तनहीं होंय १ भक्तोंके जो वैरी तिनसे जो अधिक वैर करै सो भक्ति द्वि-डधिद्वेषी कहावै पुराणके बचन हैं श्रीकृष्ण ने कह्यो जो तिन पान्डवोंसे बैर करै सो मोसो बैर करै है जो तिनके अनुगत है सो मेरो अनुगत है पान्डवोंके साथ मैं एकात्मताको प्राप्तभयो हूं वे मेरे प्राण हैं ऐसे जानै २ यथा योग्य सब को आदर करै सोयथा योगसबको सनमान करवे वारो होय सोई प्रथम स्कन्दमें श्रीकृष्ण परदेश से द्वारिकामें आये यथाविधि सबसे मिलके सब को मान देते भये कोईकी पूजा करी कोई को अभिवादन कियो कोईको आलिंगन करके कोई

१ भक्तद्विडधिद्वेषी भक्तद्विडधिकोद्विषन् महाभारते यो तानद्वेष्टिसमांद्वेष्टि योताननुसमामनु पैक्यात्ममांगतंविद्धि पान्ड वैधर्मचारिभिः

२ सर्वादरीयथा योग्यं यथार्हं सर्वमानकृत् श्रीभागवते ।प यथाविद्धिमुपसंगम्य सर्वेषां मानमादधे प्रह्वाभिवादनाश्लेष करप शंस्मितेक्षणैः

को हाथसे हाथ पकडके कोईको मन्द मुस्क्यान की चितवनसे सबको सन्मान करते भये

१वयस्वी ॥ नाना प्रकार के वालपोगण्डा दिवयसहैं पर समग्र भक्ति रसको समुद्र किशोर वयस वारो साक्षात एक रस विचित्र विलास को धारण करिवे वारो है २ चतुरः एक ही वारमें सबको सांत्वन करलेय सो चतुर कहावै यथा यामलमें दासों को उनके मनकी जानके सांत्वन करते भये शत्रवों को सेना समूह से मातावों को प्रसाद से सखावों को प्रतीत से प्यारियों को कटाक्षेप से पशुवों को दृष्टि से ऐसे हरि सबको सांत्वन करते भये ३ मृत्य मोघ कृत मृत्यु को निष्फल करै अर्थात मरे भये को जिवाय देय सोई श्रीभागवतमें काली

१ वयस्वी ॥ वयस्विनोपिनानात्वेस्विलभक्तिरसांबुधिः वयस्थ्ये व किशोराद्धाशश्वच्चित्रविलासभृत्

२ चतुरः युगपदवहुसं सांत्वीयः स चतुरः उच्यते यथायामले तान्स्वं विदादासपरानवलौघतोमातॄः प्रसादेन सखीनप्रतीतितःप्रेष्ठास्त्वपांगेन पशूनद्दशाहरिः सं सांत्वयननागकशोनवर्तच

३ मृत्युर्मोघकृत ॥ जीवयतिमृतान्यः समृत्यु-मोंघकृदुच्यते यथा श्रीभागवते विपन्नानविषपानेन निगृह्यभुजगाधिपम् उत्थायापाययद्गावस्तत्तोयंप्रकृति.स्थितं

सर्पके विषको जलपान करके मरे जो पशू व सखा तिनको जिवाय के काली सर्पको दहसे निकार के सो जलनिर्मल करकें फिर गौवों को पान करावते भये

१ स्थिरः,जो चेष्टा आरंभ करै वाके फल को प्राप्तहोय सो स्थिर कहावै यथा तंत्र मेंस्त्रीरत्न जामवती और स्यमंतकमणि फल उदय पर्यंत कृष्ण इच्छा करते भये और छिपाई भई को यथेच्छ अच्छो तरह से गृहण करते भये २ गंभीरजा की हृदयकी बात को कोई न जानसकै सो गंभीर कहावै सोतंत्रमें चारसंकादिक सर्वज्ञ भी पर गोपी रसमें बशी भये जो श्री कृष्णातिनको आस्वादन करते भो प्रीति अप्रीति नहीं जानते भये ३ भक्तपराजितः जो भक्ति करके भक्तों से हारजाय

---

१ स्थिरः आरब्धेहा फलग्राहा स्थिराभिधीयते बुधः यथा तंत्रे स्त्रीरत्नंचमणिंकृष्णश्चोद्यच्छन्ताफलोदयात् ।यथेच्छ विश्वगाजहे निन्हुतोपिस्थिरोहरिः

२ गंभीर अनवगाह्यहार्द्दोयः सगंभीरोभिधीयते यथातत्रे चतुः सनोपिसर्वज्ञोगोपीरस वशीकृतं नवेदप्रींतमप्रीतं कृष्णं चास्वादयं स्तथा

३ भक्तपराजितः योभक्तैर्जीयतेभक्तया सतुभक्तपराजितः यथा सुदर्शन संहितायां अहंपराजितो भक्तैरजितोपितुसर्वतः वल्लवीवल्लभोनित्यं रमयापि समाश्रितः

सो भक्त पराजित कहावैं यथा सुदर्शन संहिता में भगवानने स्वयं कह्यो में कबहूं कोईसे हारोनहीं पर भक्तोंसे पराजित हूं वल्लवि जोगोपी तिनको प्यारो लक्ष्मीको सम्यक आश्रय देवे वारो परभक्त आधीन हूं

१ यशस्वी जाकी कीर्त्ति संसारको तारैसो यशस्वी कहावै एकादश स्कंद में अपनी मूर्त्तिकी सुन्दरतासे मनुष्योंके नेत्रोंसे लोकोंकी लावण्यता दूर करी अथवा सब लोकोंको सुन्दरता दानकरी वाणीकर के स्मरण करवे वारोंके चित्त हरे अपने चरण चिन्होंसे दर्शन करवे वारोंकी क्रियाहर-लीनी सुन्दरय शीली कीर्त्ति पृथ्वीपर विस्तार करी जासे अनायास संसारी जन अज्ञान को अंधकार तर जांयगे इत्नो कर हरि अपने धाम को गये २ उदारः सब लोकों में अतिशय दान

१ यशस्वी संसारतारिणी कीर्तिर्यशस्वीयस्यगद्यते यथा भागवते ॥ स्वमूर्त्यालोकलावण्यनिर्मुक्त्यालोचनं नृणां गीर्भिस्ताः स्मरतांचित्तं पदैस्तानीक्षतांक्रियाःआच्छिद्यकीर्त्तिसुश्लोकांवितत्यह्यं जसानुकौ तमोनयातरिष्यंतीत्यगात्स्वपदमीश्वरः

२ उदारः दानवीर उदारः स्यात्सर्व लोकाति शायिकः यथाभागवते स्मरतःपादकमलमात्मानमपि यच्छति किन्वर्थ कामान् भजतोनात्यभीष्टान् जगद्गुरुः

वीर सो उदार कहावै श्रीभागवत में है हरि अपने चरण कमल स्मरण भजनकरवे वारोंको अपनी आत्मापर्य्यंत देदे बैंतौ अनचहीते अर्थ कामको जगद्गुरु दे देवै तौका अचम्भो है १ तृप्तिदर्शन करन वारोंको जाके दर्शनसे न होय सो तृप्तिरहित सौन्दर्य है यथा नवमस्कन्द में जाकोमुख मकराकृत कुन्डल सहित सुन्दर करण जामें सुभग कपोल जामें प्रकाश मान सुन्दर विलास वारो हास जामें

नित्यनवीन उत्सबको दाताताकी शोभा को नारो तथा नर हर्ष पूर्बकनेत्रोंसे पीवते तृप्तन होते भये और पलकोंपर बैंठे खोलेंमून्दैं जोनिमितिनपर अतिकोध करतेभये२सदावासः संतोमें सम्यकवासजाको सो सदावास कहावै सोई पद्म पुराणमें नारदजीसे कही मैं वैकुंठमें

१- तृप्ति रहित सौन्दर्यं स्तृप्तिर्यं नास्तिपश्यतां यथाभागयते यस्याननंमकरकुन्डलचारुकर्णभ्राजत्क

पोलसुभंग सविलासहासं। नित्योत्सबंनत तृपुद्रशिभिःपिबंत्यो नार्य्यो नराश्चमुदिता कुपितानिमेश्च

२—सदावासः। सत्स्वासः सदायस्य सदावासः सगद्यते यथागाम्रे नाहंवसामिवै कुन्ठेयोगिनां हृदयेनच। मद्भक्ता यत्रगायन्ति तत्र तिष्टा मिनारद

हे नारद नहीं रहों सो नहीं रहौ योगियों के हृदयमें भी रहों पर मेरे भक्तजहां गावें तहांसे सरकौं नहों अर्थात वैकुन्टादिकसे अन्यत्रचलो भी जावोंपर भक्त सभामें तौतिष्टौं हों याधात् गतिनिवर्तनमें है भक्तोंके गानसे मेरी गतिस्तब्ध होजाय १ जा काम में कोईकी सामर्थ्य नहीं ता काम को करवे वालो सबसे बचे कामको करवे वालो है सोकूर्मयामलमें लिख्यो है जो श्रीयुधिष्ठिरजीकी राजसूययज्ञमें सबसे ऊंचो काम संतोंके चरण धोनो यह और कोई पर न हौसकै सोअवशिष्टकाम अर्थात सवसे बचे कामके करवे वारे सबकी आत्मो आप चरण धोवे का काम लेते भये

२ विचित्र चमत्कार चेष्टा को समुद्र हृदय की हरवे वाली अपनी केलिसे आपही विस्मय

१— सर्वाशक्यंह्य कृद्यस्तु सर्वा वशिष्ट कार्यकृत। यथाकूर्म यामले। कौन्तेययज्ञे वतराज सूये सर्वोज्झि तोसच्चरणावनिक्तं। कृष्णस्त्व शक्यामस्विलात्मकत्वाज्ञ आहशिष्टामर्वाश पृकारी

२—चित्रचमक्रियेहाब्धि हृद्धारिकेलि विस्मितः। यथवृहद्धामने। संतिपद्यपिमे प्राज्यलीलास्तास्ता मनोहराः नहिजाने स्मृते रासेमनोमेकाद शोभवेत्

होजाय सेोई बृहद्वामन पुराण में कह्यो आप श्री कृष्णने यद्यपि सोसो अनेक मेरी लीलामन की हरवेवाली है पर जबमैं अपनी रासलीला स्मरण करों तब मन कैसो होजाय सोमैं भी नहीं जानौं १प्रतिभायुत शीघ्री पदको दूसरो अर्थ करलेय ताकोप्रतिभायुत कहैं सोई तंत्रमें है श्रीराधिकाजीने श्रीकृष्णसे पूछी कि कौनदशा से प्राप्त भये श्रीकृष्णने आशाको अर्थ तृष्णा लगाय के उत्तर दियो कि हे रमे तुम्हारे अधरमें फिर श्रीराधिकाने पूछी कि तुम्हारी बंशीकहां कृष्णने ता बंशको अर्थ संतान लगायके कह्यो कि चारौ फिर श्रीराधाने पूछी कितुम्हारो बास नाम निवास कहां है श्रीकृष्णने वस्त्रअर्थ से उत्तर दियो कि मेरे शरीरमें स्थित हैं तौ तुम्हारो अंबर कहां श्रीकृष्णने आश अर्थ करके उत्तर दियो कि वाहिर नही अंगके भीतर है ऐसेश्री

१- प्रतिभायुत। आश्वार्थांतर सन्धायिस विल्न्यात् प्रतिभा युतः यथातंत्रे। काशापृताते व्रजनाथ शंसरामेधरे तर्हित वकवंशः विष्वक्क वासो वपुषि स्थितं मेतर्ह्म चरंनो वहिरं तरङ्गं। एवं प्रियां तां प्रतिपृच्छतीं सकृष्णश्च काशेन वशोववोधैः

कृष्ण नये ज्ञानको उत्तरदियो १ बुद्धिमान सूक्ष्म बातको जो हृदयमें अनुसन्धान करलेय सो बुद्धिमान कहावे सोई कुमारयामल में गर्गजी की यादवनने हंसी करी सो शिवजींके शापसे कालयवन यादवनको भयदेवेवालो प्रगटकरते भये ताको अपनेसे और यादवन करके अवध्य जानके श्रीकृष्ण अनुनय करते भये अपने भक्त को ढक्यो तेजसोई ज्येष्ठ मासकी उष्णातातासे जलकी तरह जरानो विचार करते भये याते मुचकुन्दकी गुफामेंताको लेजातेभये कालयवनकी २ वेणुवादन दशममे गोपी सब यशोदा जीसे कहैं हेसति यह तुम्हारो बेटा गिरधारी ब्रजगौपर दया करवे वारे बांसुरी अनेकरागों से बजानो अपनो आपही सीख्यो अधरविंब

१—बुद्धिमान् सूक्ष्महार्द नु संधायी बुद्धिमानिति कीर्त्यते यथा कुमारयामले। उपहसितपुरोधः कारिताद्रुद्रशापात्स्वयमपि य दुभिम्लेच्छस्त्व वध्योतुनीय। स्वसदुपहिततोयं तेजसाखेवदाह्यःशुचि वदितिधियैत कृष्णो गुहां मौचकन्दीं

२—वेणु वादन दशमे। विविध गोपरसेषु विदग्धो वेणु वाद्य उरधानिज शिक्षाः। तवसुतः सतियदाधर विंवेदत्त वेणुरनय त्स्वरजातीः सबनशस्तदुपधार्य्यसुरेशाः शक्रशर्व परमेष्ठिपुरोगाः। कवय आनतकं धरचित्ता कश्मलययु रनिश्चिततत्वाः

पर धरके जासमय बजावैं हैं तौताको सुनके देवतावों में मुख्य इन्द्र ब्रह्मा महादेव तिन के गण आप पन्डितभी हैं पर मोहको प्राप्त हो जायहैं गीतकी ध्वनि व रागसेकन्धे औरचित्त नम्र होजाय हैं अर्थात् आनन्दमें मग्न होजांय मनोहर स्वरकी आलाप चारीं के तत्वके भेद को निश्चय नहीं करसकैं १प्यारियोंकेआधीन होनो श्रीमद्भागबत रास पंचाध्यायीमें आप भगवान ने गोपियोंसे कही कि मैं तुम्हारे उप– कार कियेको प्रतउपकार करवेको सामर्थ नहीं तुम्हारो ऋणि हूं देवताबों की आयू लेकर भी तुमसे निर्ऋण नहीं होवों दुर्जर घरकीशंखला छोड़के तुमने मो के भज्यो मैं नहीं कर सकौं

ऐसेहरिके गुण अनन्तहैं जो गुण बिरुद्ध धर्मके देखे जांय जैसे व्यापक को यशोदा गोद में परिछन्न होनो आत्माराम को काम सेबन इत्यादिकोंको कूर्म पुराण के बचन अनुसार

१- तत्रैव प्रियाया आधीनता। नपारयेहं निर्वद्य संयुजां स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषोपिवः। योमाभजन दुर्जरगेह शृङ्खलास्ंव्र श्च्यतद्वः प्रतियातु साधुना

समाधान कर लेने सोई कह्यो सो १ स्थूल नहीं अणु नहीं और स्थूलभी है अणु (सूक्ष्म)भी है श्याम जाके लोचन के कोने रक्त सो चारौंओरसे अवर्ण वर्णनकियो है ऐश्वर्य के योग से भगवान में विरुद्ध अर्थ सब घटै है २ वैष्णव तंत्र में लिखो है कि भगवानको अंग अठारह दोष से रहित है और सब ऐश्वर्यमय विज्ञान आनन्दरूप है वे अठारह दोष विष्णु यामलमें लिखे हैं १मोह २तन्द्रार आलस३भ्रम ४रूखोरसपनो ५घोरकाम६लोलपता(चांचल्य) ७मद८मात्सर्य्य९हिंसा१०खेद११परिश्रम१२ झूठ१३क्रोध १४आकांक्षा१५आशंका१६विश्व-विभ्रम अर्थात ब्रह्मादिकके सम्बन्ध व इच्छा से जगतके पालनादिक१७वैषम्य१८पराई अपेक्षा

१-कौर्मे अस्थूलश्चानुरणुश्चैवस्थूलोऽणुश्चैवसर्व्वतः । अवर्णः सर्वतःप्रोक्त.श्यामरक्तान्त लोचनः ऐश्वर्य योगाद्भगवान विरुद्धार्थोऽभिधीयते

२ वैष्णवतंत्रे अष्टादशमहादोषै रहिता भगवत्तनुः सर्वैश्वर्यमयी सत्य विज्ञानानन्द रूपिणी विष्णुयाम ले अष्टादशमहादोषा । मोहस्त द्रा भ्रमोरुक्षरसता कामउल्वणः । लोलतामदमात्सर्य्य हिंसाखेदपरिश्रमौ । असत्यं क्रोध आकाऽक्षा आशङ्का विश्वविभ्रमः विषमत्वं पर.पेक्षा दोषा अष्टादशोदिताः

ये अठारह दोष भगवद्विग्रहमें नहीं है भक्तोंकेप्रेम बशसे जो ये दोषा

दिखाई भी पड़ैं तौ गुणही समुझने श्रीमद्-भागवतमें ऊखलबन्धन की कथा प्रसिद्ध है कि हरि १ आत्मारामने इत्ने चरित्रोंसेभक्त वश्यता दिखाई पूर्ण कामकों भूख लगी शुद्धसत्वरूपको क्रोध आयो आप्तस्वा राज्यलक्ष्मी वारो चोरीकरै महाकालयमजासे डरपै सो माताके डरसे भागै मनसे जाको विशेष वेग ताको मय्या पकड लावै जो आनन्दमय सो रोवै २ या प्रकार सखावों के संग शृंगाररस वारियोंके संग दासोंके संगजो विरुद्ध धर्मदेखे जांय तौ दोष नहीं है सोई कूर्म ३ पुराणमें लिखो है ऐश्वर्यके योगते भगवानमें विरुद्ध धर्म देखे जांय हैं तौ भी भगवानमें कोई तरहको दोष लावनो योग नहीं है जो कहौ कि

१—श्रीमद्भागवते दशमे। एवां संदर्शिताह्यंग हरिणाभक्तवश्यता। स्ववशेनापि कृष्णे नयस्येदसेश्वरं वशे

२—तत्रैव नवमे अहं भक्तपराधी.नोह्य स्वतंत्र इवद्विज। साधुभिर्ग्रस्त हृदयो भक्तैर्भक्तजन प्रियः

३—कूर्मे ऐश्वर्य यौगाद्भगवान् विरुद्धार्थोभिधीयते। तथापि दोषाः परमेनैवाहार्य्याः समन्ततः

कालयवन जरासिंधके आगे कैसे भगे तो वा में भी कारण हैं द्वारिका धाम बसानो मुचकुन्द अपने भक्तको एक आदिमी भेट देके जगानो और दर्शन देनो जरासिंधुसे ब्राह्मणोंकी रक्षा करनी ये कारण है पान्डवोंको रथ हांकनो बलि के द्वारे गदालेके द्वारपाली करनो पटरानियोंके घरसे न निकलनों यशोदाके नचाये नाचनोसखों को कांधेपर चढावनो यह प्रेम दश्यता है

अथनामवर्णन करै हैं नामदो प्रकार को मंत्रात्मक केवलनाम तामें पहिले मंत्र वर्णनकरै हैं १अष्टा दशाक्षर मंत्र लोकों को पवित्र करवे वारो व्यापक है सात कोटि महामंत्र जो शेखर हैं उनको मुकट रूप है सब मंत्र जाकी सेवा करै ऐसो अठारह अक्षर को गोपालमंत्र सब मंत्रोंका राजा है यामें प्रकृति मंत्रके स्वरूप श्री कृष्ण हैं कारण रूपसे पुरुषभी ताके अधिष्टाता देवता हैं सो या मंत्रमें चार रूप दिखाई पडै हैं मंत्र के कारणरूप बर्णसमूहोंके रूप अधिष्टाता देवता

१ अष्टादशाक्षरो मंत्रो व्यापको लोकपावनः सप्तकोटि महा मन्त्र शेखरो देव शेखरः

देवतारूपसोई १ गोपाल तापनीकी श्रुतिहै एकही बायु जैसे भुबनमें प्रवेश होके देह देहमें पांच रूप को होतो भयो तैंसे ही कृष्णा जगत के हितके अर्थशब्दरूप से पांचपदको मंत्र रूप होते भये सोई २ हयशीर्ष पंचरात्रमें कह्यो है बाच्य बाचक देवतामंत्र हे ब्रह्मनतत्व के जानवे बारे इन में भेद नहीं बतावें हैं

अथनाम ३ कृषिभू अर्थात सत्ता बाचक है णकार आनन्द बाचक है इन दोनोंको मिलाय कें पर ब्रह्म कृष्ण यह कह्यो जाय है ४ मंत्रमें भी है हे बिष्णो तुम्हारो नाम चित्स्बरूप है याते महः स्वप्रकाशरूप है तासे या नामको (आ) थोडोभी जाननबारो कुछ सम्पक उच्चारण से

१तथाहि श्रीगोपाल तापनीयं श्रुतिः। वायुर्यथेको भुवनं प्रविष्टो जन्ये जन्ये पंचरूपो बभूवकृष्णस्तथे को जगद्धितार्थ शब्देना पंचपदो विभातीति

२तथाहयशीष्ट पंचरात्रे—वाच्यत्वं वाचकत्वंच देवतन्मंत्रयो रिह। अभेदेनोच्यतेब्रह्मं स्तत्व विद्भिर्विचारत इति

३-अथनाम। कृषि भूवाच कोशब्दःणश्च निर्वृति वाचकः। तयोरै क्यंपरब्रह्म कृष्ण इत्यभि धीयते

४-- ॐ आस्य जानन्तो नामचिद्विवक्त न महत्वे विष्णो सुतिंम भजामहे

महात्म्य होय सो नहीं केवल अक्षरको अभ्यास मात्र होय ताको सुमति अर्थात विद्या में प्राप्त करावों औरभी १नामकी माधुरी वर्णा न करे हैं हे भृगुवर यहकृष्णानाम मधुरसे भी मधुर है मंगल करनवारोंको मंगल करे है सकलवेद वल्लिको सुन्दर फल चैतन्यस्वरूपहै जोकोईएकवार श्रद्धा से अथवा अवज्ञासे गावै मनुष्य मात्रकोतारै है अथ योबन नाम युवा अवस्था यद्यपि श्रीकृष्ण की कौमार पौगन्ड कैशोरादि सब अवस्था हैं और ताकेउपयोगी वात्सल्य सख्य रसवारोंको वे नित्य है तामें किशोर अवस्था धर्मी

जामें योवनकी उठान होय सोई धर्मी है वात्सल्य सख्यादि रसवर्णानमें और अवस्थादि खाई जांयगो यास्थलमें योवनको उद्गम जामें अर्थात अन्तिम कैशोरषोडश वर्षकी दिखावै हैं कोई रसिकजन कौमारादि अवस्थामें भी उज्ज्वलरसको आविरभाव कहूं बर्णान करैहैं और सब

१-मधुर मधुर मेतन्मंगलंमङ्गलानां सकलनिगमवल्ली सत्फलं चित्स्वरूपं । सकृदपि परिगीतं श्रद्धयाहे लयावा भृगुवर नरमात्र तारयेत कृष्णनाम ।

सम्भव है परपूर्णरसनहीं प्राप्त करावै अंतिमकैशो
रकी शोभा श्रीभागवतदशम स्कन्दमें १ रूपयोबन
के मदसे थोडे लाल डोरा बारे लोचन घूम रहे
रूपमाधुरीके दर्शन से बन्माली सुहृदों को मान
देवैं गद्दरवेर जैसे हरो पीरो होय तैसे सुबर्ण की
कुन्डलको कांतिसे मुखकी शोभा कोमल कपोल
झलकैं ऐसे यदुपति हाथी मतबारे के समान बिहार
करत चन्द्रमा की तरह दिनके अंतमें हर्षभरे मुख
से व्रजमें आवें तौ दिनभरकी दुरन्त बिरहकी ताप
ब्रजबासी ब गौवोंकी छुडायदेंय अथलीला बर्णन
करैं हैं स्वभाबिक मनोहर चेष्टा तिनको लीला
कहैं जैसे माखन चोरी दान लीला रासलीला
गौचाणादि इन सब लीलावोंका तात्पर्य यह है
कि जीव श्रवणदर्शन करवे वारोके संसारी विषयों
से मुंह फिर के भगवत में लगै

१- दशमे । मदविघूर्णित लोचन ईषनमानदः सुहृदां वन्मा
ली । वदर पाण्डु वदनो मृदु गन्डं मंडयन् कनक कुण्डल लक्ष्म्या ।
यदुपति द्वरदराज विहारो यामिनी पतिरिवेषदनान्ते । मुदित वक्र
उपयाति दुरंतं मोचयन् व्रजगवां दिनतापं

सोई रासपंचाध्यायोके अंतमें कह्यो [१] भूतमात्र पर कृपाकरके मानुष देहवत अपनो स्वरूप प्रगट कियो ऐसो लीला करीकि सुनवेमात्रसे तत्पर हो जायअर्थात श्रीकृष्णमेंमन लगजाय जैसे पूर्व महात्मावोंने चोरी वर्णनकरी कोई यह कृष्ण चोरमेंरेमनको चुरावै है शरणागतोंके पापचुरावै पूतनाके प्राण चुरावैगोपोरूपी छोटी छोटी व्रजाङ्गना तिनके भूषण वस्त्र चुरावै सज्जन दर्शन करवेवारोंके हृदय व नेत्रचुरावै इनसब लीलावों में रास लीला मुख्य महामाधुरी की भरी है सोई दशमस्कन्दमें कह्यो [३] चरणोंको ताल पूर्वक भूमि परपटकके भुजाको अभिनयसहित फिराय के मन्दमुस्क्यान सहित भौंहको नचायके कमर

१— अनुग्रहाय भूतानां मानुषं ददेमाश्रितः। कुरुतेतादृशीः क्रीडायाः श्रुत्वा तत्परो भवेत्

२-कस्यचित। अपहरतिमनोमे कोप्ययं कृष्णचौरः प्रणत दुरत चौरः पूतना प्राण चौरः। वलय वसन चौरः वालगोपांगनानां नयन हृदय चौरः पश्यतां सज्जनानां।

३- श्रीमद्भगवते। पादन्यासैर्भुज विधुतिभिः सस्मितैर्भ्रूविलासैर्भज्यन्मध्यैश्चल कुचपटैः गण्डलोलैः कपोलैः स्विद्यन्मुख्यः कवररशना ग्रन्थयः कृष्ण वध्वो गायंत्यस्तं तडित इव मेघचक्रे विरेजुः

लचकायके कुचके वस्त्र चलते जांय कुन्डल कपोलनपर हलते जाय मुखपर श्रमकरण झलकै चोटीकी गांठखुलगई ऐसी श्रीकृष्णकी बधूतिन को गावत रासके समय विजुली सदृशमेघचक्रमें शोभा पावती भयी

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अथ भगवल्लोका अपि चिदानन्द मया नित्याएव सभगवः क प्रतिष्ठित इति स्वमहिम्नोति श्रुतेः अतश्च श्रीमद्वृन्दावना दीनां चिदानन्द मयत्वेपि भगवत्क्रीडार्थं कुञ्जोप कुञ्ज सभासरः सरित प्रासादवनो पवन वापी कूप तडागादि गुलमलतौषध्यादि रूपत्वं बो-ध्यं आहुश्च श्रीमत्पद्माचार्याः कुञ्ज गुल्मादि रूपत्वं श्रीमद्वृन्दावनस्यच । कृष्ण क्रीडाकृतेश्चेयं चिद्घनस्य विचित्रतेति चकाराद्गोलोका दीनामपि ग्रहणं । वृन्दावनं सखिभुवोवितनोति कीर्तियद्देवकीसुतपदांवुज लब्धलक्ष्मीत्यादि श्रीभागवते च वैकुण्ठस्यत्व प्राकृतत्व मुक्तं परमागम चूणमणौ श्रीनारद पंचरात्रे जितंते स्तोत्रेच

भाषाकान्तिप्रकाशिका

अथभगवानकेलोकभी चिदानन्दमयनित्य हैं सोभगवानकहां रहैं हैं अपनी महिमा में रहै हैं यह श्रुति है याते श्री वृन्दावनादि धाम चिन्मय होके भी भगवत क्रीडा के अर्थ कुञ्ज उपकुञ्ज सभा सरोवर नदी महल बन उपवन वावरी कुवा तडागादि गुलमलता

औषधि आदि रूपसे जाननो चाहिये सोई श्रीपद्माचार्यने कह्यो है श्रीबृन्दावनकेकुञ्ज गुल्मादि रूप कृष्णक्रीडाके अर्थ समझनो चिह्नन कीं विचित्रता योही कारणते भई चकार से गोलोकादिकों को भी ग्रहण करलेनो सोई दशमस्कन्दकी २० अध्यायमें है। हे सखिवृन्दा-बन पृथ्वी को कीर्ति विस्तार करे है काहेसे कि देवकी सुतके चरणकमलसे लक्ष्मी पाई है। श्री बृन्दावनमें गिरराजपरवत पर कृष्ण बंशीबजावै ताको सुनके मतवारे मोर नाचै तिनकोदेखके सब पशुपक्षी अपनी क्रिया छोडके चित्रसे रहिजावैं

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

लोकं वैकुन्ठनामानं दिव्यंषाड्गुण्य संयुतम् । अवैष्णवानाम प्राप्यं गुणत्रय विवर्जितं। नित्यसिद्धैः समाकीर्णं तन्मयैः पंचकालिकैः । सभाप्रासाद संयुक्तं वनैश्चोपवनैयुतं । वापी कूप तडागैश्च वृक्षखण्डैश्च मण्डितम् । अप्राकृत सुरैवद्यं अयुतार्क समप्रभं । प्रकृष्ट सत्वसम्पूर्णं कदाद्रक्ष्यामिचक्षुषेति अत्यार्का नलदीप्तं यत्स्थानं विष्णोर्महात्मन इत्यादि महाभारतेच । सहस्त्रस्थूणे विततेद्रढे उग्रे यत्र देवानामधिदेवास्तेक्षयंतमस्यरजसः पराकेयोस्याध्यक्षःपरमेव्योमन्

भाषाकान्तिप्रकाशिका

वैकुन्ठको अप्राकृतपनो परम आगमों को चूडामणि श्रीनारदपंचरात्रमें लिख्योहै जितंते

स्तोत्र में वैकुन्ठनामको लोकदिव्य छयगुण के ऐश्वर्यसे युक्त अवैष्णवोंको नही मिलै तीनगुण से वर्जित नित्य सिद्ध जामें रहैं सभा महल बन उपबन वापी कूप तडाग बृक्ष खन्डोंसे शोभाय-मान सो अप्राकृत है। सब देवताजाको बन्दना करैं हैं दसहजार सूर्यसमानकांति है। प्रकृष्टसत्व से संपूर्ण है ताको नेत्रसे में कब देखोंगो अग्नि सूर्यसे भी विशेष प्रकाशमानसो विष्णु महात्मा का स्थानहै इत्यादि श्रीमहाभारतमें लिख्योहै हजारों स्थूनका जामें विस्तार क्षयतभरजसे परे याके अध्यक्ष पर व्योम हैं

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

तद्विप्रासोंविपण्य बोजाग्रिवांसः समिंधते यत्रपूर्व्वे साध्या सन्तिदेवास्तद्विष्णोः परमं पदं सदापश्यंति सूरय इति श्रुतौ च सह स्त्र पत्रं कमलं गोकुलाख्यं महत्पद। तत्कीर्णकार तद्धामतदन तांश स भवं। किर्णकारं महद्यत्रषट्कोणं वज्र कीलकम्। षडंगषटपदीस्थान प्रकृत्या पुरुषेणच्च। प्रेमानन्द महामन्दरसेनावस्थितंहियत्। ज्योति रूपेग मनुना कामबीजेन सङ्गतं। तत्किंजल्कतदशानां तत्पत्राणि श्रि यामपि। चतुरस्त्रं तत्परितःश्वेतद्वीपाख्य मद्भुतम्

भाषा कांति प्रकाशिका

हे विप्रा ता वैकुन्ठमें व्यवहारजिनके गये जाग्रवे वाले सम्यकप्रकारवसैं हैं। जामें पहिले

साध्यदेव हैं सो विष्णु को परमपद है ताको सद सूरिनाम भगवान के पार्षद देखे हैं यह श्रुतिमें है। सहस्र पत्रकोकमल गोकुलनाम को महत्पद ताको कर्णिकामें तिनकोधाम है, सो अनंत जो शेषजी तिनके अंशसे उत्पन्न भयो है जामें बड़ो कर्णिका छयकोनेको वज्र करके कीलित है। छयअंग षठपदोको स्थान है प्रकृति पुरुषकरके युक्तहै जो प्रेमानन्द महानन्द रस करके अवस्थित है। मंत्रकी ज्योति और काम बीज करके संगतहै ताही ज्योति व बीज के केसरा ओर अंश सब पत्ता और श्री है

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

चतुरस्त्रं चतुर्मूर्त्तिश्च तुर्द्धाम चतुःकृतम्। चतुर्भिः पुरुषार्थैश्च चतुर्भि र्हेतुभिर्वृतम्। शूलैर्दशभिरानद्ध मूर्द्धाधोदिग्विदिक्ष्वपि। अष्टाभिर्निधिभिर्जुष्टमष्टाभिः सिद्धिभिस्तथा। मनुरूपैश्चदशभिर्दिक्पालैः परितोवृतम्। श्यामैर्गौरैश्च रक्तैश्च शुक्लैश्च पार्षदर्षभैः। शोभितं शक्तिभिस्ताभिरद्भुताभिः समंततः। गोकुलाख्य मित्यनेनगोगोपी वासरूपत्वं गोलोकस्य

भाषा कांति प्रकाशिका

सोचारो ओर से अद्भुत श्वेतदीप नाम को है। चौकोर चार मूर्ति बासुदेवादि चारव्यूह चारधाम चारकृति करके बढ्यो है। चारपुरुषार्थ

अर्थ धर्म काम मोक्ष चारहेतु तिनपुरुषार्थों के साधन तिनसे युक्त है। ऊंचे नीचे दिशा विदिशा में दशशूलोंसे विधरह्यो है आठनिधि १महापद्म २पद्म ३शंख ४मकथ ५कच्छप ६मुकुन्द ७कुन्द ८लीला आठसिद्धि १अणिमा २महिमा ३लघिमा ४प्राप्ति ५प्रकाम्य ६ईशता ७ कामावशायिता ८ वशिता जाकीसेवाकरैं। मंत्ररूपजो दशदिग्पाल सो चारो ओरसे घेरेरहे श्यामगौर रक्तशुक्लपार्षद श्रेष्ठो से शोभित हैं विमलादिसब अद्भुतशक्ति करके शोभायमान हैं गोकुल यह नाम कहिवे से गैया व गोपियोंको वासरूप गौलोकवर्णनकियो

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

विवक्षितं गोकुलमित्याख्या रूढिर्यस्येति निरुक्तेः रूढिर्योगम पहरतीतिन्यायेन। तत्स्वरूपं तुतदनंतांश संभवमिति अनतस्य श्री बलरामस्यांशेन ज्योतिर्विभाग रूप विशेषेण संभवः सदाविर्भावोय स्य तदित्यर्थः। निखिलमन्त्रगण सेवितस्य श्रीमदष्टादशाक्षर गोपाल महामन्त्र राजस्य मुख्यपीठमिदमेवेत्याह। कर्णिकार मित्यारभ्य काम योजेन सङ्गतमित्यन्तेन अत्र प्रकृति मन्त्रस्य स्वरूप श्रीकृष्ण एवकारण रूपत्वात्पुरुषोपि तदधिष्टातृदेवतारूपःसएवदृश्यते चायंचतुररूपेण मन्त्रेमन्त्र कारणरूपत्वेन वरणसमुदाय रूपत्वेन अधिष्टा तृदेवता रूपत्वेन देवता रूपत्वेनचेति

भाषाकान्तिप्रकाशिका

जाकी गोकुल यह आख्या रूढि है रूढि

योगको हरै है यान्यायते ताको स्वरूप वर्णन करैं हैं सो अनन्तके अंशसे उत्पन्न भयो अर्थात अनन्त जो श्रीवलराम तिनके अंशज्योतिविभाग रूप विशेष से सदा उत्पन्न भयो सब मन्त्र गण जाकी सेवा करैं सो अठारह अक्षर को गोपाल महामन्त्र राजताकों यह मुख्य पीठ है सोई कह्यो है कर्णिकार यहांसे आरम्भ करके कामबीज करके संगत या अंतपर्यंत या में प्रकृति मन्त्रके स्वरूप श्रीकृष्णा हैं। कारणरूपसे पुरुष भी ताके अधिष्टाता देवरूप है सोई चार रूपसे मन्त्र में दिखाई पडै हैं मन्त्र के कारण रूपतासे अक्षर समूह रूपसे अधिष्टाता देवता रूप से देवतारूप से

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

तथाहि श्रीगोपाल तापनीयं श्रुतिः वायुर्यथैको भुवनं प्रविष्टो जन्ये जन्ये पञ्चरूपोवभूव कृष्णस्तथैको जगद्धितार्थं शब्देनासौ पञ्च पदोविभातीति तथा हयशीर्ष पञ्चरात्रेपि वाच्यत्वं वाचकत्वंच देव तन्मन्त्रयोरिह। अभेदेनोच्यते व्रह्मंस्तत्व विद्भिर्विचारत इति दुर्गाया अधिष्टा तृत्वं च शक्ति शक्ति मतोरभेदात् श्रीकृष्णस्यैव दुर्गानाम शक्तिः अतोनेयं मायां शभूता दुर्गा तथाच परमागम चूडामणौ ना रद पञ्चरात्रे श्रुति विद्या सम्वादे जानत्येका पर कांतं सैव दुर्गातदा त्मिका। या परापरमाशक्तिर्महाविष्णु स्वरूपिणी यस्या विज्ञानमात्रेण

भाषाकांतिप्रकाशिका

तैंसे ही गोपालतापनी की यह श्रुति है एक पवन जैसे भुवनमें प्रवेश होके देह देहमें पांच रूप से होती भयी, श्रीकृष्णा भी तैंसे ही जगत के हितके अर्थ शब्द करके पांच पद रूप से प्रकाश पावै हैं तैंसे ही हयशीर्षपंचरात्र में वाच्य बाचक देवता मंत्रतत्वके जानवे वारे विचार के इन चारों को भेद रहित वतावै हैं या प्रकार दुर्गाकोंभी अधिष्टातापनो है। शक्ति व शक्तिमान को अभेद है। दुर्गा नाम शक्तिश्री कृष्णा की है तासे यह दुर्गामायाकी अंशभूत नहीं है। सोई परम आगमचूडामणि नारदपंच रात्र श्रुति विद्याके सम्वाद में है, जो एक परम कांत को जानै सोई दुर्गातदात्मिका है जो सब से महापरमाशक्तिमहाविष्णु स्वरूप वारी है जाके विज्ञान मात्र से देवों के

सिद्धान्त रत्नाञ्जली

पुराणां परमात्मनः। मुहूर्ताद्देव देवस्य प्राप्तिर्भवति नान्यथा एकेयं प्रेमसर्व स्वभाव श्रीगोकुलेश्वरी अनयासुलभोज्ञेय आदिदेवो खिलेश्वरः। भक्तिर्भजन सम्पत्तिर्भजते प्रकृतिः प्रियम्। ज्ञायतेत्यंत दुःखेनसेयं प्रकृति रात्मनः। दुर्गेतिगीयते सद्भिर खण्डरस बल्लभा

अस्याावरिकाशक्तिर्म हा माया खिलेश्वरी। यया मुग्धं जगत्सर्वंस
वँ देहाभि मानिन इति तत्पत्राणिश्रियाम पील्यत्र बहुवचनं पूजार्थंश्रि
यस्तत्रे यस्या गोपीरूपायाः श्रीराधिकायाः उपवनरूपाणि धामानी
त्यर्थः गोपीरूपत्वं चास्यमन्त्रस्यतन्नामलिंगतत्वात् अथचतुरस्रेय्यं

भाषाकान्ति प्रकाशिका

देवश्रेष्ठ परमात्माकी मुहूर्त्तमात्रमें प्राप्ति होजाय अन्यथा नहीं। एकयही गोकुलेश्वरी प्रेमके सर्वस्व भाववारी है या करके आदि देव अखिलेश्वर सुलभ हैं। भक्ति-भजन-संपत्ति प्रकृति प्यारे को भजें हैं सो वह आत्मा की प्रकृति दुखकरके जानी जाय है या अखन्ड रस वल्लभा को महात्मा दुर्गानाम कहें हैं। इन्हीं की आवर कानामनीचेकी शक्ति अखिलेश्वरी महामाया है जाकरके सब जगत देहाभिमानी मोहित हैं इति, ता कमलके पत्ता श्रीरूप हैं बहुबचन पूजा के अर्थ है श्री नाम तिन की प्यारी गोपी श्रीराधिका को है उनके उपवन रूप धाम हैं। गोपीरूप जो श्री राधिका तिनके नामसे यह मन्त्र चिन्हित है। चतुस्रय अर्थात चौकोर अंतरमंडल श्रीवृन्दावननाम जाको

ऽन्तर्मण्डलं श्रीवृन्दावनाख्यंज्ञेयं तथा च वृहद्वामने श्रुतिवाक्यं । आनन्द रूपमिति यद्वदन्तिहि पुराविदः । तद्रूपं दर्शयास्माकंयदिदेयो वरोहितः । श्रुत्वैद्दर्शयामा ससलोकं प्रकृतेः परं । केवलानुभवानन्द मात्रमक्षरमध्यगं । यत्र वृन्दावनं नाम वनं कामदुघैर्द्रुमैः मनोरम निकुञ्जाढ्यं सर्वर्त्तु सुख संयुतमित्यादि उक्तश्चायं गोलोकः श्रीमद्भागवते नन्दस्त्व तोन्द्रियं दृष्ट्वालोकपाल महोदयं कृष्णेच्च सन्नितिं तेषां ज्ञातिभ्यो विस्मितो ब्रवीत् तेचौत्सुक्यधियो राजन्मत्वा गोपास्तमीश्वरं । अपिनः स्वगतिं सूक्ष्मामुपाध्या स्यदधीश्वरः

भाषाकान्तिप्रकाशिका

सो जानौ सोई बृहद्वामन पुराणमें श्रुति के वाक्य हैं-पहिले के ज्ञाता जाको आनन्द रूप बतावैं जो आप हमको वरदेवतौ तारूप के दर्शन करावो। इत्नो सुनके प्रकृतिसे परे जो लोक श्रुतियोंको ताके दर्शन करावते भये केवल अनुभव आनन्द मात्र कबहू नाश न होयमध्य विराजै जहांवृन्दावन नाम बन जाके बृक्षसब कामना के दुहिवेवारे मनको रमावै ऐसी जामें निकुञ्जहैं।सब ऋतु के सुखों से भरोभयो है याही गौलोककीं श्रीमद्भागवत में वर्णन है नन्दजीने बरुणलोकको अपूर्व वैभव देख्यो और श्रीकृष्णमें तिनकी दीनता देखी तब अपने जातिवारे गोपोंसे कहते भये तब सब ब्रजवासियोंकी बुद्धिकी बडी उत्कंठा भई

इति स्वानां सभगवान विज्ञाया खिलदृगस्वयं । संकल्प सिद्धये तेषां कृपयैतदचिंतयत् । जनोवै लोकएतस्मिन्न विद्याकामकर्मभिः । उच्चाव चासुगति पुनर्वेदस्वा गतिं भ्रमन् । इति संचिन्त्य भगवान् महाकारुणिको विभुः । दर्शयामासलोकंस्वं गोपानां तमसः परम् । सत्य ज्ञानमनंतं यद्ब्रह्मज्योतिः सनातनं । यद्धिपश्यन्ति मुनयो गुणापाये समाहिताः तेतुब्रह्म हृदंनो ताममग्नाः कृष्णेन चोद्धृता । ददृशुर्ब्रह्मणो लोक यत्राक्रूरोध्यगात्पुरा । नंदादयस्तुत दृष्ट्वा परमानन्द निर्वृताः । कृष्णं च तत्र छन्दोभिः स्तूयमानं सुविस्मिता इति स्वगतिं स्वधाम

भाषाकान्तिप्रकाशिका

और गोप श्रीकृष्ण को ईश्वर जान के बोलते भये कि अधीश्वर कृष्ण अपनी सूक्ष्मा गतिअर्थात अपनो धाम दिखावैंगे।का सो।भगवान अंतर्यामी अपनों।को संकल्प जानके।ताकी सिद्धि के अर्थ कृपाकरके इतनो चिंतवन करतेभये कि यह साधारण ब्रजबासो जन या।लोकमें अविद्या तासे काम तासे कर्म तासे ऊंची नीची गतिमें भ्रमै हैं और अपनीगति को नहीं जानै,दयालू भगवान ऐसे चिंतवन करके तम।से नाम माया से परे अपनो गौलोक दिखावते भये जो सत्यज्ञान अनंत जो ब्रह्मज्योति सनातन है।जाको मुनिगणसत्वरजत-मतिनके नाश भये पीछे सावधान होके देखैं हैं

तिनको पहिले ब्रह्महूदमें डुवाये अर्थात ब्रह्माकार बृत्तिकर दीनी फिर जैसे विषयोंसे निकारकै

सिद्धान्तरत्नाञ्जालि

सूक्ष्मां दुर्ज्ञेयां अणुःपंथावितत पुराण इत्यादौ श्रुतेःउपाधास्य दुपाधास्यति अस्मान्प्रापयिष्य तीत्यर्थःइतिनिश्चितवंतइतिशेषः अयंब्रजवासीजनः अविद्या दिभि रूच्चावचा सुमनुष्यतिर्यगादि रुपा सुभ्रमन् स्वरुप मजानन स्वलोक गोकुलं ब्रह्मणः परमवृहत्तम स्वैवलोक गौलोकाख्यं दद्दशः ननुलोकंवैकुन्ठनामानमित्यादि श्रीनारदपंचरात्रेजितंते स्तोत्रोक्तया सर्वे पंचोपनिषत्चरूपा इतिपाद्मोक्त्यां पंचोपनिषत्प्रधान पंचाक्षर वाच्या प्राकृत द्रव्यानुविद्धवैकुन्ठां तरस्यापि प्रतीतेः कोसौब्रह्महृदयस्त त्राहयत्रेति तथाचगोपानामिति

भाषाकान्तिप्रकाशिका

ब्रह्ममें लगावैं तैसे ब्रह्मदहसे ऊंचे निकारे तब वे ब्रजबासी ब्रह्मको लोकदेखते भये जहां शुकपरीक्षत के सम्बादसे पहिले अक्रूरजाते भये नन्दादिकताको देखके परमआनन्द पावते भये औरश्रीकृष्णकी तहां वेदोंसे स्तुति हो रही है सो देखके विस्मय को प्राप्त भये इति, तामें स्वगति नाम अपनो धामसूक्ष्म नाम जानो न जाय। अणुः अर्थात सूक्ष्म पंथा विस्तरित पुराणो है इत्यादि श्रुति में है यह साधारण ब्रजवासो जन अविद्यादि करके ऊंची नीची मनुष्य तृयगादि रूपके विषय भ्रमै हैं। अपने गोकुलको स्वरूप

नहीं जानै परमबृहत्तम जोब्रह्म ताको लोकदेखते भये तामें यह शंका है कि लोक तौवैकुन्ठ नामको इत्यादि श्रीनारद पंचरात्रमें जितंते यास्तोत्रकी उक्तिसे सब पांच उपनिषतस्वरूप के यापद्म पुराणकी उक्तिकरके पांच उपनिषत्प्रधान

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

षष्टिनिर्द्देशादय मेव गौलोकाख्य इति ज्ञायते सर्वे लोकोपरि विराजमानत्वं चास्य परमागम चूडामणौ श्रीनारद पञ्चरात्रे विजयाख्याने तत्सर्वौ परिगोलोकस्तत्र लोकेपरः स्वयं विहरेत्परमानंदी गोविन्द्रोऽतुलनायक इति देव सर्वौ परिविराजमानत्वेपि सर्व्वगत एवायं श्रीगोलोकः श्रीमन्नारायण वत्प्राकृता प्राकृत वस्तू व्यापकः। नयत्र माया किमुता परेहरे रनुवृता यत्र सुरा सुरार्चिता इतिद्वतीय स्कन्द वर्णितं कमलासन दृष्टवैकुण्ठ वदत्रापि ब्रजवासिभि दृंष्टइति भावः अत्रभूमौचायं श्रीगोलोकाख्यः वेदेप्रसिद्धः तथाहि यमुनातीरे गोकुलरम्ये विवसंतं वाला नन्दन हेगोवः क्षोभतं मांवर्जितनाथंमाकृषितोकं माकेशश्च निमाशोभिध्यात्मा परमात्मा मित्रस्तस्यै धातोग्नि

भाषाकांतिप्रकाशिका।

पांचअक्षर वाच्य अप्राकृत द्रव्यको विधो भयो बैकुंठ और भी प्रतीत होय है सो कौन ब्रह्मह्द है ताकोकहैं कि जामें अक्रूर पहिले जातो भयो गोपानांयोषष्टिके निर्देशसे गौलोक नामजानो जाय है। सब लोकोंके ऊपर विराजमान होनो याको परम आगमचूणामणि श्रीनारदपंच रात्रमें लिख्यो है विजय आख्यानमें सोगौलोक

सबके ऊपर है, जहां स्वयं परमानन्दी गोविन्द अतुल नायक विहार करैं हैं। यद्यपि सबसे ऊपर विराजमान है, तबभी सब नीचे ऊपरमें व्यापक है जैसे श्रीनारायण सब प्राकृत अप्राकृत वस्तुमें व्यापक है द्वतीयस्कन्दमें जैसे ब्रह्माके देखे भये बैकुन्ठको वर्णन है जा बैकुन्ठमें सबकी मूल माया ही नही जहां हरिके पार्षद, सत्वगुणी देवता रज तमवारे असुर जिनकी पूजा करें वे रहैं हैं तैसे सोही यह अप्राकृत गोलोकको ब्रजवासी देखते भये

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

स्रष्टा खिलभोक्ता विष्णुर्वंद्यो हे पङ्कजनेत्र मात्वं हृषीकेशंमा पद्मोद्भवं मावेद शरीर माकृती मूर्त्तिमाविगताविगतीहे। इति सामवेदे विष्णुस्तोत्रे। वाताऽयुश्मसिगमध्यै त्रगावो भूरिशृङ्गा अपासः अत्राहतदुरगा यस्य ब्रह्म परमंपदमव भातिभूरीति ऋग्वेदे। यातेधा मान्युश्मसीति विष्णोः परमंपदम वभाति भूरीति यजुर्वेदे पव श्री मदष्टा दशाक्षरी गोपाल विद्या यामुख्यपीठस्य श्रीगोलोकाख्यस्यश्री चिदानन्द रूपत्वं सिद्धया। चिंत्यशक्तित्वेनोभ यत्रापि नित्यत्वं सिद्ध

भाषा कांति प्रकाशिका

याभूमिमें भी यह गौलोक नामको वेद में प्रसिद्ध है तथा यमुना के कनारे रमणीक गोकुल में बसैं वालानन्दन यहगांवःमायाको जो क्षोभकरै

जाको कोई नाथ नहीं लक्ष्मीके अर्थबनायोओक नाम स्थान लक्ष्मी सहित केशव नितरां लक्ष्मी शोभित अध्यात्मा परमात्मा मित्र तासे बढी सो अग्नि को रचन हारो सबको भोक्ता ऐसे विष्णु को वन्दन करौं॥१॥हे पंकजनेत्र लक्ष्मीसहिततुम हृषीकेशको लक्ष्मी सहित कमलभयो जाते ऐसे तुमको लक्ष्मी सहित वेद शरीर को लक्ष्मी सहित आकृतमूर्तिको लक्ष्मीसहित॥२॥विगति अविगति यहसामवेद के विष्णुस्तोत्रंमें वातानि (वस्तूनि) प्रकाशमान स्थान जहां बड़ी श्रृङ्गवारी गैया शोभा मानताको हम ध्यान करै तहां कहै सो बड़े प्राक्रम बारे विष्णुकोपरमपद बहुत प्रकाश होरहोहै यह ऋगवेदमेंहै॥३॥जातुम्हारे धामप्रकाशमान इति विष्णुको परमपदबड़ो प्रकाशै है।यह यजुर्वेदमें४ ऐसे ही श्रीमदष्टादशाक्षरवारी गोपाल विद्याको ज्ञो गोलोक को मुख्यपीठ है सो चिदानन्दरूप सिद्ध भयो तौ गौ लोककी अचिन्त्यशक्तिहैतासे ऊपरनीचे नित्यपनो सिद्धभयो

और भी भगवतसम्बन्धकी बस्तुवर्णनकरै

बैं जिनको भगवतसमानपूज्यत्वहै श्रीकृष्ण १ भक्त
२ भागवतशास्त्र ३ तुलसी ४ श्रीकृष्णकेवासर ५ हरि-
वासर ६ महाप्रसाद इत्यादि तामें पहिले भक्तवर्ण
नकरैंहैं यद्यपिप्रथम परिछेदमें इनके भेद वर्णन
किये हैं पर प्रकरण प्राप्तफिर भी वर्णन करैं हैं
श्रीकृष्णको भावजिनके हृदयमेंनिरन्तर वासकरैं
उनकोनाम भक्तहै सोई नवमस्कन्दमेंस्वयंभगवान
ने कह्यो २ मोमें तिनने पक्कोहृदयवांध्यो समदर्शी
साधूमोको भक्तिकरकेऐसे बशकरलेयजैसे सुन्दर
स्त्री सुन्दरपुरुषको बशकरलेय ३ साधूमेरे हृदयहैं
मैंभक्तोंको हृदयहों मेरे बिनावे और को नहींजानैं
मैंउनकेबिनाऔर कोई को कुछ नहींजानौंऔरभी
भगवानके वाक्यहैं ४ चारवेदको बक्ता अभक्तमो-
कोप्यारो नहीं मेरो भक्तश्वपचमोको प्यारो है

---

१ श्रीभागवतेमयि निर्वद्ध हृदयःसाधवो समदर्शिनः। वशेकुर्वन्ति मांभक्त्या सत्स्त्रियः सत्पतिं यथा

२— साधवो हृदयं मह्यं साधूनां हृदयं त्वहं। मदन्यं तेन जानन्ति नाहंतेभ्यो मनागपि

३— नमे प्रियश्चतुर्वेदी मद्भक्तःश्वपच प्रियः। तस्मैदेयन्ततो ग्राह्य सच पूज्यो यथा अह

४—पाद्मेनशूद्रा भगवद्भक्तास्तेतु भागवता मता। सर्ववर्णेषुते शूद्राये अभक्ता जनार्द्दने

ताके अर्थ देनों तासे गृहणाकरनो सो मो समान पूज्य है।पद्म पुराणमें भगवद्भक्तशूद्र नहीं वे भागवत है।सब वर्णोंमें वेशूद्र हैं,जोहरिकेअभक्तहैं। काशीखंडध्रुवचरित्रमें हैं १ब्राह्मणक्षत्री वैश्यशूद्र चाहे कोई और होय विष्णुभक्तिसंयुक्तसो सबसे उत्तम है

और मुख्यवर्णाश्रमीहरि भक्तही हैं,अभक्त नवर्णी न आश्रमी।इनके विशेष प्रमाण देखनेहोंय तौ श्रीनिम्बार्कभगवान औरपण्डितको सम्वादसुधर्मध्ववोधग्रंथमें देखो भगवानजामें प्रतिपाद्य ताको भागवतशास्त्रकहैं श्रीमद्गीताभागवतादि २स्कन्दपुराण में लिख्यो है वैष्णवशास्त्र जोसुनें पठनकरैं हैं,वे मनुष्यलोकमें धन्य हैं उनके ऊपर कृष्ण प्रसन्नहोंयहैं ३जिनकेमन्दिरमें वैष्णवशास्त्र लिखे भये विराजै हैं तहां हे नारद साक्षात नारा-

---

१काशी खण्डेध्रुवचरित्रेमे ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यःशूद्रो वाय दिवेतरः। विष्णु भक्तिसमायुक्तोज्ञेयः सर्वोत्तमोत्तमः

२—स्कन्दे वैष्णवानि तुशास्त्राणि ये श्रृण्वंति पठन्ति च। धन्यास्ते मानवा लोके तेषांकृष्णः प्रसीदति

३ -विष्टन्तिवैष्णवं शास्त्रं लिखतं यस्य मन्दिरे। तत्र नारायणोदेवः स्वयं वसति नारद

यणादेव स्वयंवास करैं हैं तुलसीजी श्रीभागवतमें
रासमेंश्री कृष्णाकेअंतर्ध्यानिसमयणोपीपूछै १ हे
हेतुलसीकल्याणी! तुमगोविन्दके चरणकी प्यारी
हौ तुमको भोरावोंकी भीड़ सहित गोविन्दधारण
करैं हैं, तुमने अच्युत श्रीकृष्णादेखेहैं २स्कन्दपुराण
मैं जो कोई तुलसीको दर्शन करैं, स्पर्शकरैं, ध्यान
करैं, कीर्त्तन करैं, दन्डबत करैं, सुनैं आरोपणकरैं,
नित्यपूजन करैं, ऐसे नवप्रकार से दिन दिन में
तुलसीको सेवैं हैं, वे कोटि हजार युग हरिके घर
में बासपावैं हैं

सिद्धांतरत्नाजालिपूर्वार्द्ध

भोक्तृत्वच पत्रं पुष्पं फलं तोयं योमेभक्त्या प्रयच्छतीत्या
दौ प्रसिद्धमेव तस्य घाहुः पिप्पलम् स्वाद्वग्रेत्ति इत्यादौ श्रुतौच नचा
नश्नन्नीन्याभि चाकशीति श्रुतिविरोधइति वाच्यं तस्याः प्राणधारण
भूताशन निषेध विषयत्वात् प्रीति तस्तु तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि
प्रयतात्मन इत्यादि वचनात् सत्यकामः सत्यसङ्कल्पो भगवान् शुभा
न् भोगान् भुनक्त्येवेति सर्व परमास्तिकानां मत

भाषाकान्तिप्रकाशिका

श्रीकृष्णाके वासररामनौमी जन्माष्टमी

१ श्रीमद्भागवते। कच्चित्तुलसिकल्याणि गोविन्द चरण प्रिये।
सहित्वालि कुलै विभ्रद्दृष्टस्ते अच्युत प्रियः

२— स्कन्द पुराणे। दृष्टा स्पृष्टा तथा ध्याता कीर्त्तिता न
मता श्रुता। रोपिता सेविता नित्यं पूजिता तुलसीशुभा। नवधा
तुलसींदेवीं येभजन्ति दिनेदिने। युगकोटि सहस्राणि तेवसन्तिहरेर्गृहे

आदितामें १कृष्णजन्मदिन भवष्योत्तरपुराणमेंहे जनार्दन! श्रीदेवकीने जादिन तुम को जन्माये सो दिन हमको कहिये, आपको उत्सव करेंगे तासे जो आपके प्रपन्न हैं उनके ऊपर हे केशव प्रसाद करो हरिवासर अर्थात २ एकादशी जो भक्तिकरके भक्तिमान एकादशी ब्रत करें हैं सो परमस्थानको प्राप्त होयहै। जहां स्वयं देवहरि रहैं हैं महाप्रसादकी महिमा भगवानने गीताजीमें कह्यो कि पत्रफूलफल जल जोमोको भक्ति करके देवै सो मैं भोजन करजाऊं यह प्रसिद्धहै तामें शंकाउपजी कि श्रुतिमें जीवको भोगलिखो है सो पिप्पल नामसंसार के बिषय स्वादपूर्वक खायहै और भगवानबिनो भोजन के प्रकाशपावै है तौ विरोधभयो ताको समाधान यहहै कि श्रुति प्राणधारणाके भोजनको निषेध करै है प्रीति से

१–कृष्णाष्टमी भविष्योत्तर यस्मिन् दिने प्रसूतेयं देवकीत्वां जनार्दन। तद्दिनं ब्रूहि वैकुण्ठ कुर्मस्ते यत्र चोत्सवं। तेनसम्यक प्रपन्नानां प्रसादं कुरुकेशव

२— एकादशी एकादशी वृतं यस्तु भक्तिमानकुरुते नरस्सयाति परमं स्थानं यत्र देवो हरि स्वयं

तौ भगबान आपही कहैं हैं कि मैं भोजन करौ हौं, सत्यका, सत्यसंकल्पभगवान शुभभोगभोगैं हैं। यह सबपरमआस्तिकोंका मतहै, तासेभगवतप्रसादी वस्तुको प्राकृत जानके निरादर करनो अनुचित है, बैष्णावको अपराधहोय है। पहिले आपसेयाचना न करवेको अपराध दूसरेकोई देदै तो तिरस्कार करै सो महान अपराध है। बस्तु का स्वाद विशेष होजानो और बढ़जानो यह भोग लगे की प्रतीति है

श्लोक-५ वाँ

सिद्धान्त रत्नाञ्जली

तत्रोपास्य विशिष्टेष्ट देवता युगल स्वरूप मनुस्मरति अङ्केत्या दि अङ्केतुवामे वृषभानुजां मुदा विराजमाना मनुरूप सौभगां। सखी सहस्त्रैः परिसेवितां सदास्मरेम देवीं सकलेष्ट कामदां। ५ अनन्तान वद्य कल्याण गुण गणस्य श्रीकृष्णस्य वामांगे श्रीवृषभानुनन्दनीं वयं स्मरेम इत्यन्वयः कीदृशीं सकलेष्ट कामदां अभीष्ट फलदां देवीद्यो तमानां सखीगणैः सेवन स्थान स्थिताभिः परम यूथेश्वरीभिःश्रीललि ता रंगदेव्यादिभिः सेवितां सर्वतः सेवमानां अतश्चाधिकतर विरा-जमानां अनुरूप सौभगा मिति अनुरूप सौभगं यस्याः तां यश्चोक्तं श्रीभागवते तांरूपणीं श्रियमनन्य गतिं निरीक्ष्यया लीलयाधृततनोरनु रूपरूपाम्। प्रीतः स्मयन्नलककुण्डल निष्ककण्ठम्

भाषाकान्ति प्रकाशिका

उपास्यजोश्रीकृष्णासोई इष्टदेवता तिनके युगलस्वरूपश्रींराधातिनकोनिरंतर स्मरण करैं

हैं समस्तदोष करके रहित अनन्तकल्याणगुण
के समूहजो श्रीकृष्णा तिनकेवांये अंगमें श्रीवृष
भानुनन्दनीतिनको हमस्मरण करैं हैं अर्थात
ध्यान करैंहैं।वेश्रीराधा सकल इष्टमनोर्थकीदाता
हैं और देवी अर्थात प्रकाशमान हैं। सहस्रअर्थात
अपरमित अनगिन्ती सखियों के समूह अपने
अपने सेवाके स्थानमें स्थितिपरमयूथोंकी ईश्वरी
श्रीललिता रंगदेवी आदिक वेचारों ओरसे सेवा
करैं हैंताते अधिकतर विराजमान हैं और श्री
कृष्णाके अनुरूप अर्थात बरावर हैं।सौभाग जिन
को सोई श्रीभगवान तारूपिणी श्री अनन्यगति
को देखके जो लीलाही करके श्रीकृष्णाकेअनु-
रूप रूपधारण करै प्रीति से मुस्क्याती भयी,
अरुकावली मुख पर पडी, कंठमें धुकधु की,
मुखमंदमुस्क्यानको

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

वक्रोल्लसत्स्मित सुधां हरिएव भाषइति अत्रायमाशयः अन
पायिनी भगवता श्रीः साक्षादात्मनो हरेरिति श्रीभागवतोक्तेः श्रियो
नित्या विनाभाव सम्बधः सर्वसम्मतः तत्र श्रियोद्वेरूपे श्रीश्चलक्ष्मी
श्चेति तथाहि श्रुतिः श्रीश्चतेलक्ष्मीश्च पत्न्या वहोरात्रे पार्श्व इति ग-
न्ध द्वारा दुराधर्षा नित्य पुष्टांकरीषिणीं। ईश्वरीं सर्व भूतानांतामि
होपाह्वये श्रिय मिति तत्र याश्रीः सावृषभानोस्त नयायाच लक्ष्मीः सा॰

रुक्मिण्यादि रूपा देवत्वेदे वदेहेयंमानुषत्वे च मानुषी ।. विष्णोर्देहा नुरूपां चकरोत्येवात्मनस्तनु मिति वैष्णवोक्तेः १ यां यां तनुमुपादत्ते भगवान् हरिरीश्वरः । तां तां श्रीरथा वशेन भगवतो न पायिनीति श्रीनारदोक्तेश्च२

भाषाकान्तिप्रकाशिका

सुधासे शोभायमान तिनसे बोले आशय यह है कि भगवती श्रीहरि आत्माकीहैं यह भागवतमें लिख्यो है। श्रीकोहरिको नित्य भावसंबंध सबको सम्मतहै तामें श्रीके दोरूप हैं एक श्री दूसरी लक्ष्मी सोई श्रुतिमेंलिख्यो है। श्री और लक्ष्मी आपकी पत्नी दिनरात आपके निकट विराजैं हैं। गंधके द्वारा कोईसे धर्षण करवेमें न आवैंनित्य पुष्टकरवेवालीसब भूतोंकीईश्वरी ऐसी श्रीको हमबुलावैं हैं तामें जोश्रीं सोव्रषभान को बेटी और जो लक्ष्मी सो श्री रुक्मिण्यादिरूपहै सोई वृहद्वैष्णवमें कह्यो है– जब भगवानदेवता होंय तब वे देवीरूप धारणकरैं और जब कृष्णमनुष्यहोंके अवतार लेय, तब मानुषी होय या प्रकार दिष्णुके देहके अनुरूप आत्माकी मूर्ति करैं और श्रीनारदजीनेकह्यो है, जों जो मूर्तिभगवानहरि ईश्वर गृहण करें श्रीभी भगवानकी अनपायिनी सोई रूप अवश्य करके धारण करैं हैं

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

तत्र श्रीराधिकायाःसर्वस्वरूप श्रेष्ठ्यंश्रुतिः । प्रमाण्यात् तथाहि श्रुतिःराधयासहितोदेवोमाधवे नचराधिका । योनयोर्भेदं पश्यतिसस्सृतेर्मुक्तोन भवतीति । ३ वामांगेसहितादेवी राधा वृन्दावनेश्वरीति कृष्णोपनिषद्दि । ४॥ परमागमचूडामणी श्रीनारद पञ्चरात्रेच । हरेरर्द्ध तनूराधा राधामन्मथसागरा । राधा पद्मारूया पद्मानामगाधातत्र योगिनाम् ॥ ५ ॥ पुनस्तत्रैव । राधया सहितं कृष्णंयः पूजियति नित्यशः । भवेद्भक्तिर्भगवति मुक्तिस्तत्रकरे स्थितेति ॥ ६ ॥ श्रियं विष्णुंच वरदावा शियां प्रभवाउभौ । भक्त्या सम्पूजयेन्नित्यं यदीच्छेत्सर्वं सरद इति ॥ ७ ॥ ब्रह्म वैवर्त्तेच । लक्ष्मीर्वाणीच तत्रैव जनिष्यंतेमहामते । वृषभानेस्तु तनयाराधा श्रीभविता किलेति

भाषा कांति प्रकाशिका

तासे श्रुतिके प्रमाणते श्रीराधाको सबरूप से श्रेष्ठता है सोई श्रुति में कह्यो-श्रीराधा के सहित देव माधव और माधवके सहित राधा विराजमान हैं जो कोई इन दोनोंमें भेद देखैं हैं सो जन्ममरणसे नहिं छुटै।कृष्णोपनिषद में भी राधाबृन्दाबनेश्वरी कृष्णके बाम अंग में विराजैं हैं॥४॥श्रेष्ठ सब आगमों के चूणामणि नारद पञ्चरात्रमेंभी है हरिकी आधे अंगश्रीराधा है राधामनकी मथनकरवेवारी सागर हैं। पद्मा नामकी जो जो लक्ष्मी हैं तिनमें पद्मा नाम

की श्रीराधा योगिनियोंको भी अगाधा हैं ॥५॥
औरभी तहांही लिख्यो है- राधाके सहित कृष्ण
को जो नित्य पूजनकरैं हैं ताकी भगवानमें भक्ति
होय है और मुक्तितौ ताके हाथ में धरी है ॥६॥
श्रीमद्भागवत में श्रीऔर विष्णुये दोनों वर के
दाता और मनोर्थके प्रगटकरवे वाले हैं, जो सब
संपदाकी इच्छा होय तौ भक्तिकरके सम्यक
प्रकार इनकी पूजा करै॥७॥

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

बृहद्गौत्मीयतंत्रेच। देवीकृष्ण मयी प्रोक्ता राधिका परदेवता सर्व लक्ष्मीमयी स्वर्ण कांतिसंमोहनी परा ॥ ९ ॥ ब्रह्मसंहितायां च यःकृष्णःसापिराधा चयाराधा कृष्णएवसः। अनयोरन्तरादर्शी संसाराद्विमुच्यन्त इति ॥ १० ॥ सम्मोहनी तंत्रे। तस्माज्ज्योतिर भूद्द्वेधा राधामाधव रूपकमित्यादि ॥ ११ ॥ अतश्च श्रीराधिकाया एवश्री रूपत्वेन श्रेष्ठत्व मितिसिद्धं इति श्रीमद्धरि व्यासदेववर चतसिद्धांतरत्नाजली पूर्वार्द्धं समाप्त

भाषाकांतिप्रकाशिका

ब्रह्म वैवर्त्त में लिख्यो है हे महामते लक्ष्मी
और वाणी येदोनों तहांही जन्म लेंयगी और
वृषभानकी बेटी जोराधा करके हैंसो निश्चय

श्रीहोंयगी॥८॥वृहद्गोत्मीतंत्रमें देवीश्रीराधिका कृष्णासमान वर्णान करी हैं-सब लक्ष्मीमयी स्वर्णा कांति परासंमोहिनी है॥९॥ब्रह्म-संहितामें जो कृष्णा सोई निश्चय राधा हैं, जो राधा सोई निश्चय कृष्ण हैं इन दोनों में जो अंतर देखै सो संसार से नहीं छुटै ॥१०॥ संमोहनतंत्र में तस्मातकारणात एकज्योति राधामाधवरूप से दो प्रकारकी भयी॥११॥याते श्री राधिका को ही श्रीरूप करके श्रेष्टता सिद्ध भयी

(नोट)—या ग्रन्थ में ८२ पृष्ट की ८वीं पंक्तो से ९१ पृष्ट को १५वीं पंक्तीतक कठिन वेदान्त प्रकरण और ९७ पृष्ट के अन्त की १२ वीं पंक्तो जैसे " अग्निः " यहां से लेके ९९ पृष्ट के भाषा की दूसरो पंक्ति तक पण्डित श्रीगणपतिजीशास्त्री तर्कतोर्थ कृत भाषा है।

श्रीमदाचार्य्य परम्परा

(१) श्रीमद्धंस भगवान्‌जी
(२) श्रीसनकादिक भगवानजी
(३) श्रीनारद भगवान्‌जी
(४) श्रीनिम्बार्क भगवान्‌जी
(५) श्रीश्री निवासा चार्य्यजी
(६) श्रीपुरुषोत्तमा चार्य्यजी
(७) श्रीविश्वा चार्य्यजी
(८) श्रीविलासा चार्य्यजी
(९) श्रीस्वरूपा चार्य्यजी
(१०) श्रीमाधवा चार्य्यजी
(११) श्रीबलभद्रा चार्य्यजी
(१२) श्रीपद्मा चार्य्यजी
(१३) श्रीश्यामा चार्य्यजी
(१४) श्रीगोपाला चार्य्यजी
(१५) श्रीकृपाचार्य्यजी
(१६) श्रीदेवा चार्य्यजी
(१७) श्रीसुन्दर भट्टजी
(१८) श्रीपद्मनाभ भट्टजी
(१९) श्रीउपेन्द्र भट्टजी
(२०) श्रीरामचन्द्र भट्टजी
(२१) श्रीवावन भट्टजी
(२२) श्रीकृष्ण भट्टजी
(२३) श्रीपद्माकर भट्टजी
(२४) श्री श्रवण भट्टजी।
(२५) श्रीभूरि भट्टजी
(२६) श्रीमाधव भट्टजी
(२७) श्रीश्याम भट्टजी
(२८) श्रीगोपाल भट्टजी
(२९) श्रीबलभद्र भट्टजी
(३०) श्रीगोपीनाथ भट्टजी
(३१) श्रीकेशव भट्टजी
(३२) श्रीगांगल भट्टजी
(३३) श्रीकेशवकाश्मीरीभट्टजी
(३४) श्री श्रीभट्टजी
(३५) श्रीहरिव्यास देवजी
(३६) श्रीस्वयंभूराम देवजी
(३७) श्रीकर्णहरदेवजी
(३८) श्रीनारायण देवजी
(३९) श्रीहरिदेवजी
(४०) श्रीश्याम दामोदरजी
(४१) श्रीश्रुतदेवजी
(४२) श्रीसहजराम देवजी
(४३) श्रीवृन्दावन देवजी
(४४) श्रीराम देवजी
(४५) श्रीधर्मदेवजी
(४६) श्रीसेवादासजी
(४७) श्री गोपाल दासजी
(४८) श्रीहंसदास जी

❀सिद्धान्तरत्नाञ्जलि संस्कृत का शुद्धि अशुद्धि पत्र❀

अंकपृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७	६	दानत्र	दानव
९	६	उपरत्नः	उपरतः
१२	६		सुपा
१६	८	न्यादि	क्रियादि
१७	१	शु	शुद्ध
१७	७	वं	जीवं
१८	५	वि	र्वि
२०	४	कर्म	कर्म
२२	४	यो	त्यो
२३	१	मकुण	मत्कुण
२४	५	व्यात्त्या	व्याप्त्या
२४	७	द्य	द्यु
२७	४	पपत्या	उपपत्या
२६	६	काम	काय
२६	७	पेक्य	पैक्या
३२	४	स्वाशं	स्वाप्शं
३२	७	मथहं	मप्यहं
३४	१	शिष्टो	विशिष्टो
३८	४	आत्म	आत्मा
३६	३	मुत्याद्य	मुत्पाद्य
४०	३	त्वादे	त्यवादे
४१	६	भुक्तं	मुक्तं
४३	३	चेन्म	चेन्त
५२	६	मीत्य	मोप्य
५२	९	श्रीत्म	श्रील
५५	५	वैष्वा	वैष्णवा
५५	५	इनि	इति

अंकपृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६४	५	श्याहं	श्चाहं
६५	७	णि	पाणि
६७	३	उत्पत्तिक्रम	उत्पत्तिक्रम
७४	१	स्रोतोतो	श्रोतो
७६	१	व्यक्यो	व्यक्त्यो
८५	५	वेदेवि	वेदेपि
८७	८	अध्यस्त	अध्यस्ता
९१	२	सामाग्या	समिग्या
९२	२	अतश्व	अतश्च
९३	२	सर्वे	सर्वे
९६	२	प्राप्नया	प्राप्नुया
१००	३	मेककमेव	मेकमेव
१०१	५	वस्तु	वस्तु
”	६	णोय	णोन्य
१०४	१	करणां	करणं
”	७	निष्फलां	निष्कलां
१०४	९	पाश्ये	पाप्मा
१०५	६	आर्णत्य	आनंत्य
१०९	८	भ्रांत	भ्रांति
११०	३	प्रभ्युव	प्रभ्युप
११०	६	क्षुत	क्षत
१११	१	विपिनां	न्वियिनां
”	४	व्यत्यत्या	व्युत्पत्या
”	७	म्मिर्थे	स्मिन्नर्थे
११३	१	पणां	पण
”	४	त्वंमि	त्वमि
”	५	निर्विशेषु	निर्विशेषेषु
११४	६	व्रया	व्रत्या
११५	८	हवनयादि	हवनीयादि
११६	१	द्वेधा	दुद्वेधा
”	५	जघन्यादि	जघन्यापि
११६	६	विधव	विधत्व

अंकपृष्ट	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२५	२	गे	गो
”	७	ादि	वादि
”	८	थापक	स्थापक
”	६	येह	यथेह
”	१०	यत्व	व्यत्व
१३९	२	ममर्थ्यात	समर्थ्यात
१४०	७	यंमी	यांमी
”	८	रव	एव
१४८	१	षाद	पाद
१५०	१	नेज्ञा	तेज्ञा
१५१	५	ऑकर	ओंकार
”	८	प्रत्रन्ते	प्रवर्तते
१५२	२	अमिलाप	अभिलाप
२०६	४	वद्यं	वन्द्य
२१२	२	अन्त	अनंत
२१३	७	जानत्य	ज्ञानात्य
२१७	३	उच्या	उच्चा
”	७	लोक	लोकं
”	७	द्वष्ट्वा	दृष्ट्वा
२१८	६	वरूपा	स्वरूपा
”	५	शः	शुः
२२०	६	नियत्वं	नित्यत्त्वं
२२४	१	त्वच	त्वंच
२२७	१	वक्रो	वत्को
२२८	४	केदो	दोके
२२६	८	सपद	संपद
२३०	२	सहिताय	संहितायां
”	४	तत्रे	तत्रे
”	”	द्वेधा	दुद्वेधा
”	६	वरचत	विरचित

❀ भाषा की शुद्धि अशुद्धि का पत्र ❀

अंकपृष्ट	पांक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२१	१०	मवो	सर्वो
२३	१५	पृथ्वी	पृथ्वी
२६	१३	अप्रोप्ति	अप्राप्तिता
३०	१६	अतः	अंतः
४३	१	भनवान्	भगवान्
५४	८	आसाधारण	असाधारण
„	१४	भृगु	भृगु
६४	१०		उत्पन्न
„	११		अहंकार
६४	३	पेमो	ऐसो
			सो तामें स्वार्थ को त्याग
६	२	परार्थ की कल्पना प्राप्तिकी वाधा बहुत दोष हैं	
१०१	८	परिमाण	परिणाम
१०४	८	रचेतो	रचतो
१०६	९	ब्रह्म	ब्रह्म
१२३	७	जत्स्वा	जहत्स्वा
१२५	३	है हो	है ही
१३५	५	माधुर्य्य	माधुर्य्य
„	७	सांगर	सागर
१३६	६	लीलावतार के आगे पुरुषावतार	
१४४	३	लेन	लेनो
१५१	८	स्वरान्त के आदिवरणटी	
१५४	१६	रासे	ऐसे
१५६	५	तम	तुम
	१	को	के
	१३	मये	भये
	२	वतां	वर्तो
	४	भागत	भागवत
	१	दखत	देखते

अंकपृष्ट	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१७४	१६	एकदश	एकादश
१८४	६	मे	में
१६६	११	नारो	नारी
१६८	६	रमे	रामे
२०१	९	पामल	यामल
,,	१२	क्रेध	क्रोध
२१२	६	श्रेष्टो	श्रेष्ठों
२२६	२	सत्यका	सत्यकाम
२२८	७	गंव	गंध
२३२	१	योगिनयों	योगियों

परम्परामें पहिले नं०६ श्रीविश्वाचार्य पीछे ७ में श्री पुरुषोत्तमाचार्य

❀ टिप्पनी की शुद्धा अशुद्धी का पत्र ❀

अंकपृष्ट	नम्बर श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
५७		यद्ग	यद्गग
,,		निवर्तते	निवर्तते
१६०	३	तत्वाया	तत्त्वायां
१६३	१	सुखायो	सुखापो
१६४	१	चा	च
,,	२	त्यक्तावा	त्यक्त्
१६५	२	कल्यां	कल्पां
१७१	१	लक्ष्यं	लक्ष्मं
१७८	२	मज्झिता	मनुज्झिता
१८४	२	दैत्य	दैत्यं
,,	,,	हल	हलं
१८७	१	वक्रो	वतूको
,,	२	अर्चितनो	अचिततनो
१८८	१	रताया	यताया
१८६	३	दशमतां	दुशमतां

अंकपृष्ट	नम्बर श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
१६३	८	पुगयद	युगपद
,,	३	प्रं ष्टा	प्रं ष्टां
१६७	१	पृकारी	प्द्रकारी
,,	२	पद्यपि	यद्यपि
		कादृशो	कीदृशो
१६८	१	शस	शंस
२००	१	शृडवला	शृंऽखल
२०१	२	तद्रा	तंद्रा
२०२	२	विम	विभ्रम
२०२	२	ग्रहस्त	ग्रस्त
२०४	४	तिमि	मति
२०७	१	दद	देह
२२३	३	विष्ट	लिष्द
२२२	१	दशिनः	दशिनः
,,	३	ग्राह्य	ग्राह्यं

* इति श्रीं शुद्धाशुद्धि पत्र-समाप्त *

इति श्री मद्धरि व्यास देव सिद्धान्त रत्नाजलि की भाषा दासानुदास हंसदास कृत समाप्त ।